विज्ञापनपत्र ॥

विचित्रचरित्र ॥

तयारहै ! तयारहै ! तयारहै ! अबयह अपूर्वकथा विचित्रचरित्र नामी तयारहै इसपुस्तकमें १४४७ सफेहैं औरआदि से अन्ततक प्रेम-बीर-शृंगार और करुणाआदि अनेकरसोंसेभरेहुए नानाप्रकारके छन्द आख्यानोंसे पूर्ण है मुख्य आशय इसपुस्तकका यह है कि इसभरतखण्ड में एकसमय ऐसा होगया है कि उससमय में सर्वत्र म्लेच्छोंकाराज्य होगयाथा और वहम्लेच्छ ऐसे मायावी थे कि दूसरी पृथ्वी दूसरा आकाश दूसरा सूर्य और दूसरा चन्द्रमा मायाबलसे बना देते थे और अपनेको ईश्वर समझते थे और संसारी मनुष्यभी उनको अपनाईश्वरसृष्टिकर्त्ता जानकर उनकी पूजा और उपासना ईश्वरके समान करतेथे निदान ऐसाहोगया था कि उससमयमें संपूर्ण वेदमार्ग संसारसे उठ गयेथे और जो सृष्टिकर्त्ता परमेश्वरहै उसका कोई नामभी नहीं जानताथा ऐसा कठिनसमय प्राप्तहोनेपरउससमयके महात्माओं ने सच्चिदानन्द ईश्वर से उन म्लेच्छों के नाश होनेकी प्रार्थनाकी और उसके अनुसार एकशत्रुंजयनामी बड़ाहरिभक्त राजा उत्पन्नहुआ और उसने सहस्रों वर्ष युद्धकरके सब पृथ्वी के मायावी म्लेच्छों का नाशकरके सन्मार्गको स्थापितकिया यहतो इस पुस्तकका तात्पर्याशय है और इसके अन्तर्गत जो कथा वर्णित हैं वह यह हैं १ मायासे रचेहुए सहस्रोंदेश और पर्वतोंकावर्णन२सहस्रों मायाकृत बन बाग उपवन और बाटिकाओंकीशोभाका कथन ३ मायाकृत असंख्य दुर्गप्रासाद मन्दिर नगर ग्राम और सभाओं की अद्भुत सुन्दरताका आख्यान ४मायाकृत लाखों नदी सरोवर और समुद्रों की शोभाकी कथा ५ सहस्रों मायावीम्लेच्छ और म्लेच्छियोंके मायाकृत स्वरूप और सामर्थ्य का निरूपण ६ शतशः मायाकृत युद्धहोनेकी कथा ७ नानाप्रकार के मायाकृत अस्त्र शस्त्रोंका वर्णन ८ सहस्रों स्त्री और पुरुषोंकी नखशिखशोभा और शृंगार

सिद्धान्तप्रकाश ॥

यदज्ञानाज्जगज्जातं यद्विज्ञानाद्विलीयते ॥ तंनौमि जगदाधारं वासुदेवाख्यमव्ययम् १ यदविद्याकटाक्षेणजगतांप्रलयोदयौ ॥ तद्ब्रह्माहमितिज्ञात्वासर्वबन्धात्प्रमुच्यते २ विश्वेशंशंकरंवंदेढुण्ढिराजंतथैवच ॥ व्यासंश्रीशंकराचार्यंश्रीगुरुंनानकंतथा ३ श्रीमच्छ्रीरामदासाख्यान् गुरूणांपरमान्गुरून् ॥ नमाम्यहंभृशंभक्त्याभवसागरपारगान् ४ शरणागतमुद्धर्तुंक्षमान्संसारसागरात् ॥ श्रीयुतान्हंसदासाख्यान्गुरूणाञ्चगुरून्नुमः ५ मुमुक्षूणां हितार्थायतत्त्वज्ञानार्थसिद्धये ॥ सिद्धांतानांप्रकाशाख्यमधुनातन्यतेमया ६ ॥

दो० अविगतअविनाशीअजितअलखअनादिअरूप ।
तामेंअनउपज्योजगत भासिरह्योभ्रमकूप १ ॥
रज्जुमाहिं ज्यों अहिभयो अकथनीयत्रयकाल ।
त्यों आतम आधारमें देहादिक जगजाल २ ॥
अधिष्ठान जाने विना भ्रमविलास दरशान ।

अपने में आपहि लखे द्वैत समूल बिलात ३ ॥
सोवत स्वप्न अनेक विधि अपने में निजरूप।
उपजत दरशत होत लय जागतही भ्रम कूप ४ ॥
जो सुख व्यापक एक रस नहिं जामें कछु भेद।
सोई परमानंद है निर्विकार निर्वेद ५ ॥
पूरण ब्रह्म पुराण अज अस्ति भाति प्रिय रूप।
परमानंद अनाम सो परम हंस तद्रूप ६ ॥
वेद अर्थ उपदेशकर हरण सकल दुख द्वंद।
श्री सिद्धांत प्रकाश यह विरचत परमानंद ७ ॥
अज्ञानी जगमें कहैं अधिकारी नहिं कोय।
तिनका यह संसार दुख कबहुं न दूरी होय ८ ॥
सुखकी इच्छा सब करै दुखकी करै न कोय।
तातै अधिकारी सबै पढ़ै सुनै नर जोय ९ ॥
गुरू शिष्य संवाद कर करूं ग्रंथ विस्तार।
जेहि अवलोकिन असकरै अरु होवै विस्तार १० ॥

चौपाई ॥

प्रथमहिंप्रश्नशिष्यहीकरिये।पुनिउत्तरगुरुकोउरधरिये॥
विषयसंबंधऔर अधिकारी। मिलप्रयोजन होवैचारी ॥
यहअनुबंधचतुष्टयकहिये।सोइसमयनाहिंदेखतअहिये॥
बिन अनुबंध चतुष्टयग्रंथा। प्रवृतहोययहक्योंकरपंथा॥
तजै सुधीजन लोकमहाना। जानिकैवृथाकल्पनाठाना॥

(प्रश्न) इसमें विषय प्रयोजनादिकों का अभाव होने से यह ग्रंथ आरंभ करने के योग्य नहींहै सो दिखाते हैं यदि ब्रह्म वेदांत शास्त्र से विनाही प्रमाणांतर करके अर्थात् प्रत्यक्षादि प्रमाणों करके ज्ञातहैतौभी इस

ग्रंथ का विषय नहीं होसक्ता क्योंकि जो जिसकरके ज्ञात अर्थात् जानाजाताहै सो तिसीका विषयहोताहै जैसे चक्षुरादि इन्द्रियों करके रूपादिक जानेजातेहैं सो चक्षुरादिकोंके विषयकहेजातेहैं तैसे ब्रह्मभी यदि प्रमाणांतर करके ज्ञातहै तब फिर तिसी प्रमाणांतरका विषयहोगा और यदि कहो प्रमाणांतरकरके ब्रह्मज्ञातनहींहै तब फिर गगनपुष्पकी नाईं शास्त्रभी तिसके प्रतिपादन करनेको अशक्यहै जैसे गगनपुष्प किसी प्रमाणांतरकरके ज्ञात नहींहै तबशास्त्र तिसका प्रतिपादननहीं करसकेगा तैसे ब्रह्मभी किसी प्रमाणांतर करके ज्ञातनहीं है तिसकाभी शास्त्र प्रतिपादन नहीं करसकेगा क्योंकि जो कदाचिदपि बुद्धिमें आरूढ होनेको अशक्यहै तिसकोपरके प्रति कैसे शास्त्र प्रतिपादन करेगा किंतु नहीं करेगा यदि शास्त्र प्रतिपाद्य ब्रह्मनभया तब शास्त्रका विषयभी न भया और शास्त्रका ब्रह्मके साथ संबंध भी न बना क्योंकि जो जिस करकेजानाजाताहै तिसका तिसीके साथ संबंधहोताहै जैसे व्याकरणशास्त्रकरके शब्दकीशुद्धिअशुद्धिजानीजाती है तिसव्याकरणकेसाथ तिसशब्दका संबंधबनताहै और यदि कहो वेदांतशास्त्रकरके ब्रह्मजानाजाता है सो नहीं बनता क्योंकि तिसब्रह्मको अप्रसिद्धहोनेसे तिसका प्रतिपादन नहीं होसक्ता जब प्रतिपादन न बना तब तिसके साथ शास्त्रका संबंध कैसे बनेगा और जब कि विषय संबंधका अभाव भया तब प्रयोजनका अभाव अर्थसेही सिद्धभया तब फिर विषय आदिकों के अभाव होनेसे सुधी पुरुषकी इसग्रंथमें प्रवृत्तिभी नहींहोगी प्रवृत्तिके

अभाव होनेसे ग्रंथ रचनाभी निष्फल होगी (उत्तर) दो० ब्रह्महोय परसिद्ध यदि अप्रसिद्धपुनिहोय॥ तब शंका तुम्हरीबनै जो तुमभाषो सोय॥ चौ०॥ ब्रह्मशब्दप्रसिद्धजग माहीं॥ ताको अर्थ कहीं तुमपाहीं॥ वृहत अर्थका वाचकजोई॥ तेहितेको ब्रह्मकहैं सब कोई॥ सोइ ब्रह्म है आपहि आपै। माया भ्रम कछु नाहिंन जापै॥ होप्रतिपाद्य शास्त्रकरजोई। विषयसंबन्ध बनै तेहिकोई॥ यह शंका तुम्हारी तब बने यदि ब्रह्मकी अत्यंत करके प्रसिद्धि या अप्रसिद्धि होवैसो तो नहींहै अत्यंत करके प्रसिद्धि नहींहै जोकि प्रमाणों करके अप्रसिद्धहै और प्रत्यक्षादि प्रमाणोंका विषय भी नहींहै और अत्यंतकरके अप्रसिद्धिभी नहींहै जोकि ब्रह्म आदि शब्दों सेही लोक में ब्रह्मकी प्रसिद्धिहै और ब्रह्म शब्द जिस वृहत्पदार्थका वाचक अर्थात् महान्पदार्थ में वर्त्तमान होकर देश कालवस्तु परिच्छेद से रहित जिसवस्तु का बोधनकरता है सोई ब्रह्मपदार्थ है और लोकमेंभी अहंशब्द करके प्रत्यगात्मा की प्रसिद्धि है और तिस प्रत्यगात्मा की परमार्थता से ब्रह्मरूपता भी है और जो वस्तु पद से लोक से प्रसिद्धहोवै वह प्रमाणों करके प्रसिद्ध नहीं होवे क्योंकि पदतो केवल अर्थका स्मारकहोताहै और शास्त्र ब्रह्मपदको द्वारकरके ब्रह्मकाबोधकहै इसलिये शास्त्रब्रह्मके प्रतिपादनकरनेको अशक्यनहींहै और लौकिकप्रमाणब्रह्मकीप्रसिद्धिमें स्वीकारनहीं कीजातीहै इनपूर्वोक्त युक्तियों से ब्रह्मको शास्त्र विषयत्व सिद्धहोनेसे संबंधभी बनजावेगा विषय संबंध के सिद्धहोने से प्रयोजन अधिकारी अर्थसेही बनजावेंगे

और विषय प्रयोजन के अभावकी शंकाभी नहींबनती क्योंकि प्रथम श्लोककरकेही विषय प्रयोजनसूचन कर दियेहैं सोदिखातेहैं अज्ञातहुआ ब्रह्मइसशास्त्रकाविषयहै और ज्ञातहुआ प्रयोजनहै और ज्ञानकी प्राप्तिकी इच्छा वाला अधिकारी है और प्रतिपाद्य प्रतिपादक भावसंबंधहै जो प्रतिपादन कियाजावे तिसको विषय कहते हैं सो इस ग्रंथ में जीव ब्रह्मकी ऐक्यताकाप्रतिपादन कियाजाताहै सोई इस ग्रंथका विषयहै वह ऐक्यता श्रुतियों करके प्रतिपाद्य है (तत्वमेवत्वमेवतत्) सो ब्रह्मतुम्हींहो और तुम्हींसो ब्रह्महो ब्रह्मतंपरादाद्योऽन्यत्रात्मनोवेद क्षत्रंतंपरादाद्योऽन्यत्रात्मनोक्षत्रंवेदसर्वं तंपरादाद्योऽन्यत्रात्मनोसर्ववेद) ब्राह्मणत्वजाति तिसब्राह्मण का तिरस्कार करती है जो अपने से भिन्न ब्रह्म को जानता है और क्षत्रत्व जाति तिस क्षत्री का तिरस्कार करती है जो क्षत्री अपने से भिन्न ब्रह्मको जानता है और सम्पूर्ण भूतप्राणी भी तिसका तिरस्कार करते हैं जो अपने से भिन्न ब्रह्मको जानते हैं इत्यादि अनेक श्रुति वाक्य जीव ब्रह्मकी ऐक्यता में प्रमाण हैं अब प्रयोजनको दिखाते हैं अज्ञानरूपी कारणकेसहित जन्ममरणरूपी दुःखकी निवृत्तिहोकर परमानंदकीप्राप्ति होजानी सोई इस ग्रंथका प्रयोजनहै सो भी श्रुतियोंकरके प्रतिपाद्यहै (ब्रह्मविद्ब्रह्मैवभवतितरतिशोकमात्मवित्) ब्रह्मवित् अर्थात् ब्रह्मज्ञानी ब्रह्मरूपही होता है और आत्मवित् संसाररूपी शोकसे तरजाताहै अर्थात् जन्म मरणादि दुःखसे रहित होजाताहै अब अधिकारी

और फलके संबंधको दिखाते हैं अधिकारी और फल का प्राप्य प्रापक भाव सम्बन्धहै फलप्राप्यहै अधिकारी प्रापक है जो वस्तु प्राप्तहोवै तिसको प्राप्यकहतेहैं और जिसको प्राप्तहोवै तिसको प्रापक कहते हैं और ग्रंथका विषयके साथ प्रतिपाद्य प्रतिपादक भाव संबंधहै ग्रन्थ प्रतिपादकहै और विषय प्रतिपाद्य है जो प्रतिपादनकरै तिसको प्रतिपादक कहते हैं और जिसका प्रतिपादनकरै तिसको प्रतिपाद्य कहतेहैं अब अधिकारी का निरूपण करते हैं दो० सहितविवेकविरागके षटसम्पद जबहोय। चउथिमुमुच्छा सहितपुनि कहैंअधिकारीसोय १ विवेक १ वैराग्य २ समाधिषट्सम्पत्ति ३ मुमुच्छा ४ इन चार साधनों करके युक्त शुद्ध अंतःकरणवाले का इस वेदांत शास्त्रके श्रवणमें अधिकार है और तिसीको अधिकारी कहा है और अन्तःकरणकी शुद्धिके बिना विवेकादिक उत्पन्न होतेनहीं इसलिये प्रथम अंतःकरणकी शुद्धिके साधनोंका संपादन करना उचितहै (प्रश्न) कीचकरके लिपटेहुये वस्त्रकी जिसप्रकार जलकरके धोने से शुद्धि होती है तिसीप्रकार रागादि मलकरके मलीन अंतःक-रणकी शुद्धि नहीं बनती क्योंकि अंतःकरण देहके अं-तरहै और सूक्ष्म है तब फिर अंतःकरणकी शुद्धि कौन हेतुवों करके होगी और अंतःकरण की शुद्धिके बिना अंतःकरण में विवेकादिकों की उत्पत्तिकी संभावनामात्र भी नहीं होसक्ती जैसे कीचकरके लिपटेहुये वस्त्रमें नील पीतादि रूपोंकी संभावना नहींहोसक्ती है और विवेका-दिकों के न होनेसे तत्वज्ञान कैसेहोगा और तत्वज्ञानके

न होनेसे वेदोक्त साधन भी सर्व व्यर्थही होजावेंगे और याज्ञवल्क्य ने भी कहाहै (मलिनोहियथादर्शोरूपाऽलोकस्यनक्षमः॥तथाऽविपक्वकरणआत्मज्ञानस्यनक्षमः १) जैसे मलिन जो दर्पणहै सो रूपके दर्शनमें अर्थात् मुख के दिखाने में समर्थ नहीं होसक्ताहै तिसीप्रकार अशुद्ध अंतःकरण भी आत्मज्ञान के लिये समर्थ नहीं होसक्ता इस स्मृति प्रमाणसेभी अंतःकरणकी शुद्धिसे बिना ज्ञानकाभी अभाव सिद्धहोताहै इसवास्ते अंतःकरणकी शुद्धि के साधनोंको प्रथम कहना चाहिये(उत्तर)अंतःकरणकी शुद्धिकेहेतु जोकि वेद संमतहै तिनको सुनो जिस हेतुसे पुरुषों के जो पापहैं सो अन्नकाही आश्रयणकरके स्थित होतेहैं तिसीहेतुसे दुष्ट अन्नोंका भक्षणजोहै सो अन्तःकरणकी अशुद्धिका हेतुहै और तिसका त्याग जोहै सो अंतःकरणकी शुद्धिका कारणहै इसलिये अंतःकरणकी शुद्धिका अर्थी जो पुरुष सो दुष्टान्नके भक्षणका त्याग करदेवे और यद्यपि दुष्टअन्नोंका विचारधर्मशास्त्र महाभारतादिकों में बहुतसा कियाहै तथापि यत्किञ्चित् इस ग्रंथमें भी लिखतेहैं पराशरस्मृतिः (अन्नदोषेणचित्तस्य कालुष्यंसर्वदाभवेत् ॥कलुषाकृष्टचित्तानांधर्मःसम्यङ्न भासते २) अन्नके दोषकरके पुरुषों के चित्त सर्वदा मलिनही बनेरहतेहैं मलिनताकरके युक्तहैं चित्तजिनके तिनको धर्मका विचार भी सम्यक् नहीं भासता है मनुः (राजातेजआदत्तेशूद्रान्नंब्रह्मवर्चसम्॥आयुर्हिरण्यकारान्नंयशश्चर्मावकर्तिनः ३) राजाका अन्न जो है सो लौकिक तेजको नाशकरताहै और शूद्रका अन्नब्रह्मतेजको

दूर करता है और सुनारका अन्न आयुको हरताहै ३ और चर्मकारका अन्न यशको नाश करताहै (कारुका-न्नंप्रजांहंतिबलंनिर्णेजकस्यच ॥ गणान्नंगणिकान्नंचलोकेभ्यःपरिकृन्तति४) कारुक नाम चटाई बनानेवालेका है तिसका जो अन्नहै सो प्रजाजो संतति तिसका नाश करताहै और निर्णेजकनाम धोबीकाहै तिसका जो अन्न है सो बलका नाशकरताहै और गणान्न नाम ज्योतिषी पण्डित का है तिसका और वेश्याका अन्न ये दोनों उत्तमलोक की प्राप्तिको नाश करते हैं ४ (दशसूनासमंच-क्रंदशचक्रसमोध्वजः॥दशध्वजसमोवेश्यादशवेश्यासमो नृपः५) दश कसाई के सदृश दोषवाला एक कुम्हारका अन्नहै जोकि मट्टी के वर्त्तन बनाताहै और दश कुम्हार के तुल्य दोषवाला एक कलालका अन्न है जोकि मदिरा बेचताहै और दश कलालके तुल्य दोषवाला एक वेश्या का अन्नहै और दशवेश्याके तुल्य दोषवाला राजाका अन्नहै५ (दशसूनासहस्राणियोवैवहतिसौनिकः॥ तेनतुल्यः स्मृतोराजाघोरस्तस्यप्रतिग्रहः ६) सौनिकनाम कसाई का है तिस कसाईको दश हजार जीवहिंसा का जितना पाप होताहै तिसके सदृश राजाको भी पापहोताहै इसलिये राजाकी प्रतिग्रहभी महाघोरहै कदाचित्‌भी राजा का अन्न ग्रहण न करे ६ (योराज्ञःप्रतिगृह्णातिलुब्धस्यो च्छास्त्रवर्तिनः॥सपर्यायेणयातीमान्नरकानेकविंशतिम्‌ ७) जो राजा अतिलोभी है और शास्त्र विधिको त्यागकर चलता है तिसके प्रतिग्रहको जो पुरुष ग्रहण करता है सो क्रमसे एकविंशति २१ नरकोंको भोगताहै७ (भारते

दीक्षितस्यकदर्य्यस्यक्रतुविक्रयिकस्यच ॥ तक्ष्णश्चर्मावकर्तुश्चपुंश्चल्यारजकस्यच ८ वामहस्ताहृतंचान्नं भुक्तं पर्युषितंचयत् सुरानुगतमुच्छिष्टमभोज्यंशेषितंचयत् ९) जिसको यज्ञकरनेकी दीक्षादीगई है तिसकानामदीक्षित है तिसका अन्न और कृपणका अन्न और जो क्रतुको बेचनेवालाहै क्रतुनाम यज्ञकाहै तिसकाअन्न और बढ़ई चमार व्यभिचारिणीस्त्री धोबी इनसबके अन्नोंको भक्षण न करे ८ और बामहाथ से जो अन्नको ग्रहणकरके देता है और जो भोजनका शेष बचाहै और जो दुर्गंधिकरके युक्तहै अर्थात् बासी है और जिसमें मदिराका सम्बन्ध होगयाहै और जो जूँठाहै और जो अभक्ष्यहै और जो रसोईगृहमें भोजनोत्तर शेषबचाहै इन सम्पूर्ण अन्नोंका मुमुक्षु त्यागकरदेवै ९ (प्रश्न) जिसनगरमें ब्राह्मण भी हैं और शूद्र भी हैं परंतु ब्राह्मण जो हैं सो तो श्रद्धासे अन्नको नहीं देतेहैं किन्तु तिरस्कार से देतेहैं और शूद्र जो हैं सो अत्यंत श्रद्धासे देतेहैं वहां पर किसका अन्न ग्रहण करना उचितहै और किसका त्यागने योग्यहै (उत्तर) वहांपर शूद्रका अन्न ग्रहणकरना उचितहै भिक्षुक को और ब्राह्मणका त्यागकरना उचित है इसमें अत्रिस्मृति प्रमाणहै (श्रोत्रियान्नंनभिक्षेतश्रद्धाभक्तिवहिष्कृतं व्रातस्यापिगृहेभिक्षेच्छ्रद्धाभक्तिपुरस्कृतम् १०) श्रद्धासे हीन चतुरवेदी ब्राह्मणकाभी अन्न स्वीकार न करे और संस्कारसेहीनशूद्रकाभी अन्न श्रद्धाभक्तिकरकेदियाहुआ ग्रहणकरलेवै और आपतकालमें प्राणोंकी रक्षाके लिये सबकिसीके अन्न खानेमेंभी कोईदोषनहीं है मनुः (जीवि

ताऽत्ययमापन्नोयोऽन्नमत्तियतस्ततः आकाशमिवपङ्केन
नसपापेनलिप्यते ११) यदि अन्नकेबिना जीवन नाशको
प्राप्तहोताहो तब जिसकिसीके अन्नभक्षणकरनेमेंभीदोष
से लिपायमान नहींहोता ११ जैसेदुष्टअन्नोंका त्यागऔर
अदुष्ट अन्नों काग्रहणअंतःकरणकीशुद्धिका हेतु है तैसे
फलकी इच्छासे रहित होकर अपने अपने वर्णाश्रम
के योग्य कर्मोंका अनुष्ठान भी अंतःकरणकी शुद्धि का
हेतु है सो भगवान्ने भी गीतामें अर्जुनके प्रति कहा है
(कर्मणैवहिसंसिद्धिमास्थिताजनकादयः) कर्मोंकरकेही
जनकादिक संसिद्धि जो ज्ञान तिस को प्राप्त होतेभये
और तिसीप्रकार विधिपूर्वक वेदांत शास्त्रका श्रद्धापूर्वक
नित्य श्रवण भी अंतःकरणकी शुद्धिका हेतुहै (आसु-
प्तेरामृतेकालंनयेद्वेदांतचिंतया दद्यान्नावसरंकिंचित्कामा
दीनांमनागपि १२ दिनेदिनेवेदांतश्रवणाद्भक्तिसंयुताग्गु
रुशुश्रूषया लब्धात्कृच्छ्राशीतिफलंलभेत् १३) जाग्रत
से लेकर सुषुप्ति पर्यंत और जन्मसे लेकर मरण पर्यंत
वेदांतकाही चिंतन करके कालको व्यतीतकरै और किं-
चिदपि कामादिकों को अवसर न देवै १२ और जो पु-
रुष भक्तिपूर्वक प्रतिदिन वेदांत का श्रवण करता है
गुरु मुखद्वारा वह असी कृच्छ्रचांद्रायण व्रतके फलको
प्राप्त होताहै १३ और इसी प्रकार सत्य भाषणको भी
अंतःकरणकी शुद्धि हेतुताहै भारत (सत्यमेवव्रतंयस्य
दयादीनेषुसर्वदा कामक्रोधौवशेयस्यतेनलोकत्रयंजितं
१४) सत्य भाषणही है व्रत जिसका और दीनों पर
सदैव जिसकी दया बनीरहतीहै और काम क्रोधादिकहैं

वशवर्त्ती जिसके तिस पुरुषने तीनोंलोकों को जय कर-
लियाहै (अश्वमेधसहस्रंचसत्यंचतुल्याधृतं अश्वमेध-
सहस्राद्धिसत्यमेकंविशिष्यते १६) एक समयमें ब्रह्मा
जीने सत्यको और एकसहस्र अश्वमेध यज्ञके फलको
अर्थात् दोनोंको तराजूपर धरके तोला तब दोनोंमें से
सत्य भाषण काही फल अधिक निकला और श्रु-
तियोंमें भी सत्यभाषणको महत् कहाहै तैत्तरेय उपनि-
षद् (सत्यंचस्वाध्यायप्रवचनेच) गुरुशिष्यको उप-
देश करताहै सत्यभाषण करना और वेदका अध्ययन
करनाही परमधर्म है (सत्यंवदधर्मंचर) सत्यहीबोलना
और धर्मका आचरण करना (सत्यमितिसत्यवाचार
थीत्तरः) सत्यही अनुष्ठानकरने के योग्य है सत्यप्रति-
ज्ञावाले रथीत्तर आचार्य्य ऐसा कहते हैं मुंडक (सत्ये-
नलभ्यस्तपसाह्येषआत्मा) सत्यभाषण करनेसेही यह
आत्म लाभ होताहै (सत्यमेवजयतेनानृतंसत्येनपथ्या
विततोदेवयानः) सत्य भाषण करनेवालाही पुरुषइस
लोकको जयकरता है और सत्यभाषणसेही ब्रह्मलोक
की प्राप्तिका मार्ग मिलता है प्रश्नोपनिषद् (येषुसत्यं
प्रतिष्ठंतेषामसौविरजोब्रह्मलोकोनयेषु जिह्ममनृतंमाया
चेति) जिन पुरुषों में सत्यस्थित है तिनको शुद्ध ब्रह्म
लोककी प्राप्ति होती है जिनमें कपट मिथ्या भाषण छ-
लादिक नहीं है (सत्यंब्रह्म) सत्यरूप ब्रह्म है अर्थात्
सत्यभाषण करनेवाला ब्रह्मरूपही है इत्यादि अनेक
श्रुतियों में सत्यका महत्व निरूपण कियाहै और योग
के अंगोंका अनुष्ठान भी अंतःकरणकी शुद्धिका हेतु है

सो योग सूत्रों करके दिखाते हैं सूत्रं (यमनियमासन प्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधयोऽष्टावंगानि १) यम नियम आसन प्राणायाम प्रत्याहार धारणाध्यान समाधिये आठयोगकेअंगहैं आठोंमेंसे प्रथमयमका स्वरूप दिखातेहैं (अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचार्य्याऽपरिग्रहा यमाः २) अहिंसा सत्यं अस्तेय ब्रह्मचर्य अपरिग्रह ये पांच यम हैं और किसी जीवमात्रकी हिंसा न करनी इसी का नाम अहिंसा है और मन वाणी करके यथार्थ चिंतन करना इसीका नाम सत्यहै और किसीके धनके न चुरानेका नाम अस्तेयहै और वीर्यके स्तंभन का नाम ब्रह्मचर्य्य है और शरीरके निर्वाहसे अधिक का ग्रहण न करनेकानाम अपरिग्रहहै शौच सन्तोष तपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानयेपांचनियमहैं तिनमें से शौचदो प्रकारकाहै एकवाह्य दूसराअंतर औरमृत्तिकाजलादिकों करकेशरीरकी शुद्धिकानाम वाह्यशौचहै और मैत्री करुणादिकोंकरके चित्तके मल जो रागादि तिनके दूर होने का नाम अंतरशौचहै संतोषनाम तुष्टिकाहै चान्द्रायण व्रतोंकानामतपहैप्रणवपूर्वक मंत्रोंके जपकानामस्वाध्यायहैफलाकांक्षासे रहित होकर संपूर्णकर्मोंका ईश्वरमेंसमर्पण करदेनेका नाम ईश्वर प्रणिधानहै स्वस्तिकासन पद्मासन आदिक आसन हैं और प्राण अपान वायु की गतिका विच्छेद होना अर्थात् प्राण अपानकी क्रिया के रोकने का नामही प्राणायाम है और रूपादि विषयों के साथ संबंधको त्याग कर इंद्रियोंका अपने स्वरूप में स्थिर होजाने का नाम प्रत्याहारहै और विषयों के संबं-

धको त्यागकर नाभी चक्रादिकोंमें चित्तके स्थिर होजाने का नाम धारणा है॥ और चित्तकी एकाकारवृत्ति का नाम ध्यानहै और चित्तकी अर्थाकार प्रतीति होनी अपने स्वरूपसे शून्य होकर स्थिर होना इसीका नाम समाधि है॥ इन योगके अंगोंके अनुष्ठान करने से भी शीघ्रही चित्तकी शुद्धि होती है (प्रश्न) योगके अंगों के अभ्यासका फल केवल अंतःकरणकी शुद्धि है या और लौकिक भी कुछ फल है (उत्तर) जैसे किसी ने आम्रफल खानेके लिये आम्रका वृक्षलगाया और जब वह वृक्षबड़ा होगा आम तो वह खावेहीगा परंतु छाया और सुगंधि आदिक को आपसे आपही प्राप्त होवेंगे तैसे अंतःकरण की शुद्धि के लिये जो अंगों के सहित योगका या केवल अंगोंका अभ्यास करना है तिससे अंतःकरणकी शुद्धि तो होवेगी परंतु छाया और गंधिस्थानापन्य जो सिद्धियांहैं सो आपसेआपही प्राप्तहोवेंगी (प्रश्न) वे सिद्धियां कौन हैं और किस किस अंगका फल कौन कौन सिद्धि है (उत्तर) क्रमसे यम नियमादिकोंकी सिद्धियोंको सुनो॥ योगसूत्र (अहिंसाप्रतिष्ठायांतत्सन्निधौवैरत्यागः १)प्रतिष्ठा नाम अभ्यासका है जिसने अहिंसाका अभ्यास कियाहै अर्थात् मन वाणी शरीर करके किसी जीवमात्रकी जो हिंसा नहीं करता तिसके पास जाकर विरोधी जीव जो हैं सिंह और मृग सर्प और नकुल इनका परस्पर वैरभाव दूर होजाता है जिसके समीप जानेपर विरोधियों का विरोध दूर होजाताहै तिसके फलको कौन कहसक्ता है॥ सत्यकाफल

(सत्यप्रतिष्ठायांक्रियाफलाश्रयित्वम् २) जब कोईपुरुष यागरूपक्रियाकोकरेगा तब तिसको स्वर्गादिरूपफल की प्राप्तिहोगी और सत्यभाषणके अभ्यासवाला यदिअति पापी पुरुषको भी कहे तुम स्वर्गको जावो तब वह तिसके वाक्यसे तुरंत स्वर्गको गमनकर जाता है सत्यकी प्रतिष्ठाका इतना फलहै (स्तेयप्रतिष्ठायांसर्वरत्नोपस्थानम् ३) स्तेयनाम चोरी करने का है और किसी की वस्तुको मनवाणी शरीर करकेभी न चुरानेका नाम अस्तेय है अर्थात् जो स्तेयका अभ्यास करताहै तिसको दिव्य रत्नों की सर्व ओर से प्राप्ति होती है और पृथिवी में जहां जहां धन होता है वह संपूर्ण तिसको दिखाता है (ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायांवीर्यलाभः ४) जो ब्रह्मचर्यका अभ्यास करता है तिसको अत्यंत सामर्थ्य होती है (अपरिग्रहस्थैर्येजन्मकथान्तासंबोधः ५) जो अपरिग्रहका अभ्यास करता है तिसको पूर्वजन्मों की कथाका ज्ञानहोताहै अर्थात् पूर्वजन्म में मैं कौनथा और क्या क्या कर्म करताभया (शौचात्स्वांगेजुगुप्सापरैर संसर्गः ६) जो शौचका अभ्यास करताहै तिसको अपने शरीरमें घृणा उत्पन्न होती है इस शरीरका कारण रुधिर मांस अस्थि आदिकहैं और मल मूत्र इसमेंभराहै जिसका कारणही अतिअपवित्रहै तिसका कार्यकैसे शुद्ध होसक्ताहैकिंतु कदापिनहींहोसक्ता इसलियेइसमहाअपवित्र अशुचिशरीर में ममताकात्यागही करनाउचित है इसप्रकारकी ग्लानिशौचके अभ्यासका फलहै(संतोषादनुत्तमसुखलाभः ७) संतोषके अभ्यास करनेसे अंतर

अत्यंत सुख उत्पन्नहोताहै (कायेन्द्रियसिद्धिरशुद्धिक्षया-त्तपसः ८) तपके अभ्यास करने से इन्द्रियोंकी सूक्ष्म दृष्टि होजाती है जो दूरदेशमें भी बस्तु रक्खी है अथवा पर्वतादिकों में है सो बस्तु भी तिसके नेत्रों के सन्मुख प्र-तीतहोती है इतनी सामर्थ्य तिसको होती है (स्वाध्या-यादिष्टदेवतासंप्रयोगः९)ॐकार पूर्वक इष्टमंत्रके जपके अभ्यास करनेसे जिसदेवता के दर्शनकी इच्छाहोवै सो देवता तिसको प्रत्यक्ष होजाताहै (ततोद्वन्द्वानभिघातः १०) आसन के जयकरनेसे शीतोष्ण क्षुधा तृषादिक सता नहीं सक्तेहैं आसनकी सिद्धिके अनंतर प्राणायाम की सिद्धिहोती है (ततःक्षीयतेप्रकाशावरणम् ११) प्रा-णायाम के सिद्धहोनेसे चित्तगत जो क्लेशरूपी आवरण है सो नाशको प्राप्त होजाता है स्मृतिः (मानसंवाचिकं वापिकायिकंवापियत्कृतम् तत्सर्वंनाशयेत्पापंप्राणायाम त्रयेणवै १) मनकरके वाणीकरके शरीर करके जो पाप कियेहैं सो सम्पूर्ण पाप तीनप्राणायामकरनेसे नष्टहोजा तेहैं (दह्यतेध्मानमात्रेणधातूनांहिमलंयथातथेन्द्रियस्य दह्यंतेदोषाःप्राणस्यसंयमात् २) जैसे स्वर्णादि धातुओं के मल अग्निमें धमानेसे दग्धहोजाते हैं तैसे प्राणों के रोकनेसे अर्थात् प्राणायामके करनेसे इन्द्रियों के दोष सर्व दग्ध होजाते हैं अब प्रत्याहारका फल दिखाते हैं जैसे मधुकर राजाके अनुसार अन्य मक्षिका होती हैं तिसीप्रकार इन्द्रियभी चित्तके अनुसारी होजातेहैं और धारणा का फल चित्तकी स्थिरता है तिससे शीघ्रही स-माधिका लाभ होता है ध्यानका फल दिखाते हैं स्मृतिः

(सर्वपापप्रसक्तोपिध्यायन्निमिषमच्युतं भूयस्तपस्वीभव-तिपंक्तिपावनएवच३)संपूर्ण पापोंकरके युक्तभी हो परंतु जो एकक्षणमात्रभी अच्युत परमेश्वरका ध्यान करताहै वह पुरुष पुनः तपस्वी होजाता है और पंक्तिपावन जो ब्राह्मणहैं तिनको भी पवित्र करनेवालाहोताहै और अपने स्वरूप में स्थिरहोना और अत्यंत सुखकी प्राप्ति होनी यह समाधि का फलहै फलके सहित योगके अंगों का निरूपण करदिया अब सत्संगतिका फल जो अंतः-करणकी शुद्धि तिसकोदिखातेहैं(गंगापापंशशीतापंदैन्यं कल्पतरुर्यथापापंतापंतथादैन्यंहन्तिसाधुसमागमः १) गंगाजी केवल पापोंकोही हरती है और चन्द्रमा केवल तापकोही दूरकरताहै और कल्पवृक्ष केवल दरिद्रताको ही दूरकरता है और सत्संगति जो है सो पाप ताप द-रिद्रता तीनोंको दूर करती है भागवत (साधूनांदर्शनंपु-ण्यंतीर्थीभूताहिसाधवः तीर्थीकुर्वन्तितीर्थानिस्वांतस्थेन गदाभृता २) साधुवोंका दर्शनही पवित्रहै क्योंकि वह तीर्थरूपहैं औरतीर्थोंकोभी वह तीर्थ रूप करतेहैं अपने हृदयके अंतर स्थित गदाभृत नारायणकरके(नह्यम्मया नितीर्थानि न देवामृच्छि लामयाते पुनंत्युरुकालेनदर्श नादेवसाधवः३) जलजलरूप तीर्थ औरमृत्तिका पाषाण रूप देवता पवित्रनहीं करसक्तेहैं यदि पवित्रकरते हैं तब बहुत कालकरके पवित्रकरते हैं और महात्मादर्शनसेही पवित्र करदेतेहैं योगवासिष्ठ(सदासन्तोऽभ्युपगंतव्याय-द्युपदिशंतिनयाहिस्वैरकथातेषामुपदेशाःभवन्तिताः ४) यद्यपि महात्मा कुछ उपदेश नहीं भी करैं तबभी तिनके

पास सदैव जाना उचित है क्योंकि जो महात्माओं के यहां परस्पर वार्ता होती हैं वह परमार्थ सम्बन्धी हैं इसलिये वही उपदेशहोजावेंगी (संगोहिसर्वथात्याज्यः सचेत्यक्तुं नशक्यते। सद्भिरेवसकर्तव्यः सतांसंगोहि भेषजम् ५). हे राम संसारी पुरुषों का संग सर्वथा त्यागने ही योग्य है यदि तुमसे पुरुषों का संगत्यागा न जावे तब श्रेष्ठ पुरुषोंका संगही सर्वदाकरना उचित है॥ क्योंकि महात्माओंका संग जो है सो संसाररूपी रोगके नाशकरनेमें महान् औषधी है और सर्वसाधनों से सुगम साधन अंतःकरण की शुद्धि का परमेश्वर की निष्काम भक्ति है और जिस में सर्व का अधिकार है प्रश्न॥ संसार में लोकों ने अपने अपने भिन्न भिन्न ईश्वर मानरक्खेहैं कोई तो विष्णुको ईश्वर मानते हैं और वह अपने मतमें प्रमाणभी देते हैं (वासुदेवं परित्यज्ययउपास्तेऽन्यदेवतम्। तृषितोजाह्नवीतीरेकूपंखनतिदुर्मतिः १) जो पुरुष वासुदेव विष्णुको त्यागकरके अन्यदेवताकी उपासना करता है वह पुरुष जैसे पिपासाकरकेयुक्त पुरुषगंगाकेतीरपर गंगाजलको त्यागकर कुआं खोदता है तिसी प्रकार वह करता है क्योंकि विष्णु सब देवनका देव है इसलिये विष्णु ईश्वर है और शिवके उपासक कहते हैं जिस शिव के कटाक्षके लेशमात्र को आश्रयण करके विष्णु महान् पदवीको प्राप्तभये तिसविष्णुको ईश्वरता नहीं बनती है क्योंकि विष्णुतो शिवके उपासकहैं और विष्णु अपने नेत्रको जिस शिवको अर्पण करतेभये और तिसी

से तिनका नाम पुण्डरीकाक्ष भया और उपासना करने वाला ईश्वरनहीं होता किन्तु जिसकी उपासना करताहै वही ईश्वरहोताहै इन हेतुओं से शिवही ईश्वर हैं सो कहाभीहै (महादेवंपरित्यज्य य उपास्तेऽन्यदैव तम्।सम्मूढोविषमश्नाति सुधांत्यक्त्वाक्षुधातुरः २) जो पुरुष महादेवको त्याग कर अन्यदेवताकी उपासना करताहै जैसे कोई क्षुधा करके आतुर हुआ अमृत को त्यागकर विष भक्षण करताहै तिसी प्रकार वहभी करताहै जो महादेव को त्यागकर और देवताकी उपासना करताहै और शक्तिके उपासक कहतेहैं जिस शक्तिने ब्रह्माविष्णुआदिकों को उत्पन्न कियाहै और जिस शक्तिकी कृपाको आश्रयण करके ब्रह्माआदिक सृष्टियों को रचते हैं तिसशक्तिकी तुल्यताको प्राप्तहोनेके योग्य शिवादिक नहीं होसक्तेहैं इसलिये संपूर्ण जगत्का ईश्वरशक्तिहै और गणपतिके उपासक कहतेहैं गणपति ईश्वरहै क्योंकि सर्व देवता गणपति का पूजन करतेहैं और सूर्यके उपासक कहतेहैं सूर्य भगवान्ही ईश्वरहैं क्योंकि जगत्का व्यवहार संपूर्ण सूर्य के अधीनहै यदि सूर्य उदय न होवै तब जगत्में अंधकारहीरहै कोई व्यवहार सिद्ध न होवै और जितने देवताहैं वह सब सुने हीजातेहैं परन्तुनेत्रसे नहींदिखाते और सूर्य भगवान् प्रत्यक्ष दिखाई पड़तेहैं इसलिये सूर्यही ईश्वर हैं और हिरण्यगर्भ के उपासक कहतेहैं हिरण्यगर्भही ईश्वरहै क्योंकि मायोपाधिक परमात्मा जब समष्टिलिंग शरीरों का अभिमानी होता है तब तिसकी हिरण्यगर्भ संज्ञा

होतीहै और उद्गीथ ब्राह्मण में हिरण्यगर्भ का माहात्म्यभी कहा है इसलिये हिरण्यगर्भही ईश्वरहै और विराट् के उपासक कहते हैं हिरण्यगर्भ ईश्वर नहीं है क्योंकि स्थूलदेहके विना लिंगदेह कहींभी देखनेमें नहीं आताहै इसलिये विराट्ही ईश्वरहै और (सहस्रशीर्षा विश्वतश्चक्षुः) हजारोंहैं शिर जिसके और हजारोंनेत्रहैं जिसके इसश्रुतिप्रमाणसे और ब्रह्माके उपासक कहते हैं अनेक शिरोंवाला ईश्वर नहीं होसक्ता यदि अनेक शिरों वालेको ईश्वर मानोगे तब कृमिआदिकभी ऐसे हैं जिनके अनेक पादशिरहैं वहभी ईश्वर होजावेंगे इसलिये विराट् ईश्वर नहींहै किन्तु चतुर्मुख ब्रह्माही ईश्वरहै और प्रजापति के उपासक कहते हैं प्रजापति ईश्वरहै (प्रजापतिः प्रजाअसृजत) प्रजापतिही प्रजाको उत्पन्न करता भया इस श्रुतिप्रमाण से प्रजापतिही ईश्वरहै इस प्रकार अनेक युक्ति और प्रमाणों से अपने अपने मत में भिन्न भिन्न ईश्वर सिद्धकरतेहैं और यदि अनेकईश्वर होंगे तब जगत्का व्यवहार नहीं सिद्धहोगा क्योंकि एक कालमें एक ईश्वरकहेगा अबसृष्टिकरनी चाहिये दूसरा कहेगा अभीनहीं करनी चाहिये और अनेक ईश्वरों के मतभी विरुद्धहोवेंगे तब कोईभी ईश्वर सिद्धनहीं होगा और जब अनेकईश्वरहोंगे तब वह परिच्छिन्नहोंगे क्योंकि अनेकविभुएकदेशमें रहनहींसक्ते तब परिच्छिन्नहोने से मूर्त्तिमान्होंगे तब सभीअनित्यहोजावेंगे क्योंकि जो परिच्छिन्न मूर्त्तिमान्होताहै सो अनित्यहोताहै इत्यादि अनेक दोष आवेंगे इस लिये जोकि एक यथार्थ ईश्वरहै

तिसकास्वरूप कहनाचाहिये क्योंकि विनाईश्वरके स्वरूप केजानेसे तिसकीभक्तिभी नहींबनती (उत्तर) (मायांतुप्रकृतिं विद्यान्मायिनंतुमहेश्वरम् । अस्यावयवभूतैस्तुव्याप्तंसर्वमिदं जगत् १) जो मायाहै सो जगत्का उपादान कारणहै और मायिजो माया वाला अर्थात् मायोपाधिक अंतर्यामीहै सो जगत्का निमित्त कारणहै और मायाऽवच्छिन्न चैतन्यका नाम ईश्वर है इसी श्रुतिप्रमाण से जगत्का अभिन्न निमित्त उपादान कारण ईश्वरही सिद्धहोता सो चैतन्य स्वरूप नित्यव्यापक सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् जगत्काकरताहै और अपने भक्तोंकेऊपर अनुग्रह करके तिनकी उपासना के अर्थ अपनी माया शक्तिकरके ब्रह्मा विष्णु शिवराम कृष्णादि अनेक मूर्त्तियों को धारण करताहै सो श्रुति भी कहती है (सब्रह्मासशिवः सहरिः सेन्द्रः सोऽक्षरः परमः स्वराट्) सोई परमेश्वर ब्रह्मारूप है सोई शिवरूप है सोई इन्द्ररूप है सोई अक्षरहै अर्थात् नाश से रहित है और परम उत्कृष्ट है अर्थात् सबसे श्रेष्ठहै और वही विराट्है और पूजाध्यानादि निर्गुण मूर्त्तिके नहींबनते हैं इसलियेभक्तों के ध्यानार्थ परमेश्वर सगुण मूर्त्तियों को धारण करताहै जैसे योगी अपने योग बलसे क्रीड़ाके लिये अनेक मूर्त्तिधारण करलेताहै तैसे वह योगियों का स्वामी ईश्वर अपनी मायाका आश्रयणकरके क्रीड़ार्थ और भक्तोंकी इष्टसिद्धि के लिये मायिक अनेक विग्रह धारण करलेता है और महाप्रलय में सर्वको अपने में लयकरलेताहै और फिर ज्योंका त्योंहीहै इसरीतिसे जितने ब्रह्मा शि-

वादिकहैं वह सब परमेश्वर से भिन्न कोई नहींहैं किन्तु सर्व परमेश्वरकीही मूर्त्तिहै परन्तु जिस मूर्त्तिकी उपासनाकरे अर्थात् शिवकी या विष्णुकी तब बाकीकी जो मूर्त्तियांहैं तिनकोभी शिवरूप करके जानै क्योंकि इन के भेद में कोई प्रमाण नहींहै और जो भेद भावना करताहै वह नरकगामी होता है जो भेदबुद्धि करते हैं वे अत्यंत अज्ञानीहैं इसलिये अंतःकरणकी शुद्धिका अर्थी जो पुरुष सो अभेद भावना करके उपासनाकरे और परमेश्वरके अंशइव अंशरूपीजीवों करके संपूर्ण जगत् व्याप्तहोरहाहै इसश्रुतिके अनुसार परमेश्वरके स्वरूप का निर्णय करके किसी मतका विरोधभीनहींआता और अनेक ईश्वर भी सिद्धनहींहोसक्ते हैं (प्रश्न) जो विभु व्यापक परमेश्वर है वह छोटीपरिच्छिन्न मूर्त्तियों में कैसे समासकेगा (उत्तर) जो सावयव परिच्छिन्न वस्तुहोती है वह दूसरे में नहीं समासक्ती जो निरवयवहै तिसके समानेमें कौनबाधकहै और जब स्थूल व्यापक आकाश परिच्छिन्न घट मठादि में समारहाहै तब फिर जो आत्मा आकाश से भी अति सूक्ष्महै तिसके समाने में तुमको कौन आश्चर्यहै (प्रश्न) मायिक शरीर परमेश्वर के आपने मानाहै सो माया का कार्यतो सर्वमिथ्याहै तब मायिकशरीर भी मिथ्या होंगे और ईश्वरभी तुम्हारा मिथ्या होजावेगा और मिथ्या पदार्थोंके ध्यान करने से अंतःकरणकी शुद्धिकैसेहोगी (उत्तर) जैसे घट मठादि उपाधिके नाश होनेपरभी आकाशका नाश नहीं होता है किंतु आकाश ज्योंका त्योंहीं बनारहता है तैसे

मायाकृत उपाधियों के नाश होने परभी ईश्वरका नाश नहीं होता वह ज्योंका त्योंही बना रहता है और जैसे स्वप्नकी मिथ्या औषधी स्वप्नके मिथ्या रोगको दूर कर देती है तैसे अज्ञानरूपी निद्राकरके स्वप्न रूपी जाग्रत को देखता जो जीवहै तिसके मिथ्या अंतःकरणकी अशुद्धिको मिथ्या मूर्त्तिकी उपासना रूपी औषधी तिसको दूर करदेगी इसमें कोईविरोध नहीं है (प्रश्न) व्यापक परमेश्वर को अवतार धारणनहीं बनता (उत्तर) यह तुम्हारा कथन असंगत है क्योंकि जो सर्व शक्तिमान् है और संपूर्ण जगत्को उत्पन्न करसक्ता है क्या तिस को अवतार धारणकी शक्ति नहीं है यदि तिसको अवतार धारणकी शक्ति नहीं मानोगे तब वह सर्वशक्तिमान् भी नहीं रहेगा और जगत्को भी उत्पन्न नहीं कर सकेगा इसलिये ईश्वरके लीला विग्रह तुमको मानने पड़ेंगे नहीं तो भक्ति उपासना आदिक सबका लोप होजावेगा और जो पूर्व ईश्वरका स्वरूप सिद्धकर आये हैं वही जगत्का अभिन्न निमित्त उपादान कारण है॥

(प्रश्न) बौधादिक जो अनीश्वरवादी हैं सो जगत्की उत्पत्तिमें ईश्वर को कारण नहीं मानतेहैं तब ईश्वर को जगत्की कारणता कैसे सिद्ध होगी (उत्तर) बौद्धादिकोंके न मानने से क्या ईश्वर नहीं सिद्धहोगा उलूक आदिक सूर्यको नहीं मानते हैं क्या तिनके न मानने से सूर्यका अभाव होजाताहै सूर्य तो स्वप्रकाशरूप विद्यमानही है तैसे तिन नास्तिकों के न मानने से ईश्वरका अभाव नहीं होसक्ता क्योंकि श्रुतियुक्ति अनुभव प्रमा-

ण करके ईश्वरकी सिद्धि होती है इसलिये तिन ना-
स्तिकों का मत श्रुतियुक्ति अनुभव प्रमाणसे विरुद्धहोने
से सर्वथा त्यागने योग्यहै (प्रश्न) अनीश्वर वादियोंके
मतकैसे निर्युक्तिकहैं और वहजगत्की उत्पत्तिमें किसको
कारण मानते हैं और तिनका सिद्धांत क्या है सो वि-
स्तारपूर्वक कहिये (उत्तर) प्रथम तिनके मतकोसुनो
बुधके चार शिष्यभये हैं एक सौत्रांतिक दूसरा वैभाषिक
तीसरा योगाचार चौथा माध्यमिक॥ सो इन चारों में
से आदिके जोदो सौत्रांतिक वैभाषिक कहे हैं वह दोनों
बाह्य और अंतर सर्वपदार्थों को अस्ति त्वरूप करके
अर्थात् सत्यरूपकरके मानतेहैं परंतु तिनदोनोंकेमतमें
इतनाही भेदहै जो एकतौ सम्पूर्णपदार्थोंकोपरोक्ष मानता
हैं और दूसरा अपरोक्ष मानताहै और तीसरायोगाचार
जोहै सो संपूर्ण बाह्यपदार्थोंको क्षणिक विज्ञानरूप मा-
नता है विज्ञानते अतिरिक्त बाह्य पदार्थ नहीं मानता
और चौथा माध्यमिक शून्यवादी है अब आदिके जो
दो सौत्रांतिक और वैभाषिक हैं प्रथम तिनके मत को
दिखातेहैं धातुरूप जो पृथिवीआदिकहैं इनकीभूतसंज्ञा
है और रूपादि विषय और चक्षुरादि इंद्रियोंको भौतिक
और बाह्य मानते हैं और चित्त और चित्तके कार्य
कामादिकों को अंतर मानते हैं और पृथिवी आदिक
चारों भूतों के परमाणु मानते हैं तिनमें से कठिन स्वभा-
ववाली पृथिवी के परमाणु हैं और स्निग्धस्वभाववाले
जलके परमाणुहैं उष्ण स्वभाववाले तेजके परमाणु हैं
और चलन स्वभाववाले वायुके परमाणु मानते हैं और

परमाणुही पृथिवी आदिक संघात रूपको प्राप्त होते हैं और पृथिवी आदि भूतचार और जितना कुछ विषय और इन्द्रिय संघातहै सो संपूर्ण परमाणुओंकाहीसमूह रूपहै और इनके मतमें अवयवी कोई पदार्थ नहीं है और इनके मतमें रूपस्कंध विज्ञानस्कंध वेदनास्कंध संज्ञास्कंध संस्कार स्कंध ये पांचस्कंध हैं अर्थात् इनका स्कंध नामहै और विषयोंकेसहित इन्द्रियोंका नाम रूप स्कंधहै और अहंअहं जो अल्प विज्ञान अर्थात् धारा-विज्ञानका नाम विज्ञानस्कंध है और सुखादिकों के अ-नुभवका नाम वेदनास्कंध है और गौ अश्व घट पट इ-त्यादि जो नामहैं तिनका नाम संज्ञास्कंध है और राग द्वेष मोह धर्म अधर्मकानाम संस्कारस्कंधहै और पांचों में से जो विज्ञानस्कंध है तिसको चित्त और आत्माकी कहते हैं और जो चारस्कंधहैं तिनको अध्यात्मिक कहते हैं और सर्वलोक यात्राके निर्वाहकहैं और अवयवों से भिन्न अवयवीकी प्रतीतिनहींहोती इसलिये अवयवही शेषरहते हैं और जो सत्य है वहक्षणिक है जैसे विद्युत अर्थात् मेघोंमें जो बिजलीहै वहसत्यभी है औरक्षणिक भी है इसीप्रकार अवयव सत्यभी हैं और क्षणिक भी हैं ऐसा इनका सिद्धांतहै सो युक्तिसे रहितहै क्योंकिइसमें अनेकदोषआते हैंप्रथमतोसृष्टिकेआदिकालमें परमाणु-ओंकाऔरस्कन्धों का स्वतःसंघात नहींबनसक्ताक्योंकि परमाणु आदिक सब जड़हैं और चित्त विज्ञानको भी संघातके उत्पन्नकरनेकी योग्यता नहींबनती क्योंकिजब प्रथम संघात देहाकार उत्पन्नहो लेवै तब पीछे विज्ञान

होवै और जो प्रथम विज्ञान उत्पन्न होलेवै तब पश्चा-
त्संघात उत्पन्नहोवै इसरीति से अन्योऽन्याश्रय दोष
आवेगा और क्षणिक विज्ञान से भिन्न कोई जीव या
ईश्वर इनके मतमें स्वीकार नहींहै जो संघात की उ-
त्पत्तिका करता होवै और यदि करता से विनाही पर-
माणु या स्कंध आपसे आप संघातकी प्रवृत्ति के लिये
प्रवृत्तहोंगे तब इनके मत में मुक्ति का अभाव प्रसंगहो
जावेगा किंतुसदैवही संघात हुआ करेगा प्रलय कभी
नहींहोगी (प्रश्न) अल्प विज्ञान की संतान अर्थात् वि-
ज्ञान धाराही संघात को उत्पन्न करदेगी करता मान-
नेकी क्या आवश्यकताहै (उत्तर) संतान जो है सो
संतानी जो विज्ञान तिनसे भिन्नहै या अभिन्नहै यदि
भिन्न कहो तब वहस्थिरहै या क्षणिकहै और यदि स्थि-
रमानोगे तब नित्य आत्मवाद प्रसंगहोजावेगा क्योंकि
नित्यज्ञान स्वरूप आत्माको हम स्थिरमानतेहैं और
यदि क्षणिकमानोगे तब जो क्षणिकहोगा तिसक्षणिक
से जो उत्पन्न हुआहै तिससे भिन्न तिसका कोई व्या-
पारहोगा नहीं और जबकि तिसका व्यापार कोई न
हुआ तब परमाणुवोंके मेलन वास्ते तिसकी प्रवृत्तिभी
नहीं होगी तब फिर क्षणिकत्व भी नष्ट होजावेगा और
क्षणिक विज्ञान को मेलकत्व भी नहीं बनता और भिन्न
पक्षमें भी यही दोषहोगा इसरीतिसे संघात के कर्त्ता
का अभाव होनेसे संघात भी नहीं सिद्धहोगा और सं-
घात के न सिद्ध होनेसे संपूर्ण लोक व्यवहार भी लोप
होजावेगा (प्रश्न) यद्यपि भोक्ता और शासिता और

कर्त्ता को हम स्थिर नहींमानतेहैं तथापि अविद्याआ-
दिकोंके परस्पर कारण होनेसे संघात की सिद्धिहोजा-
वैगी सो दिखाते हैं अविद्या, संस्कार, विज्ञान, नाम
रूप, षडायतन, स्पर्श, वेदना, तृष्णा, उपादान, भव
जाति, मरण, शोक, परिदेवना, दुःख , दुर्मनस और
मान अपमानादिजो हैं इनमेंही परस्पर कारणता मा-
नतेहैं अब इनके अर्थको दिखातेहैं क्षणिक पदार्थों में
स्थिर बुद्धि का नाम अविद्याहै तिस अविद्या से राग
द्वेष मोह संस्कार उत्पन्नहोतेहैं और तिनके संस्कारों से
गर्भस्थबालकको विज्ञान उत्पन्नहोता है और तिसआ-
लय विज्ञान सेही पृथ्वी आदिक भूतचतुष्टयहोतेहैं इ-
न्हींकी नाम संज्ञा है नामका आश्रय होनेसे और तिस
नामसे शुक्लादिरूप और वीर्य रुधिरादिक उत्पन्न होते
हैं और गर्भ में स्थित वीर्य कीजो रुधिर कीच फेनादि
अवस्थाहै सोई नामरूपशब्दका अर्थ है और विज्ञान
पृथ्वी जल तेज वायु रूप यहछः आश्रयहैं जिस इन्द्रि-
य समुदाय के तिसका नाम षडायतनहै और नामरूप
इन्द्रियोंके परस्पर संयोग का नामस्पर्शहै तिसस्पर्श से
सुखदुःखादि का ज्ञान होता है तिसज्ञान करके पुनः
विषयों में तृष्णा होती है तिसतृष्णाकरके प्रवृत्ति अ-
र्थात् उपादान होताहै तिस प्रवृत्तिसे भव अर्थात् धर्मा-
दि होते हैं तिससे जाति अर्थात् देहका जन्म होता है
और पांच स्कन्धों का समुदाय रूप ही देह का जन्म
है और उत्पन्न हुये स्कन्धों की परिपाक अवस्था का
नाम जरा है और स्कन्धों के नाशका नाम मरण है और

मृतक पुत्रादिकों के स्नेह से उत्पन्न हुआ जो अन्तरदाह तिसका नाम शोकहै तिस शोककरके हापुत्र इत्यादि विलापका नाम वेदनाहै और अनिष्टके अनुभवका नाम दुःख है तिस दुःख करके मानसी पीड़ा होती है और अविद्याके हेतु जन्मादि हैं और जन्मादिकों का हेतु अविद्या है इसलिये परस्पर कार्य कारण भाव होने से अर्थात्‌ही संघातकी सिद्धि बनजावेगी(उत्तर)संघातकी उत्पत्ति में कोईनिमित्त मानोगेयानहींमानोगे और यदि अविद्यादिकों कोही परस्पर निमित्त मानोगे तब पूर्वपूर्व अविद्यादिक उत्तरउत्तर अविद्यादिकों के प्रति निमित्त होवैंगे तब फिर संघातकी उत्पत्तिमें तो कोई भी निमित्त नहीं होगा और यदि तुम्हारा ऐसा अभिप्राय है कि जो अविद्यादिक संघातके बिना अपने को न लभते हुये संघातकी अपेक्षा करैंगे तब फिर तिस संघातका कोई निमित्त कहना पड़ेगा सो कर्त्ताके बिना संघात कदाचित् नहीं होसकेगा और यदि अविद्यादिकोंको संघातका निमित्त मानोगे तब अन्योन्याश्रय दोष आवेगा प्रथम जो अविद्यादिकोंकी सिद्धि होलेवै तब संघातकी सिद्धि होवै और यदि संघातकी सिद्धि होलेवै तब अविद्यादिकों की सिद्धि होवै तबफिर दोनों में से कोई भी सिद्ध नहीं होगा (प्रश्न) संघातों की स्वाभाविकी कार्यकारण भावकरके अनादि प्रवृत्तिचली आती है सो प्रवृत्ति संघातको उत्पन्न करनेवाले कर्त्ता की अपेक्षा नहीं करती किंतु संघातका आश्रय जो अविद्यादिक सो उत्तर संघातका प्रवर्तक है इस रीति से

अन्योन्याश्रय दोष नहीं आवेगा(उत्तर)यदि संघातही अनादि संसारमें प्रवृत्तहोताहै और तिसकाआश्रय अविद्या आदिक है तब फिर संघातसे उत्पन्न जो दूसरा संघात सो नियम करके अपने सदृश संघातको उत्पन्न करेगा अथवा अनियम करके सदृश विसदृशको उत्पन्न करेगा यदि नियम करके सदृश की उत्पत्ति मानोगे तब मनुष्य देहको पशु आदि देह अथवा देवता देह की प्राप्ति और नरक स्वर्गादि प्राप्ति का अभाव प्रसंगहोगा क्योंकि तुम्हारे मतमें भोक्ता तो क्षणिकहै और संघात अपने संघातको उत्पन्नकरेगा तब देवतादि शरीर कदाचिद्भी नहीं होवेंगे और यदि अनियम मानोगे अर्थात् अपने से विसदृशकी उत्पत्ति मानोगे तब मनुष्यका शरीर कदाचित् क्षण में हस्ती होजावैगा और कदाचित् क्षणमें देवता बनजावेगा क्योंकि नियम तो है नहीं और संघात करके क्षण में दूसरे संघातको उत्पन्न करनाही है और संघातअचेतन और क्षणिक भी है और जो भोक्ता के लिये संघातहै वह भोक्ता स्थिरहै नहीं तुम्हारे मतमें तो फिर भोगभोगके लियेहोगा दूसरे के लिये नहीं होगा इन दोषोंसे संघात कदाचित् भी नहीं सिद्धहोगा और यदि कारणके विना कार्यकी उत्पत्तिमानोगेयाकिसीकारणसे कार्यकी उत्पत्ति मानोगे अथवा कारण के बिना कार्यकी उत्पत्तिमानोगे तबतुम्हारी जो प्रतिज्ञा है विषयकरण सहकारी संस्कार इनचारोंसे चित चैत्य अर्थात् रूपादि विज्ञानऔर चैत्य सुखादियेसबउत्पन्नहोतेहैं इसप्रतिज्ञाकी हानिहोजावैगी

औरकारणके अभावसेकार्यकीउत्पत्ति मानोगेतबसबंप-
दार्थोंको सर्वसे उत्पन्न होना चाहिये और तुम्हारे मत
में तंतुओंसे घट भी उत्पन्न हुआ करेगा और कपालों
से पट भी उत्पन्न हुआ करेगा क्योंकि कारणका अभाव
तो सर्वत्र विद्यमान है और यदि कारणसे कार्यकी उ-
त्पत्ति मानोगे तबयावत् पर्यंत उत्तरक्षण पदार्थ की उ-
त्पत्ति होगी तावत् पर्यंत पूर्वक्षण पदार्थ रहेगा क्योंकि
वह उत्तर क्षण पदार्थ के प्रतिकारण मानाहै और कारण
से बिना कार्य होगानहीं तब तुम्हारी क्षणिकत्व प्रतिज्ञा
नष्टहोजावेगी पूर्वोक्तयुक्तियोंसेसौत्रांतिक और वैभाषिक
कामत खंडनकरदिया॥अब तीसरे योगाचार के मतको
दिखातेहैं (प्रश्न) विज्ञानहीं एक स्कंध है सो विज्ञान
साकार और क्षणिकहै तिस विज्ञान से भिन्न और कोई
वाह्य पदार्थनहींहै और विज्ञानही बुद्धिरूपकरके अं-
तर स्थितहुआ प्रमाण प्रमेय रूप सकल व्यवहार को
उत्पन्न करदेताहै और विज्ञानहीवाह्यविषयाकाररूपकर
केपरिणामको प्राप्तहोजाताहै और विज्ञानही प्रमाण रूप
होजाताहै और तिस विज्ञान से भिन्न और कोई पदार्थ
सत्यनहीं है किंतु जितने पदार्थ हैं सो सम्पूर्ण विज्ञान
केही आकार विशेष हैं इस हेतु से विज्ञान से विषय का
भेदनहींहै और यदि कहो कि विषय से विज्ञान का स-
त्यभेद क्यों नहो सो नहीं बनता क्योंकि वाह्य पदार्थ
के विद्यमान होने परभी बुद्धिमें आरूढ़ता के विना प्र-
माण प्रमेयादि व्यवहार नहीं बनता इसलिये विज्ञान
से अतिरिक्त और कोईभी पदार्थनहींहै क्योंकि विज्ञान

के विनाविषयका असत् होनेसे जैसे नरके शृंगके ज्ञान के विना नरकाशृंग कोई पदार्थनहींहै तैसे घटपटादि विषयोंका भी विज्ञान के विना असत्है किंतु सर्व पदार्थ विज्ञान रूपहीं है और यदि बाह्य पदार्थ मानोगे तब क्या तिसको परमाणुरूप मानोगे या परमाणुवोंका समूहरूप मानोगे सो परमाणुरूपतो माननहीं सकोगे क्योंकि घटपटादिकोंमें परमाणुरूपघटहै परमाणुरूपपट है ऐसाव्यवहार नहींहोताहै और घटपटादिकोंका प्रत्यक्ष भी नहींहोगा क्योंकि परमाणुवोंका प्रत्यक्षनहीं होता तब परमाणुरूप घटादिकोंका कैसे प्रत्यक्षहोगाइसलिये परमाणुरूपनहींमानसक्तेहो और यदिपरमाणुवोंका समूहरूपमानोगे तब वह समूह परमाणुवों से भिन्नहै या अभिन्नहै तिसका निरूपण नहींकरसकोगे और विषय और विज्ञानकी एककालमें प्रतीतिहोतीहै अर्थात् ज्ञानसमकालही विषयकीप्रतीतिहोतीहै जैसे स्वप्नकेपदार्थ और मृगतृष्णादि जलकी समकाल प्रतीतिहोतीहै और विनाहीपदार्थके ग्राह्यग्राहक व्यवहारहोताहै औरस्वप्न के पदार्थ हाथी घोड़े आदिक ग्राह्यहैं और तिनका जो ज्ञानहै सो ग्राहकहै तैसे जाग्रत्के पदार्थभी ज्ञान समकाल प्रतीति होतेहैं जैसे स्वप्न के पदार्थों का ज्ञान से भेद नहींहै तैसे जाग्रत् के पदार्थोंकाभी विज्ञान से भेद नहींहै अर्थात् विज्ञानरूपहीहैं विज्ञानसे अतिरिक्त और कोई जीव या ईश्वरनहींहै किंतु विज्ञानही सर्वरूपहै (उत्तर) बाह्य पदार्थ का अभाव कदाचित् नहींहोसक्ता क्योंकि प्रत्यक्षप्रमाणकरके यह घटहै यह

पटहै ऐसा व्यवहारहोताहै इसलिये वाह्य पदार्थ का अभाव नहीं बनता (प्रश्न) हम ऐसानहीं कहते जो वाह्य पदार्थकोई प्रतीतनहीं होता किंतु विज्ञान के विना वाह्य पदार्थ कोई नहीं प्रतीत होता ऐसा हम मानतेहैं (उत्तर) ऐसा तुमतभी कहतेहो जो तुम्हारी जिह्वा को कोई रोकने वालानहींहै युक्तिसे तो तुमनहीं कहते क्योंकि ज्ञान और विषय का विषय विषयीभाव संबंधहै अर्थात् घटादिक जो हैं सो ज्ञानके विषयहैं और ज्ञान विषय करने वाला विषयीहै सोज्ञान और विषय का विषय विषयीभाव संबन्ध प्रत्यक्ष प्रमाणकरके सिद्ध है और तिनका भेदभी सिद्धहै तिस भेदको तुम दूर नहीं करसक्तेहो और यदि घटादिक विज्ञान काही स्वरूपहोवै तब विज्ञान रूपघटहै विज्ञान रूपपटहै ऐसी प्रतीतिहोनी चाहिये सो तो नहीं होती किंतु मृत्तिका काघटहै तंतुवोंकापटहै ऐसी प्रतीति होतीहै और संपूर्ण पुरुषों को विज्ञान से विषयका भेदही प्रतीतहोता है तिसका लोप तुम्हारे कथनसे नहीं होसक्ता क्योंकि सब कोई ऐसा कहतेहैं कि वाह्य पदार्थों को हम देखतेहैं और ऐसा कोई नहीं कहता कि विज्ञानको हम देखते हैं और जैसे रूप के प्रत्यक्ष में प्रकाश को समकाल में कारणमानाहै परन्तु रूपकेसाथ प्रकाश का अभेद नहीं माना है तैसे विज्ञान को भी विषय के प्रत्यक्ष में कारण माना है कुछ विज्ञान का विषय के साथ अभेद नहीं माना और यदि अभेद मानोगे तब विषय का और विज्ञानका ग्राह्य ग्राहक भावसंबंधभी नहीं होगा क्योंकि

विषय ग्राह्य है और बिज्ञान ग्राहक है विषय जड़ है और बिज्ञान चेतनहै इसलिये इनका अभेद कदाचित् नहीं बनता और जो तुमने पूर्व कहाथा कि स्वप्न के पदार्थ जैसे बिज्ञानसे बिना असत् हैं तैसे जाग्रत् के पदार्थ भी बिज्ञानके बिना असत् हैं इसी हेतु से ये भी विज्ञान रूपहैं सोभी समीचीन नहीं हैं क्योंकि स्वप्नोत्तर जाग्रत्में स्वप्नके पदार्थों का बाध होजाताहै और जाग्रत् के पदार्थों का जाग्रदुत्तर कालांतरमें भी बाधनहीं होता और सर्व पुरुषोंको ऐसी प्रतीतिभी होती है जो स्वप्नमें मैंने मिथ्या पदार्थ देखे थे अब जाग्रत् कालमें वह असतहैं और जाग्रत् के पदार्थोंमें ऐसीप्रतीति कालांतरमें भी नहीं होती किंतु ऐसीप्रतीति होतीहै वही ये पदार्थ हैं जो मैंने कालांतरमें देशांतर में देखाथा अब मैं फिर तिसीको देखरहाहूं ऐसी प्रतिभिज्ञा होती है कैसे तुम जाग्रत्के पदार्थोंको स्वप्नके पदार्थोंकी तुल्यता कहतेहो इसलिये योगाचारका मतभी सर्वथा असंगत है और त्यागने योग्य है॥ अब चौथा माध्यमिक जो शून्यबादी है तिसका मतदिखाते हैं (प्रथम माध्यमिकका प्रश्न) (असद्वाइदमग्रआसीत्) सृष्टिकी उत्पत्तिसे पूर्वअसत्ही होताभया अर्थात् शून्यही होताभया इस श्रुति प्रमाण से शून्यहीं जगत्का कारण है और भ्रांतिकरके जगत् की प्रतीति होती है (उत्तर॥ कथमसतः सज्जायेत) असत्से सत्की उत्पत्ति कैसे होसक्ती है अर्थात् सत्रूप जगत् असत् शून्य कैसे उत्पन्नहोसक्ताहै किंतु कदापि नहीं होसक्ता इस श्रुति प्रमाणसे असत्

से सत्की उत्पत्ति का निषेध किया है और जो तुमने (असद्वाइदमग्रआसीत्) श्रुतिकाप्रमाणदियाहै तिसका यह अर्थ है उत्पत्तिसे पूर्व जगत् नाम रूपकरके प्रगट न होताभया और जगत् की भ्रमकरके प्रतीति भी असत् में नहीं बनती क्योंकि सत्रूप अधिष्ठानके बिना भ्रमकहीं देखानहीं है इसलिये शून्य जगत्का कारणनहीं होसक्ता सद्रूपही जगत्का अधिष्ठान है (सन्मूलासौम्येमाःप्रजाः) हे सौम्य जितना कुछ नाम रूपात्मक जगत्है सो संपूर्ण सत्मूलकही है अर्थात् सद्रूपब्रह्मही इसकामूल कारणहै और श्रुतियुक्ति अनुभवसे बिरुद्ध होने से बौद्धमत आर्यों करके त्यागनेही योग्य है बौद्धमतका निरूपण होचुका॥ अब दिगंबर आर्हतके मतको दिखातेहैं॥ इसके मतमेंसातही पदार्थ हैं॥ जीव १ अजीव २ अस्रव ३ संवर ४ निर्जर ५ बंध ६ मोक्ष ७ और संक्षेपसे तो वह दोही पदार्थ मानते हैं एक जीव दूसरा अजीव और जीवको चेतन और शरीरके तुल्य परिमाणवाला और सावयव और भोक्ता मानतेहैं और अजीव छःप्रकारका मानते हैं जो जीवसे भिन्न पूर्व छः पदार्थ कहे हैं तिनका नाम अजीवहै इस रीतिसे दोही पदार्थ होते हैं अब तिनके अर्थको सुनो भोगोंका नाम अजीव है और विषयों के सन्मुख इन्द्रियों की वृत्तिका नाम अस्रवहै और अविवेकका नाम संवर है और केशों का नोचना और तप्त शिलापर आरूढ होनेका नाम निर्जरहै और कर्मका नाम बंधहै और कर्म पाशकेनाश होनेपर आलोक आकाशमें प्राप्त होकर निरंतर ऊर्द्ध्व

देशको गमन करनेका नाम मोक्षहै और तिनहीं दोपदा थैंको यह पांच अस्तिकाय मानते हैं जीवास्तिकाय १ पुद्गलास्तिकाय २ धर्मास्तिकाय ३ अधर्मास्तिकाय ४ आकाशास्तिकाय ५ अस्तिकायनाम पदार्थकाहै अर्थात् एकजीव पदार्थहै और पुद्गलनाम परमाणुवोंकाहै एक परमाणुपदार्थ है इसीप्रकार औरभी जानलेना और प्रवृत्तिकरके अनुमेय धर्म पदार्थ है और जीवकी शरीर में स्थितिका हेतु अधर्मपदार्थहै आवर्णाऽभावकानाम आकाशहै पुनः जीवास्तिकाय तीनप्रकारकाहै औरकोईजीव अर्हतादि नित्यहैं और कोई इदानीं कालमें मुक्तहैं और कोई बद्धहैं और आकाश दो प्रकारकाहै एक सांसारिक आकाश अर्थात् जितने आकाश में जगत् हैं उतने नाम सांसारिक आकाश है और दूसरा आलोक आकाशहै जो संसार से रहित मुक्तों का आश्रयहै अर्थात् जिसमें मुक्त ऊर्द्ध्व को उड़ते रहते हैं और बंधका हेतु आठ प्रकारके कर्महैं तिनमें से चारघाती कर्म हैं और चारअघातीकर्महैं तिनके ये नामहैं ज्ञानावरणीय १ दर्शनावरणीय २ मोहनीय ३ आंतरीय ४ येचार घाती कर्महैं तत्त्वज्ञान से मुक्ति नहीं होती इसकानाम ज्ञानावरणीयहै और अर्हतके शास्त्र श्रवण से मुक्ति नहीं होती इसकानाम दर्शनावरणीयहै और बहुत शास्त्रकारों करके दिखाया जो मोक्षमार्ग तिसमें विशेष मार्ग का निश्चय न होना इसकानाम मोहनीय है और मोक्षमार्ग की प्रवृत्ति में विघ्न करना इसकानाम आंतरीयहै ये चार घातीकर्महैं॥ वेदनीय १ नामिक २ गोत्रिक ३ आ-

युष्क ४ हमारेको तत्त्वजानने योग्यहै इसकानाम वेद-
नीयहै अमुकनामवालामैंहूं इसकानामनामिकहै तुम्हारे
अर्हत के उपदेश के योग्यहोकर शिष्यवंश में प्राप्तभ-
याहूं इसअभिमान का नाम गोत्रिक है और शरीरकी
स्थिति के अर्थ कर्मका नाम आयुष्कहै ये चारअघाती
कर्म हैं सब आठप्रकारके कर्मों को बंधका हेतु मानतेहैं
और ईश्वरको जगत्काकारणनहीं मानतेहैं किंतु परमा-
णुवोंसे ही पृथिवी आदि भूतों की उत्पत्तिमानतेहैं और
सप्तभंगी न्यायको सर्वत्र वस्तुमात्रमें योजनाकरतेहैं सो
दिखातेहैं स्यादस्ति १ स्यान्नास्ति २स्यादस्तिनास्तिच ३
स्यादवक्तव्यः ४ स्यादस्तिचावक्तव्यश्च ५ स्यान्नास्ति
चावक्तव्यश्च ६ स्यादस्तिचनास्तिचावक्तव्यश्च ७ इ
नसातकानाम सप्तभंगीहै और स्याद् पद किंचित्अर्थ
कावाचीहै और अस्तिपद विद्यमानता का वाचीहै और
इनके मतमें सर्व पदार्थ अनेकांतिकहैं अर्थात् अनियत
स्वरूपवालेहैं एकरूपकरके नहीं रहते हैं जब एकवस्तु
में अस्तित्वकी इच्छा होती है तब प्रथम भंग प्रवृत्त
होताहै अर्थात् पदार्थ है १ और जब तिसीपदार्थ में
नास्ति कहने की इच्छा होती है तब दूसराभंग प्रवृत्त
होताहै अर्थात् पदार्थ नहीं है २ जबक्रमसे अस्तिनास्ति
कथन करनेकी इच्छा होती है तब तीसराभंग प्रवृत्त
होता है पदार्थ है भी नहीं ३ और जबएककालमें अस्ति
नास्ति कहनेकी इच्छा होती है तब एक काल में अस्ति
नास्ति दोनों शब्दों की प्रवृत्ति होनहींसक्ती तब चौथा
भंग प्रवृत्त होता है पदार्थ अप्रकट होगा ४ और जब

पदार्थ अव्यक्तहै ऐसी कहनेकी इच्छाहोती है तब पंचम भंग प्रवृत्तहोताहै अर्थात् पदार्थहै परंतु अप्रकटहै ५ और जब नहीं है अव्यक्तहै ऐसी कहनेकी इच्छाहोती है तब छठाभंग प्रवृत्तहोताहै पदार्थ नहींभी है अव्यक्तभीहै ६ और जब है भी नहीं भी अव्यक्त है ऐसी कहने की इ-च्छाहोती है तब सप्तमभंग प्रवृत्त होताहै ७ क्रमसे सातों भंग जानलेने॥ इसीप्रकार संपूर्ण पदार्थोंकी एकरूपता करके नहीं मानतेहैं और जगत्की उत्पत्ति में ईश्वरको कारण नहीं मानतेहैं किंतु परमाणुवोंसेही पृथिवी आ-दिक संघातकी उत्पत्ति मानते हैं सो इनका मत भी स-मीचीन नहीं है क्योंकि जो पदार्थ सत् है सो सर्वत्रही सर्वदा काल विद्यमानहै जैसे ब्रह्म और यदि कहो तिस ब्रह्मकी प्राप्तिके लिये यत्न नहीं होगा सो नहीं बनता क्योंकि अप्राप्तिकी भ्रांतिकरके यत्न बनजावेगा और जो पदार्थ नहीं है सो सर्वकाल नहीं है जैसे शशविषाणादि और प्रपंच जोहैसो दोनों सत्यअसत्यसे विलक्षणहैकिंतु अनिर्वचनीयहै क्योंकि यदि सत्यहोवै तब इसका नाश नहोवै और जो असत्य होवै तब इसकी प्रतीति न होवै और दोष जिसआकारकरके पदार्थको तुम सत्य मानतेहो तिसीआकारकरकेपदार्थको असत्यभीमानतेहोयाआका रांतर करके अर्थात् किसी और आकारकरकेयदिकहो जिस अकार करके पदार्थ सत्य है तिसी आकार करके असत्य भी है सो नहीं बनता क्योंकि एक पदार्थ में दो विरोधी धर्म सत्य असत्य नहीं रहसक्ते और यदि आकारांतर करके असत्य है अर्थात् प्राप्यरूप करके

पदार्थ सत्य है और अप्राप्य रूप करके असत्य है सो भी नहीं बनता क्योंकि दूर देशमें जो पदार्थ है अथवा दूरस्थग्रामकी जबकि प्राप्तिनहीं भई तब वहभी असत्य होजावेगा तब तिसकी प्राप्तिके लिये यत्न भी निष्फल होगा और जो तुमने जीवादि पदार्थों में सप्तत्व का निश्चय किया है जो सातही पदार्थ हैं सो ऐसा निश्चय भी तुम्हारानहीं बनेगा क्योंकि सप्तभंगीन्यायकी प्रवृत्ति होनेसे सप्तपदार्थोंमें भी अस्तिनास्ति करके अनिश्चय रूपज्ञानहीहोगा सो संशयकीन्याईं अप्रमाण होजावेगा और निश्चय करनेवाले प्रमाणादिकोंमें भी अस्तिनास्ति रूपकरकेसप्तभंगी प्रवृत्तहोगा तब तुम्हारे शास्त्रका अनिश्चित प्रमाणप्रमेय प्रमातादिकोंकाकैसे उपदेशकरेंगे और यदि करेंगे तब तिनका वाक्य त्यागने योग्यही होगा और अर्हतमतके अनुसारी जोहैं सो अर्हतकरके किया जो अनिश्चय रूपउपदेश तिसमें कैसे प्रवृत्तहोंगे क्योंकि जब फलका निश्चय होताहै तबतिसके साधनों में प्रवृत्तहोता है इसलिये अनिश्चित अर्थ का प्रतिपादक जो अर्हतका शास्त्र सो उन्मतके वाक्य की सदृश त्यागने योग्यही होगा और तुम्हारे मत में अस्तिकाय पंचत्व भी नहींबनेगा क्योंकि तिसमें भी पंचत्व संख्या अस्तिनास्ति वा ऐसा विकल्प होगा तबअस्तिपक्षमें पंचत्व संख्यासिद्धहोगी परंतु नास्तिपक्षमें न्यूनयाअधिक होजावेगी और जो तुमने अव्यक्त कहाहै सो अव्यक्त व्यत्वका क्या अर्थ करोगे किसी शब्दकरके जो अवाच्यहो अर्थात् कथन करने के योग्य न हो तिसको

अव्यक्त कहोगे तब सात पदार्थों को अव्यक्तत्व नहीं बनेगा क्योंकि यदि अव्यक्त है अर्थात् कथन करने के योग्य नहीं है तब इनकाउच्चारणभी नहीं बनेगा उच्चारण करतेहो और अव्यक्त भी कहते हो यह तुम्हारा कथन सर्वथा विरुद्ध है और स्वर्ग मोक्षका भी पक्ष में सत्व और पक्षमें असत्व और पक्षमें नित्य और पक्षमें अनित्य होनेसे तिनमेंभी प्रवृत्ति नहींहोगी और अनादि सिद्ध अर्हत मुनि है और जीव अनुष्ठान से मुक्त होते हैं और अनुष्ठान के बिना बद्धहैं इसप्रकार अर्हत के शास्त्रकरके निश्चित स्वभाववाले जीवों की त्रिविधता भी नहीं सिद्धहोगी क्योंकि अस्ति नास्ति न्याय तिनमें भी प्रवृत्तहोगा और जीवों में भी सत्त्व असत्त्व विरुद्ध धर्मोंका असंभव है जब कि जिस जीवका सत्त्व है तब तिसका असत्त्व कदाचित् नहीं बनता और जिसका असत्त्व है तिसका सत्त्व कदाचित् नहीं होगा इसलिये अर्हतका मत श्रुतियुक्ति अनुभव करके विरुद्ध होने से सर्वथा त्यागने योग्य है और परमाणुवों का संघात रूप पृथिवी आदिक अर्हतने माना है सो पूर्व परमाणु कारणवादके खंडन करने करकेही खंडन होगया और जीवका स्वरूप जो इन्हों ने मानाहै सो आगे जीवात्म बादमें खंडनकरेंगे अर्हत मतका निरूपण होचुका अब अनीश्वर बादी सांख्यका मत दिखाते हैं (प्रश्न) वेदांत मतमें जगत्की उत्पत्तिसे पूर्व संपूर्ण साधनों से रहित केवल ब्रह्मकोही जगत्का कारण मानाहै सो सहकारी कारणों से हीन केवल ब्रह्मसे जगत्की उत्पत्ति

नहीं बनती इसलिये सांख्यमत सिद्ध प्रधान से जगत् की उत्पत्ति बनती है जैसे मृत्तिका घटादि रूप परिणाम को प्राप्तहोजाती है तैसेप्रधानभी जगदाकार परिणामको प्राप्तहोजावेगाइसलिये प्रधानही जगत्काकारणहै किंतु ब्रह्म नहींहै(उत्तर) चेतनका आश्रयण नकरकेअचेतन जो है सो किंचित् भी कार्य के उत्पन्न करने में समर्थ लोक मेंनहीं देखा है जैसे चतुर पुरुषों ने जगत्में छोटे बड़े सुख दुःख मोह स्वभाववाले मंदिर रचना किये हैं तैसे ये जगत् भी नानाप्रकारके कर्मों के फलके भोग्य के योग्य पृथिवी जलादि और स्थूल सूक्ष्म शरीरादि और वृक्ष पर्वत नदी समुद्रादिरूप जितना जगत्है तिसजगत् की रचनाको मनकरके भी चतुर पुरुष करनेको समर्थ नहीं होसक्ते हैं तब पुनः जड़ प्रधान कैसे इसजगत्की रचना करलेगी किंतु कदाचित्भी नहींकरैगी और जैसे चेतनकुंभकार कुम्भकी रचना करलेता है बिना चेतन कुम्भकारके जड़ मृत्तिकाकुंभरूप परिणामको नहींप्राप्त होसक्ती है तैसे बिना चेतनके जड़प्रधानभी जगदाकार परिणाम को कदाचित् नहीं प्राप्तहोसकेगी (प्रश्न) सृष्टि करने के लिये प्रधानकी साम्यावस्थासे प्रच्युति होजाती है अर्थात् तीनों गुणोंकी साम्यावस्थाका नाम प्रधानहै सो प्रधान जब जगत्की रचना करती है तब तीनोंगुण परस्पर अंग अंगी भावको प्राप्तहोजाते हैं इसरीति से जगत्की रचना प्रधानसे बनती है (उत्तर) प्रधान की साम्य अवस्थासे प्रच्युति भी चेतनके बिना नहीं बनती क्योंकि प्रवृत्तिमें चेतनमेंही कारणता श्रुति युक्ति अनु-

प्रवकरके सिद्धहै और अचेतनमें कहीं देखीभी नहीं है किंतु अचेतन रथादिकों की प्रवृत्तिभी चेतन सारथी आश्रितही देखी है इसलिये तुम्हारा कथन असंगत है (प्रश्न) तुम्हारे मतमें प्रवृत्तिसे रहित ईश्वरको माना है सो तिसमें भी प्रवर्तकतानहीं बनेगी क्योंकि जो आप प्रवृत्ति से रहितहै वह दूसरेको कैसे प्रवृत्त करेगा किंतु नहीं करेगा (उत्तर) जैसे चुंबक पत्थर आप प्रवृत्तिसे रहित भी है परंतु अपनी शक्तिकरके लोहे में क्रिया को उत्पन्न करादेता और जैसे रूपादि आपप्रवृत्तिसे रहित भी हैं परंतु चक्षुरादिकों की प्रवृत्ति करादेते हैं अर्थात् सुंदररूपवाले पदार्थको देखकर चक्षुरादिकोंकी तिसके देखनेमें प्रवृत्ति होजाती है तैसेही स्वयं प्रवृत्तिसे रहित भी ईश्वरहै तथापि सर्वगत और सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान् होने से जगत्की प्रवृत्ति करादेगा (प्रश्न) जैसे अचेतन जो दुग्धहै सो वत्सकी वृद्धिके लिये स्वतःही प्रवृत्तिको करता है और जैसे मेघका जलजो है सो भी स्वतःही लोकोंके ऊपर उपकारके लिये प्रवृत्त होता है तैसे अचेतन प्रधान भी जगत्की रचनामें स्वतःप्रवृत्त होजावेगी इसमें कोईदोष नहीं है (उत्तर) दुग्धकी प्रवृत्ति जो है सो भी चेतन जो गौः तिसका जो वत्स में स्नेह तिस स्नेह करके युक्तहोकर गौ दुग्ध की प्रवृत्ति कराती है और जलका तो स्वभावही निम्नदेश में बहने का है इसलिये दोषतुमको बनाहीरहा (प्रश्न) जैसे तृण स्वभावसेही दुग्ध रूप करके परिणाम को प्राप्त होजाते हैं तैसे प्रधान भी स्वभावसेही जगदाकार परिणाम को

प्राप्तहोजावेगी(उत्तर)चेतन धेनुकरके भक्षण कियेहुयेही तृण दुग्धरूपकरके परिणामको प्राप्त होजाते हैं स्वतः नहीं होते और यदि स्वतःही अर्थात् धेनुकेभक्षणके विनाही दुग्धरूप परिणामको प्राप्त होजावें तब जगत् में दुग्धके अर्थ कोई भी धेनुको नहीं पालेगा तृणसेही दुग्धबनालेवेंगे सो ऐसातो कदाचित्भी नहींहोसक्ता इसलिये चेतन के संबंधके विना अचेतनकी प्रवृत्ति नहीं होसक्ती (प्रश्न) हमारेमतमें मूलप्रकृति प्रधानहै अर्थात् संपूर्ण जगत्का कारण एकजड़ प्रधानहीहै परंतु वह कर्त्तहै भोक्तृनहीं और पुरुषचेतन असंग पुष्कर पलाशवत् निर्लेपहैकर्त्तानहीं किंतुभोक्ताहै और नानाहैऔर पुरुषके भोग मोक्षके लिये प्रधानकीप्रवृत्तिहोतीहै और पुरुषार्थ का साधनही प्रधानका प्रयोजनहै औरप्रधान से महत्तत्व अर्थात्बुद्धितत्त्व उत्पन्नहोताहै औरबुद्धितत्त्व से अहंकारकी उत्पत्तिहोतीहै अहंकारसेशब्द स्पर्श रूप रस गंध पंचतन्मात्रा और एकादशइन्द्रिय उत्पन्नहोतेहैं और पंचतन्मात्रा से आकाशादि पंच स्थूलभूत उत्पन्न होते हैं यह संपूर्ण पचीसतत्त्व हम मानतेहैं आगे इनतत्वोंसे संपूर्ण कार्य उत्पन्न होता है और तिन तत्वोंसे प्रधानजोहै सो कारणहीहै किंतुकार्य किसीकानहीं है और महत्तत्व अहंकार पंचतन्मात्रा ये पूर्व पूर्व का कार्य हैं और उत्तर उत्तरका कारण हैं और एकादश इन्द्रिय पंचस्थूल भूत ये कार्यही हैं किंतु कारण किसी का नहीं हैं और पुरुष न किसी का कार्य है न कारण है और कोई ईश्वर जगत्का कर्त्तानहीं है किंतु सहकारि कारण

से रहित स्वाभाविक प्रधानकी प्रवृत्तिकोही हम श्रद्धा पूर्वक मानते हैं (उत्तर) यह तुम्हारी कल्पना सर्वथा वेद विरुद्ध है (आत्मनआकाशःसंभूतइत्यादि) श्रुति ईश्वर आत्मासे प्रथम आकाशकी उत्पत्ति कथनकरती है और आकाशसे वायुवायुसे तेज तेजसे जलजलसेपृ- थिवी और इन्द्रियोंकी उत्पत्ति भूतों के सत्त्वरजो अंश से कहीहै और जो तुमने पांचस्थूल भूत और एकादश इन्द्रियों को किसी के प्रतिकारण नहींमाना यह भी तु- म्हारी वृथा कल्पनाहै क्योंकि जितने घटपटादि पदार्थ हैं सब स्थूल पृथ्वी आदिक भूतों के कार्य हैं और इ- न्द्रिय भी अपनी क्रियाके प्रतिकारण हैं यह सब अनु- भव सिद्ध है और उदासीन पुरुषको भोक्तापना बनता नहीं और जो जड़ प्रधानहै सो चेतन पुरुषके भोग में प्रवृत्ति नहीं करसक्ती इसलिये तुम्हारा कथन सब अ- संगत है (प्रश्न) जैसें किसी बगीचेमें दो पुरुष रहते हैं दोनों में से एक पंगुथा दूसरा अंध था जो पंगु है तिसको दर्शन शक्ति तो है परंतु क्रिया शक्ति नहीं है और जो अंधहै तिसको क्रिया शक्ति तो है परंतु दर्शन शक्ति नहीं है सो पंगु अंधके कांधेपर आरूढ़ होकर और अंधकी प्रवृत्ति कराकर दोनों मिलकर बाग के फलोंको खानेलगे तैसेही पुरुष पंगुहै प्रधान अंधहै सो पुरुष प्रधानकी प्रवृत्ति करावेगा और दोनों मिलकर संसारके भोगोंको भोगेंगे और जैसे चुम्बक पत्थरआप प्रवृत्तिसे रहित भी है परंतु लोहेकी प्रवृत्ति करादेता है तैसे पुरुष आप असंगभी हैं और प्रवृत्तिसे रहित भी है

परंतु प्रधान की प्रवृत्ति करादेगा (उत्तर) तबभी दोष बनाहीरहा क्योंकि तुम्हारे मतमें प्रधानको स्वतंत्र प्र-वृत्तिमें कारण माना है अब प्रधान की स्वतंत्रता नहीं रहेगी और पुरुषको तुमने उदासीन व्यापार से रहित निर्गुण मानाहै अब पुरुषकोअसंगता नहीं रहेगी इस लिये पंगुअंधका दृष्टांत नहीं बनता और यदिमानोगे दृष्टांत को तब तुम्हारा सिद्धांत जाता रहेगा और चु-म्बक का भी दृष्टांत नहीं बनता क्योंकि यदि चुम्बक की तरहमानोगे तब प्रधान पुरुष की सन्निधि तो नित्यबनी है नित्यही प्रवृत्ति हुआ करै गी किंतु मोक्षकाअभावप्रसंग होजावेगा और दोषतुम्हारेमतमें परस्पर विरोध भी आताहैक्योंकिकहीं सप्तइन्द्रियमानेहैं और कहींएका-दश इन्द्रियमानेहैं और कहीं अहंकारसे उत्पत्तिमानी है और कहीं पंचतन्मात्रा से उत्पत्तिमानी है और कहीं तीनअंतःकरण माने हैं और कहीं एकही अंतःकरण माना है इसप्रकार परस्पर विरुद्ध कथनकरने से और श्रुतिसेभी विरुद्ध है सो दिखाते हैं (सदेवसौम्येदमग्र आसीत्तदैक्षतबहुस्यांप्रजायेयेतिसईक्षतलोकान्नुसृज इति) हेसौम्य जगदुत्पत्तिसे पूर्व सद्रूपब्रह्महीहोताभया सो इच्छाकरताभया अनेकरूपहोजाऊं और प्रजारूप करके उत्पन्नहोऊं सो इच्छाकरताभया कि लोकोंको रचूँ ऐसीइच्छा चेतनमेंही बनतीहै जड़में कदाचित् इच्छा नहींबनती श्रुति विरोध दिखादिया और युक्तिअनुभव विरोध पूर्वदिखादियाहै इसलिये सांख्यमत त्यागनेयो-ग्यहै अब मीमांसकका (प्रश्न) कर्महो ईश्वर है और

स्वर्गादिक पुरुषार्थ हैं अर्थात् स्वर्गकी प्राप्ति का नाम मोक्षहै और मंत्ररूपही देवताहैं और कोईदेवताविशेष नहींहै और नाकोई ईश्वर जगत्‌काकर्त्ताहै (उत्तर)यह तुम्हाराकथन ठीकनहींहै क्योंकि कर्म जड़ हैं और अनंतहैं जड़में ईश्वरता नहींबनती और अनंत ईश्वरभी मानना श्रुतियुक्तिसे विरुद्धहै और स्वर्गकीप्राप्ति मोक्ष नहींहोसक्ती क्योंकि स्वर्गादिक सब नाश्यहैं तब मोक्ष भी अनित्य होजावेगी इसलिये मीमांसक का मत भी श्रुतियुक्तिसे विरुद्धहोने से त्यागनेयोग्य है और जैसे प्रधानमल्लके गिरानेसे छोटेछोटेमल्ल आपसेआप भाग जातेहैं तैसे प्रधान अनीश्वरवादियों के खंडनकरने से छोटेछोटे अनीश्वरवादी अर्थसेही खंडनहोजाते हैं अनीश्वरवादियोंके मत खंडनकरादिये अब जो ईश्वरको केवल निमित्तकारणही मानते हैं किंतु उपादानकारण नहींमानतेहैं तिनके मतोंके खंडनका प्रारंभकरते हैं प्रथम नैयायिकका (प्रश्न) कारणके जो गुणहैं वही कार्य में अपने तुल्यजातिवाले गुणोंका आरंभकरते हैं जैसे श्वेततंतुवोंसेश्वेतहीपटउत्पन्नहोताहैऔरश्यामतंतुवोंसे श्यामहीपट उत्पन्नहोताहै रूपांतरवाला कदाचित् उत्पन्न नहीं होता है तैसे चेतनब्रह्मसे अचेतन जगत् की कदाचित् उत्पत्ति नहीं होसक्ती किंतु परमाणुही जगत् काउपादान कारणहैं और ईश्वर जगत्‌का निमित्तकारणहै ऐसामाननेमें कोईदोष नहींआता क्योंकि परमाणु जड़ हैं तिनका कार्य जगतभी जड़ही उत्पन्नहोता है (उत्तर) कारणके जो गुण हैं सो अपनेतुल्य जातिवाले

गुणोंकोकार्यमें उत्पन्नकरतेहैं ऐसानियम नहीं है क्योंकि तुम्हारेमतमें परमाणुवृत्ति परिमाणकानाम पारिमांडिल्य परिमाणहै सो पारिमांडिल्य परिमाणकी किसीके प्रति-कारणताभी तुम्हारे मतमें नहीं है तथाच ह्रस्व अणु परिमाणसे रहित जो परमाणु तिनसे ह्रस्व अणुपरिमा-णवाला द्व्यणुक तुम्हारेमतमें उत्पन्नहोताहै सोन हुआ चाहिये क्योंकि द्व्यणुकके कारण जो परमाणु तिनमें ह्रस्व अणु परिमाण हैनहीं और तिसीप्रकार ह्रस्व अणुपरि-माणकरके युक्त और दीर्घपरमाणुसे रहित द्व्यणुकों से दीर्घपरिमाणवाला त्र्यणुक उत्पन्नहोताहै अर्थात् कार-णके गुणोंके बिनाही त्र्यणुकमें दीर्घपरिमाण उत्पन्नहोता है जैसे तुम्हारेमतमें तैसे हमारेमतमेंभी कारणके गुणों केविनाही चेतनब्रह्मसे अचेतन जगत्की उत्पत्तिहोनेमें कोईबाधक नहींहै और यदि कारणके गुणोंसेही कार्यके गुणमानोगे तब औरभीदोष आवेगा क्योंकि गुणों की न्यून अधिकतासे भूतोंमें स्थूल सूक्ष्मताहोतीहै अर्था-त् जिसमें अधिकगुणहैं वह अधिक स्थूलहै और जि-समें न्यूनगुणहैं वह तिसकी अपेक्षाकरके सूक्ष्महै जैसे रूप रस गंध स्पर्श चारगुण पृथिवी में रहते हैं इसलिये पृथिवी जलादिकोंकी अपेक्षाकरके स्थूल है और रूप रस स्पर्श येतीनगुण जलमेंरहतेहैं इसलिये जल पृथि-वीकी अपेक्षाकरके सूक्ष्महै और तेजमें रूप स्पर्श दो गुणरहतेहैं तेज जलकी अपेक्षाकरके सूक्ष्महै और वायु में एक स्पर्शही गुणरहताहै इसलिये वायु सबकी अपे-क्षाकरके सूक्ष्महै तैसेही पृथिवी के परमाणुवोंमेंभी पूर्वो-

क्त चारगुण रहते हैं वहभी जलादिकों के परमाणुवों से स्थूलहोंगे और तिनसे सूक्ष्म जलके परमाणु तुमको माननेपड़ेंगे क्योंकि तिनमें न्यूनगुण रहते हैं इसीप्रकार तेज वायुके परमाणुवों में भी सूक्ष्मतर सूक्ष्मतम मानो यदि परमाणुवोंमें भी स्थूल सूक्ष्मतामानोगे तब परमाणुत्व नहींरहेगा और यदि गुणोंकी अधिकताके बिनाही मूर्त्तियोंमें स्थूल सूक्ष्मतामानोगे सो नहींहोसक्ता क्योंकि कार्यरूप पृथिवीआदिकों में गुणोंकी न्यून अधिकतासे स्थूल सूक्ष्मता देखतेहैं और यदि परमाणुवों की तुल्य परिमाणताके लिये गुणोंकी न्यून अधिकता नहींमानोगे किंतु एकएकभूतका एकएकगुण कल्पनाकरोगे तब फिर तेजमेंभी स्पर्शकी उपलब्धि नहींहोगी और जल में स्पर्शज्ञान और पृथिवीमें रूप रस स्पर्शकाज्ञान नहीं होगा क्योंकि तुमनेतो एकएकगुणही कारण में मानाहै और तुम्हारेमतमें कारण गुणपूर्वकही कार्यके गुणहोते हैं सो कारण में तो वहगुण हैं नहीं और यदि सम्पूर्ण भूतों के परमाणुवों में चारचारगुण कल्पनाकरोगे तब फिर जल तेज वायुमें भी गंधकी उपलब्धिहोगी सो तो नहीं होती इसलिये वृथाही नैयायिककी कल्पना है जो कारणके गुणकार्यके गुणोंका आरंभ करते हैं(प्रश्न) तथापि चेतन ब्रह्मसे जड़ जगत्की उत्पत्ति नहीं बनती क्योंकि युक्ति अनुभवसे विरुद्ध है इस लिये परमाणुही जड़ जगत्का उपादानकारणहै औरईश्वरनिमित्त कारणहै सो युक्ति पूर्वक दिखाते हैं लोकमें जितने घट पटादि द्रव्यहैं सो तंत्वादि द्रव्यों के संयोग से जन्य हैं

अर्थात् उत्पन्न होते देखे हैं इसी रीतिसे औरभी जो जो सावयव द्रव्यहैं सोसो अपने अपने अवयवोंके संयोग विशेषसे उत्पन्न हैं जैसे पट अपने अवयव तंतुवों के के संयोगकरके जन्यहै तैसेतंतुभी अपनेसूक्ष्म अवयव अंशुवोंके संयोग विशेषकरकेजन्यहैंऔरअंशुभी अपने सूक्ष्म अंशोंके संयोगसें जन्यहैं इस प्रकारका अवयवा अवयवि बिभाग जिसमें समाप्त होजावै अर्थात् जिस के अवयव आगे न होवैं ऐसा जो कोई पदार्थ है तिसी का नाम परमाणु है और संपूर्ण पर्वत समुद्रादि रूप जितना जगत् है सो संपूर्ण सावयव रूपहै और साव-यव होनेसेही अनित्यहै अर्थात् उत्पत्ति विनाशवाला है और विनाकारण के कार्य होता नहीं इस लिये परमाणु हीं इस जड़ जगत् का कारणहैं और नित्यहैं और जब सूर्य उदय होता है तिस समयमें जो झरोखे के भीतर सूर्यकी धूप आती है तिसमें जो सूक्ष्मसूक्ष्म धूलिसी प्रतीत होती है तिसका नाम त्र्यणुक है तिस त्र्य-णुक के छठें भागका नाम परमाणु है सो परमाणु अस्मदादिकों की दृष्टिका विषयनहीं किंतु अनुमेय हैं अर्थात् अनुमान प्रमाणका विषयहै और जब ईश्वर को सृष्टि उत्पन्नकरनेकी इच्छाहोती है तब सृष्टि के आदिकालमें जीवोंके अदृष्टके वशसे ईश्वरकी इच्छा करके परमाणुवोंमें प्रथम क्रिया उत्पन्नहोतीहै पुनः दो-दो परमाणुवों का संयोगहोकर द्व्यणुक उत्पन्नहोता है पश्चात् तीनतीन द्व्यणुक मिलत्र्यणुक उत्पन्नहोते हैं इस प्रकारचतुरणुकसेलेकर संपूर्णस्थूलकार्य जातउत्पन्न

होताहै और परमाणु सबजड़हैं इसलिये तिनका कार्य जगत्‌भी जड़ उत्पन्नहोताहै और यदि चेतनको उपादान मानोगे तब सब चेतनहीं उत्पन्नहोवैंगे घट पटादि सो ऐसातो होतानहीं इसलिये परमाणुही जगतका उपादान कारण है और ईश्वर केवल निमित्तकारण है और जब जीवोंके कर्मफलदेने से निवृत्तहोजाते हैं तब ईश्वरकी इच्छाकरके प्रथम दोदो परमाणुवोंका विभाग होता है तब द्वयणुकका नाशहोता है पुनः द्व्यणुकादिकोंके नाशसे त्र्यणुकादि संपूर्ण कार्यजात नाशको प्राप्त होजातेहैं इसीकानाम प्रलयहै कणादकेअनुसार ऐसा मानतेहैं इसमें कोईदोष नहीं (उत्तर) परमाणुकारणवाद तुम्हारा सर्वथा असंगत है सो दिखाते हैं सृष्टि की उत्पत्तिसे पूर्वकालमें संपूर्ण परमाणुविभक्त अवस्था को प्राप्तहोते हैं अर्थात् परस्परभिन्नभिन्नहोकर रहतेहैं और जब सृष्टि उत्पन्नहोनेलगतीहै तव परमाणुवों में क्रियाहोकर दोदोपरमाणुवों का संयोगहोता है तुम्हारे मतमें सो संयोग क्रियासेजन्य है और उत्पत्ति नाश वाला तुमने माना है सो संयोगका जनक जो क्रिया सो विना किसी निमित्त कारणसे नहींहोसक्ती इसलिये परमाणुवोंकी क्रियाका कोई निमित्त कारण तुमको अवश्य माननापड़ेगा क्योंकि विनाकारणके कार्यकी उत्पत्ति तुमकोभी संमत नहीं है और यदि क्रियाका कारण नहीं मानोगे तव परमाणुवों में क्रिया नहीं होगी और क्रिया के अभाव से संयोगकाभी अभावही होगा तब द्वयणुकादिकों की उत्पत्तिकाभी अभावहोगा इसलिये

परमाणुवों की क्रियाका निमित्त अवश्य माननापड़ैगा सो निमित्त कारण प्रयत्नको मानोगे या अभिघातको मानोगे यदि प्रयत्नको मानोगे सो नहीं बनेगा क्योंकि प्रयत्न विना शरीर के होता नहीं और तिस कालमें शरीररहित आत्माका प्रयत्न नहींबनता किंतु शरीरवाले आत्मा मेंही प्रयत्न होताहै इस रीति से प्रयत्नमें निमित्त कारणता नहींबनती और अभिघातमेंभी निमित्त कारणता नहींबनती क्योंकि अभिघातका उत्पादक जिस कालमें कोई क्रिया नहीं है और क्रिया के बिना अभिघात होतानहीं इसलिये दोनों रीति से परमाणुवों में क्रिया नहींबनती और यदि जीवात्मा के अदृष्टोंको कारण मानोगे तब वह अदृष्ट आत्मा में समवाय संबंध करके रहतेहैं या परमाणुवों में परमाणुवों में तो बन नहींसक्ते हैं क्योंकि परमाणु जड़हैं जड़के अदृष्ट होतेनहीं आत्मा मेंही मानोगे तब तुम्हारेमतमें आत्मा विभुहै अदृष्टवाले आत्मा का संयोग सर्व काल परमाणुवों के साथ बनाही है तब सर्वदा सृष्टिहुआ करेगी प्रलयका अभाव प्रसंग होजावेगा और अदृष्ट आप जड़ है वह दूसरे में क्रियाको कैसे उत्पन्न करेंगे जो आप जड़है वह कदाचित् भी दूसरेमें चेतन के बिना क्रिया नहीं उत्पन्नकरता इसरीति से क्रिया के निमित्त का अभाव होने से परमाणुवों में क्रिया कदापि नहीं होगी और परमाणुवोंका आत्मा के सर्व देश के साथ संयोग है या एक देशके साथ यदि आत्मा के सर्व देश के साथ संयोग मानोगे तब कार्य में वृद्धि नहींहोगी

क्योंकि निरवयवों का संयोग बनतानहीं और यदि एक देशके साथ संयोग मानोगे तब परमाणुभी सावयव होजावेंगे क्योंकि अवयववाले पदार्थ काही एक देश होताहै निरवयवका नहींहोता इसी रीतिसे प्रलयमें भी विभागार्थ परमाणुवोंमें क्रिया नहींहोगी क्योंकि क्रिया का कारण कोई नहींहै तब प्रलयकी अनुत्पत्ति होनेसे अर्थात् असिद्धहोनेसे परमाणुवोंको जगत्कीकारणता नहींबनती और यदिईश्वरकी इच्छाको कारण मानोगे तब ईश्वरकी इच्छाभी तुम्हारेमतमें नित्यहै तब नित्यही सृष्टि हुआकरेगी प्रलय कदापि नहीं होगी इन दोषों करके युक्त होनेसे परमाणु कारणवाद त्यागने योग्य है और जो दो परमाणुवों में द्व्यणुक का समवाय संबंध मानाहै सोभी नहींबनता क्योंकि संयोग का जैसा तुम समवाय संबंध कल्पना करतेहो तैसे समवाय का भी तुमको कोई संबंध कल्पना करना पड़ेगा आगे जिस संबंध करके द्व्यणुकका समवाय परमाणुवोंमें रहेगा वह जोसंबंधहै तिसका और संबंध कल्पनाकरनापड़ेगा पुनः तिसका और कल्पना करनापड़ेगा इसरीतिसे अनवस्था दोष आवेगा क्योंकि तुम्हारे मतमें संबंधिसे संबंधका अत्यंत भेदहै और दोष तुम्हारे मत में परमाणु प्रवृत्ति स्वभाव वालेहैं या निवृत्ति स्वभाव वालेहैं अथवा प्रवृत्ति निवृत्ति उभय स्वभाववाले हैं अथवा प्रवृत्ति निवृत्ति अनुभय स्वभाव वालेहैं यदि प्रवृत्ति स्वभाववाले मानोगे तब सदैव सृष्टि हुआकरेगी और यदि निवृत्ति स्वभाव वाले मानोगे तबसदैव प्रलय हुआकरेगी और उभयस्व-

भाववाले तो बननहींसक्के क्योंकि एकमें दो विरोधीधर्म्म नहीं रहसक्केहैं और यदि अनुभय स्वभाववाले मानोगे अर्थात् प्रवृत्तिनिवृत्तिसे रहित स्वभाववाले मानोगेसोभी नहींबनेगा क्योंकि पुनः अदृष्टादिकों को प्रवृत्ति निवृत्ति काकारण मानना पड़ेगा और यदि मानोगे तब अदृष्टा-दिकोंकी सन्निधि अर्थात् संबंधतो सर्वदाबनाहीहै सदैव प्रवृत्ति हुआकरेगी या सदैव निवृत्ति हुआ हुआकरेगी इन दोषोंसेभी परमाणुवाद नहींबनता और दोषरूपादि वाले परमाणु रूपादि वाले भूतोंके कार्योंका आरंभकरते हैं ऐसा वैशेषिक मानतेहैं और नित्यहैं सोभी नहींबनता क्योंकि रूपादि वाले परमाणुवोंको अणुत्व नित्यत्व का विपर्ययहै अर्थात् अणुत्व नित्यत्व सिद्ध नहींहोगा परम कारणकी अपेक्षा करके स्थूलत्व और अनित्यत्व की प्रसक्ति होगी अर्थात् प्राप्ति होगी क्योंकि लोकमें जो जो रूपादिवाली वस्तुहै सो सो अपने अपने कारणकी अपेक्षा करके स्थूलहै और अनित्य है जैसे पट जो है सो तंतुओं की अपेक्षाकरके स्थूलहै और नित्यहै और तंतु जोहैं सो अंशुवों की अपेक्षा करके स्थूलहैं और अनित्यहैं इसी रीतिसे रूपादिवाले परमाणुभी अनित्य हैं यदि कहो अप्रत्यक्ष रूपादिवाले जो पदार्थ हैं वह नित्यहैं सोभी नहींबनता क्योंकि तुम्हारे मतमें द्व्यणुक रूपादि वाले भी हैं और अप्रत्यक्ष भी हैं अब तिनकोभी नित्य होना चाहिये इस दोष से भी परमाणुवाद असं-गतहै कणाद का मत खंडन करदिया अब वैशेषिकका मत खंडनकरते हैं वैशेषिक ऐसा मानते हैं द्रव्य गुण

कर्म सामान्य विशेष समवाय यह छःही पदार्थ हैं और परस्पर भिन्नहैं अर्थात् जैसेअश्व मनुष्य गौः यहअत्यंत भिन्न हैं तैसे द्रव्यादि भी परस्पर भिन्न हैं और जितना जगत् है इन छःही पदार्थोंके अंतरभूत है इनसे अतिरिक्त कोई पदार्थ नहींहै सो यहभी तिनकी मिथ्या कल्पना है जो छःही पदार्थहैं इनसेअधिक नहींहै इसमें कोई प्रमाण नहीं है क्योंकि जैसे तिन्होंने छःही कल्पना कर रक्खे हैं ऐसे हम और भी सैकड़ों पदार्थ कल्पना कर लेवेंगे और द्रव्य के अधीन गुणकर्म सामान्य विशेष समवायको मानतेहैं और द्रव्य का धर्म मानतेहैं सोभी नहींबनता क्योंकि जो पदार्थ अत्यंत भिन्न होते हैं वह एक दूसरेके अधीन नहींहोते अर्थात् एक दूसरेके आश्रित नहीं होते जैसे लोकमें मनुष्य पक्षी पशु घासादि परस्पर भिन्नहैं परंतु एकदूसरेके अधीन नहींहैं अर्थात् आश्रित नहीं है इसी प्रकार द्रव्यादिकों की अधीनता गुणादिकों को भी नहीं बनती यदिकहो द्रव्यके अभाव होनेसे गुणादिकों का भी अभाव होजाताहै और द्रव्य के भाव होनेसे गुणादिकोंका भी भाव होताहै इसरीतिसे गुणादिकों से द्रव्याधीनता बनती है सोभी नहीं हो सक्ता क्योंकि जैसे एकही पुरुषमें अनेक अवस्था विशेष प्रतीत होती हैं मनुष्य ब्राह्मण श्रोत्रिय दानी युवा स्थूल कृश पुत्र पौत्रादि तैसे एकही द्रव्य में अवस्था भेद करके अनेक प्रकार की गुणादि अवस्था विशेष प्रतीत होजावेगी और यदि गुणादिकों की द्रव्य में तादात्म्य कल्पना करोगे तब वेदांत सिद्धांतका प्रवेश हो

जावेगा तुम्हारा सिद्धांत जातारहेगा इसलिये द्रव्यसे गुणादिकों का भेद किसी रीतिसे भी सिद्ध नहींहोसक्ता और निरवयव दो परमाणुवोंकेसाथ सावयव द्व्यणुकका संबंध भी नहीं बनता जैसे निरवयव आकाशके साथ पृथिवीका संबंध नहींबनता और द्व्यणुकजोहै सो निरवयव दो परमाणुवों का समवेत नहीं होसक्ता अर्थात् समवाय संबंध करके परमाणुवोंमें नहीं रहसक्ता जैसे निरवयव आकाशमें पृथिवी सावयव संबंध करके नहीं रहसक्ती (प्रश्न) यदि कार्य कारण द्रव्यका समवाय संबंध नहीं मानोगे तब कार्य कारण के संबंध के बिना आश्रित आश्रय भाव व्यवहारभी नहीं होगा तथाच आश्रित आश्रय व्यवहार की सिद्धिकेलिये तिन का समवाय संबंध मानो (उत्तर) कार्य कारणका अभेद होने से आश्रित आश्रयभावही नहीं बनता और कार्य कारणका भेद अथवा आश्रय आश्रयिभाव वेदांत मत में स्वीकृत नहींहै (प्रश्न) कार्य कारणका आश्रय आश्रित व्यवहार कैसे होगा (उत्तर) कल्पित भेद से आश्रय आश्रयि व्यवहारहोगा क्योंकि कारणकी अवस्था मात्रही कार्यको हम स्वीकार करते हैं औरअनुमान प्रमाण करके भी परमाणु निरवयव सिद्ध नहीं हो सक्ते किंतु सावयवही सिद्धहोतेहैं सो दिखातेहैं परमाणु जोहैं सो सावयवहैं अल्प होनेसे अर्थात् परिछिन्न परिमाणवाला होनेसे घटवत् जैसे घट परिछिन्नहै परिमाण वाला है सो सावयव भी है तैसे परमाणुभी परिछिन्नहैं तिनको भी सावयव मानो और यदि परमाणुवों को

सावयव नहीं मानोगे तब परमाणुवों का दिशादिकों से भेद भी नहीं सिद्ध होगा और जब परमाणु परिछिन्न हुये तब जितनी दिशाहैं तिनके साथ उतनेही अवयवों करके परमाणुवों का संबंध होगा और संबंध बिना अवयवों के बनता नहीं तब सावयव होजावेंगे जब सावयव हुये तब तुम्हारा जो सिद्धांत जो निरवयवत्व और नित्यत्व है सो जातारहेगा (प्रश्न) जगत् में कहीं कर्त्ता में उपादान कारणता नहीं देखा है किंतु बिचित्र मंदिरादिकों की उत्पत्ति में निमित्त कारणता देखी है और मृदादिकों में उपादान कारणता देखी है तैसे परमाणुवोंमें भी उपादान कारणता होगी और ईश्वरमें निमित्त कारणता बनजावैगी (उत्तर) जगत् में एककर्त्ता में कहीं निमित्त कारणता भी नहीं देखी मंदिरादिकों की उत्पत्तिमें अनेक कर्त्तामें निमित्त कारणता देखी है और घटादिकोंकी उत्पत्ति में अनेक चक्र चीवरादिकों में निमित्त कारणता देखी है इस लिये यह तुम्हारा बिषम दृष्टांतहै और अनेक परमाणुवोंके उपादान मानने में महान् गौरवता है किंतु एक ईश्वरकेही उपादान मानने में अतिलाघवता है और परमाणुवों की प्रेरकता भी ईश्वरमें नहीं बनती क्योंकि परमाणुवों के साथ ईश्वरका कोई सम्बन्ध नहीं है दोनों निरवयव पदार्थोंका कोई संयोगादि संबन्ध बनतानहीं और बिना सम्बन्धके प्रेरकता नहीं बनती और प्रेरकता के बिना संयोगादिकों का अभावहोने से सृष्टिका भी अभाव होजावेगा इसलिये वैशेषिकका मत सर्वथा अ-

संगतहै अतएव श्रेष्ठ पुरुषों करके त्यागने योग्यहै अब पाशुपत मतवालों का मत दिखाते हैं॥ कार्य १ कारण २ योग ३ विधि ४ दुःखांतः ५ ये पांचही पदार्थ पशुमति ईश्वरने जीवरूप पशुओंके लिये उपदेश किये हैं और पशुपति ईश्वर जगत्का निमित्त कारणहै महदादि उपादान कारण हैं अभिन्न निमित्त उपादान कारणता ईश्वरमें नहीं बनती ऐसा इनका सिद्धांत है सो इनका मतभी समीचीन नहीं है क्योंकि निर्मूलक है प्रथम तो इनके मतमें ईश्वरके स्वरूपकाही निर्णय नहीं होसक्ता यदि कहो पशुपति उक्तशास्त्रसेही निर्णय होजावेगा सो नहीं बनता क्योंकि पशुपति उक्तशास्त्र वेदमूलक नहीं है अर्थात् इस शास्त्रका कोई मूलभूत मंत्रवेदमें नहीं मिलतेहैं जो पांच पदार्थोंकोकहैं जो पशुपति को ईश्वर प्रतिपादनकरैं और यदि कहो पशुपतिका आगमही मूल प्रमाणहै सो भी नहीं बनता क्योंकि प्रथम पशुपति आगममें प्रमाण होलेवै तब वेदमूलकताका निश्चय होवै और जो वेदमूलकताका निश्चय होलेवै तब पशुपति आगममें प्रमाणका निश्चय होवै इसरीतिसे अन्योन्याश्रय दोषआताहै इसलिये यहभी मत वेदबाह्य होने से त्यागने योग्य है (अबनारदपंचरात्र) मतको दिखाते हैं एकही वासुदेव निरंजन ज्ञानस्वरूप परमात्माने चारमूर्त्तिको धारण किया है वासुदेवमूर्तिको संकर्षण मूर्त्तिको प्रद्युम्न मूर्त्तिको अनिरुद्धमूर्त्तिको और वासुदेवमूर्त्ति करके तिसकी ईश्वर संज्ञाहै और संकर्षण मूर्त्तिकरके तिसकी जीव संज्ञाहै और प्रद्युम्न मूर्त्तिकरके

तिसकी मनसंज्ञाहै और अनिरुद्धमूर्त्ति करके तिसकी अहंकार संज्ञा है और बासुदेव कारण है और संकर्षणादि तिसके कार्य्यहैं अर्थात् वासुदेव ईश्वरसेही संकर्षणादि जीव उत्पन्न होते हैं तिस संकर्षणसे प्रद्युम्ननाम मन उत्पन्न होता है तिससे अनिरुद्ध नामक अहंकार उत्पन्न होता है और पूजादिकों करके योगकरके क्षीण क्लेश होकर जीवको तिस परमेश्वरकी प्राप्ति होती है इन के सिद्धान्त में चारही पदार्थहैं यद्यपि अभिन्न निमित्त उपादान कारणको यह मानतेहैं तथापि और बहुत से अंशोंमें इनका मत वेद बिरुद्धहै सो दिखाते हैं यद्यपि एकही परमेश्वरकी अनेकरूप करके स्थितिको हममानतेहैं परंतु जीवकी उत्पत्तिको हमनहीं मानते क्योंकि यदि जीवकी उत्पत्तिको मानोगे तब जीवमें अनित्यता रूपदोष आवेगा और मोक्षका भी अभाव प्रसंग होजावेगा क्योंकि ऐसा नियम है कि जो उत्पत्ति वाला होताहै सो अवश्यनाश्य होता है और कर्मों की भी निष्फलताहोगी भोक्ताके अभाव होनेसे और मुक्तिकाभी अभाव प्रसंगहोगा और जीव कर्त्ता से मनरूपी करणकी उत्पत्ति भी नहींहोसक्ती और न कहीं देखी है और लोक में भी छेदन क्रियाके कर्त्ता से छेदन क्रिया के कारण कुठार की कहीं उत्पत्ति नहीं देखी किंतु पदार्थान्तर लोह आदिकों से देखीहै और यदि संकर्षणादिकों को जीव नहीं मानोगे किंतु ईश्वर मानोगे तब चारईश्वर मानने पड़ेंगे और अनेक ईश्वर मानना यह भी वेद विरुद्ध है और गौरव भी होगा और ब्रह्मासेलेकर स्तम्भपर्यन्त

यह संपूर्ण ईश्वर की मूर्त्ति हैं (सर्वंखल्विदंब्रह्म) इस श्रुति प्रमाणसे और इनकेमतमें वेदकी निंदाभी लिखी है (चतुर्वेदेषुपरंश्रेयोऽलब्धाशांडिल्यइदंभागवतशास्त्र मधीतवान्) चारों वेदों में अपने कल्याण को न लाभ करके शांडिल्य ऋषिपश्चात् इसभागवत् संबंधी शास्त्र का अध्ययन करके कल्याण को पाताभया इत्यादि वेद की निंदाके वाक्य भी इनके शास्त्र में लिखेहैं इसलिये इनकामत भी श्रेष्ठ पुरुषों को त्यागने योग्यहै निरीश्वर सांख्यका मत पूर्व खंडन करआये हैं अब सेश्वरसांख्य और योगी के मतको दिखातेहैं (प्रश्न) प्रकृति पुरुष का अधिष्ठाता केवल ईश्वरही जगत्का निमित्त कारणहै किंतु ईश्वर में उपादान कारणता नहींहै और प्रधान ईश्वर पुरुष यह तीनहीं पदार्थहैं औरपरस्पर विलक्षण हैं अर्थात् भिन्नभिन्न स्वरूपवाले हैं इनसे अधिकपदार्थ नहीं हैं (उत्तर) प्रधान पुरुषका आश्रयणकरके ईश्वर में जगत्की कारणता नहीं बनती क्योंकि हीन मध्यम उत्तम भावकरके प्राणियों को उत्पन्न करनेवाले ईश्वरको रागादि दोषोंकी प्राप्तिहोगी अस्मदादिकों की सदृशता होनेसे अनीश्वर होजावेगा और यदि कहो कर्त्ता में उ-पादानता कहीं नहीं देखी तब विषमकारामें भी ईश्वरता कहीं नहीं देखी और निर्दोषता भी नहींदेखी क्योंकि जो विषमकारी होगा वह सदोषहोगा तब जगत्का कर्त्ता भी सदोष होजावेगा (प्रश्न) प्राणियों के कर्मों करके प्रेरितहुआ ईश्वर प्राणियों के विषमफलको करेगा कुछ अपनी इच्छासे नहीं करैगा इसलिये कोई दोष नहीं है

जड़कर्मों में प्रेरकता बनती नहीं है (प्रश्न) ई-
(उत्तर) जड़कर्मों में प्रेरकता बनती नहीं है (प्रश्न) ई-
श्वरकरके प्रेरित कर्म ईश्वरको प्रेरणाकरेंगे (उत्तर)जब
कि ईश्वरको कर्म प्रेरणाकरें तबईश्वर प्रवर्तकहोवै और
जो ईश्वर प्रवर्तकहोवै तब कर्म प्रेरणाकरें इसरीति से
अन्योन्याश्रयदोष आवैगा और तुम्हारे मत में ईश्वर
उदासीन है तिसमें प्रवर्तकता बनती नहीं और प्रधा-
नादिकों के साथ सम्बन्ध के बिना ईश्वरकी प्रेरणा भी
नहीं बनैगी इसलिये कोई सम्बन्ध तुमको मानना प-
ड़ेगा सो यदि संयोग संबंध मानोंगे तबवह नहीं बनेगा
क्योंकि प्रधान पुरुष ईश्वर तीनोंको सर्वगत निरवयव
तुमने मानाहै सो निरवयवों का संयोग बनतानहीं और
समवाय भी नहीं बनेगा क्योंकि समवाय संबंध आश्रय
आश्रयिभावमें होता है जैसे घट कपालका समवाय सं-
बंधहै तहां आश्रय आश्रयिभावभी है और यहां प्रधान
पुरुष ईश्वरोंका आश्रय आश्रयिभाव का निरूपण नहीं
होसक्ता और किसी संबंधकी कल्पना नहीं करसक्ते हो
क्योंकि ईश्वरकरके प्रेरित जो प्रधान तिसका कार्य यह
जगत् है जबकि प्रथम ऐसा सिद्ध होलेवै तब पीछे संबंध
की कल्पनाहोवै सो तो अभीतक सिद्धनहीं है इसलिये
प्रधान पुरुष ईश्वरका आश्रय आश्रयिभाव संबंधनहीं
बनता (प्रश्न) तुम्हारे ब्रह्मवादि के मत में भी कोई सं-
बंध नहीं बनेगा (उत्तर) हमारेमत में माया और ब्रह्म
का कल्पित तादात्म्य संबंध बनता है इसहेतुसे कोई
दोष नहींहै और तुम्हारा मत सदोषहै इसलिये त्यागने
योग्यहै (शिष्यप्रश्न) अभिन्न निमित्त उपादानकारण

तामें आपनेकिसी श्रुतिका प्रमाण नहीं दिखायाहै और श्रुति प्रमाणके बिना माननीय कैसेहोगा (उत्तर) पूर्वही श्रुतिका प्रमाण दिखादिया है पुनः और श्रुतिको भी दिखादेतेहैं (यथोर्णनाभिःसृज्यतेगृह्णतेचयथापृथिव्या मोषधयः सम्भवन्तियथासतःपुरुषात्केशलोमानितथा क्षरात्सम्भवतीहविश्वम् १) ऊर्णनाभिः नामलूकातंतु एककीट विशेषका है जैसे लूकातंतु अपने में से तंतुवों को निकासकर अपनेमेंहीं तिनका लय करलेता है और जैसे पृथिवीमेंसे व्रीहियवादि उत्पन्न होकर पुनः पृथिवी में लय होजाते हैं जैसे जीवतपुरुष से केश लोमादि उत्पन्न होते हैं तैसे अक्षर जो परमात्मा तिससे संपूर्ण जगत् उत्पन्न होकर पुनः तिसी में लयभावको प्राप्त होजाताहै इस श्रुति प्रमाणसे ईश्वरमें अभिन्न निमित्त उपादान कारणता सिद्धहै (प्रश्न) लूकातंतुका दृष्टांत नहीं बनता क्योंकि लूकातंतुका जो जड़ शरीरहै सोई तंतुवोंका उपादान कारण है और चेतन निमित्तकारण है इस रीतिसे निमित्त कारणताही ईश्वरमें सिद्ध होती है (उत्तर) लूकातंतु नाम केवल तिसके शरीरका नहीं है यदि केवल शरीरकाहो तब मृतक लूकातंतुके शरीर सेभी तंतु उत्पन्न होनेचाहिये सोतो नहीं होते और केवल शरीर अभिमानी चेतनका भी नहीं है क्योंकि केवल चेतनमें शरीरके बिना क्रिया नहीं होती इसवास्ते शरीर विशिष्ट चेतनका नाम लूकातंतु है तैसे केवल मायाका नामभी ईश्वरनहीं है क्योंकि मायाजड़है और केवल चेतनका नामभी ईश्वर नहीं है क्योंकि मायासे

रहित चेतनका नाम शुद्ध निर्गुण ब्रह्म है तिसमें फुरणा नहीं है किंतु माया विशिष्ट चेतनका नाम ईश्वरहै सो तिसमें उपादान निमित्तकारण ता बनसक्ती है इस में कोई दोषनहीं है और लूकातंतुका दृष्टांत भी बनजावेगा (प्रश्न) भक्तिको अंतःकरणकी शुद्धिका सुखेन साधन कहा और भक्तिका स्वरूप नहीं कहा विनाजाने भक्ति के स्वरूपके श्रद्धा और पुरुषार्थता कैसे होगी इसलिये भक्तिका स्वरूप अवश्य कहना चाहिये (उत्तर) भक्ति का स्वरूप शांडिल्यमुनि के सूत्रकरके दिखाते हैं(प्रश्न) पूर्व आप तिनका मतखंडन करआये अब तिनके मत के सूत्रका क्योंकर प्रमाणदेते हैं (उत्तर) सर्व अंश में सर्वमतों के साथविरोध कदाचित् भी नहींहोसक्ता किंतु जितने अंश में विरोध होता है तितना अंश त्यागने योग्य होताहै और जितने अंशमें बिरोधनहीं है तितने अंश स्वीकार करने योग्य होते हैं इसलिये तिसका दृष्टांत देना उचितहै सूत्र (सांपरानुरक्तिरीश्वरे) संपूर्ण संसारके बिषयों में प्रीतिको त्यागकर ईश्वरमेंही परम प्रेम करने का नामभक्ति है सो भक्तिशास्त्रों में अनेक प्रकारकी कही है सो तिनमें से जो भागवत में भगवान् कपिल देवने देवहूती के प्रतिगुणों के भेदकरके सगुण भक्ति तीनप्रकारकी कही है तिसको प्रथम दिखाते हैं (अभिसंधाययद्धिंसांदंभंमात्सर्यमेववा संरंभीभिन्नदृग्भावंमयिकुर्यात्सतामसः १) शत्रुके बधरूपी हिंसाका मन में संकल्पकरके और दंभमात्सर्य करके युक्तक्रोधी और भेददर्शी पुरुष जो भक्तिको करताहै तिसका नाम ता-

मसभक्ति है १ (विषयानभिसंधाययशऐश्वर्यमेववा अ-र्चादावर्चयेद्योमांपृथग्भावःसराजसः २) जो भेददर्शी पुरुष मन में विषयोंकी और ऐश्वर्य की प्राप्तिका संकल्प करके जो पाषाणादिकों में मुख्य परमेश्वर की भक्ति करताहै तिसका नाम राजसी भक्ति है २ (कर्मनिर्हार मुद्दिश्यपरस्मिन्वातदर्पणम् यजेद्यष्टव्य मितिवापृथग्भावःससात्त्विकः३) जोपुरुषपापोंके क्षयकासंकल्पकरकेऔर परमेश्वरमें कर्मोंको अर्पणकरताहै यहहमको पूजनकरने योग्यहै इसबुद्धि करके पूजन करता है भेददर्शी होकर तिसका नामसात्त्विक भक्ति है और निर्गुण भक्ति एकही प्रकारकी है (मद्गुणश्रुतिमात्रेण मयिसर्वगुहाशये मनो गतिरविछिन्नायथागंगाऽम्भसोंबुधौ ४) भगवान् कहते हैं संपूर्ण पुरुषोंके हृदयरूपी कंदरामें स्थित जो मैंहूं सोमेरे गुणोंके श्रवणमात्रकरके मनकीगतिका विछेद होजाना अर्थात् मनकाचलनेसे रहितहोजाना जैसे गंगाकाजल समुद्रमें जाकर फिरकहीं गमननहीं करता अचल होजाताहै तैसे मेरे में मनका स्थिर होजाना इसीका नाम निर्गुण भक्तिहै यह चतुर्थ सर्वसे उत्कृष्टहै ४ और गीता में भी भगवान् ने अर्जुन के प्रतिकहा है (अपिचेत्सुदुराचारोभजतेमामनन्यभाक्साधुरेवसमंतव्यः सम-ग्व्यवसितोहिसः ५ क्षिप्रंभवति धर्मात्माशश्वच्छांतिंनि गच्छति कौंतेयप्रतिजानीहिनमेभक्तः प्रणश्यति६) भगवान्कहतेहैं हे अर्जुन यदि अति दुराचारी पुरुष भी होवै परन्तु सबदुराचार को त्यागकरके अनन्य चित्त होकर अर्थात् और देवतांतर में भक्तिको त्यागकर सु-

भ्फपरमेश्वरकी शरणको प्राप्तहोकर जो मेरा स्मरण क-
रताहै तिसको साधुही जानना क्योंकि तिसने उत्तम
निश्चय किया है ५ सो पुरुष शीघ्रही धर्मात्माहोजाता
है और नित्य पद जो मोक्ष तिसको प्राप्तहोताहै हे कौं-
तेय तुमजाकर ब्राह्मणोंकी सभा में ऐसी प्रतिज्ञा करो
कि परमेश्वर का भक्त कदाचिद् भी नाशकोनहीं प्राप्त
होताहै ६ पूर्व गुणों के भेद से भक्तिका भेद कहा अब
स्वभाव के भेद से नौप्रकारकी परमेश्वरकी सगुण भक्ति
को दिखाते हैं (भागवत ॥ श्रवणंकीर्त्तनं विष्णोस्मर
णंपादसेवनम् अर्चनंवंदनंदास्यं सख्यमात्मनिवेदनम्)
विष्णुकी कथाका श्रवणही करते रहना विष्णुके गुणों
का कीर्त्तन करना विष्णुका स्मरण करना विष्णुका पाद
सेवन करना विष्णुका पूजन करना विष्णुमें दास्यभाव
रखना विष्णुकी वंदनाही करना विष्णुमें सखाभाव रख-
ना और विष्णुकोअपना सर्वस्व निवेदन करना तिनमें
से परीक्षित विष्णुकी कथाओंका श्रवणकरके मुक्तभये १
और शुकदेव गुणोंकाही गानकरतेभये २ और प्रह्लाद
विष्णुका स्मरण करने वाले भक्तहुये ३ और विष्णु के
चरणोंकी सेवाकरने में लक्ष्मीभई ४ और पूजनकरने में
पृथुराजा भये ५ और वंदना करने में अक्रूरभये ६ और
दासभावकरने वाले हनुमान्जी हुये ७ और सखाभाव
करने हारे अर्जुन हुये ८ और सर्वस्व अर्पण करनेमें
बलिभक्तहुये ९ ये सब इसनव प्रकारकी भक्तिसे उत्तम
गतिको प्राप्तहुये और नारदीय उपनिषद् में भी ब्रह्माने
नारदजीकेप्रति (हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे हरे

कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे १) ये षोड़श नामों वाला मंत्र चित्तशुद्धि का हेतु उपदेश किया है और फिर नारदजीने प्रश्न किया इसकी विधी क्या है तब ब्रह्माजीने कहा इसकी कोई विधिनहीं पवित्र हो अथवा अपवित्र हो परमेश्वर के नामों का उच्चारणही पापोंको नाशकरदेताहै और अन्यत्र भी कहाहै (चक्रायुधस्यनामानिसदासर्वत्रकीर्त्तयेत् नाशौचं कीर्त्तने तस्यसपवित्र करोयतः २) चक्रायुधनाम विष्णुका है तिसके नामोंका कीर्त्तन सदैव सर्वत्रकरै तिसके नामों के कीर्त्तन करने से अपवित्रता नहीं रहती क्योंकि विष्णुका नामही पवित्र करने हाराहै पुनः नारद ने पूछा विशेष करके किसकी भक्तिकरनी उचितहै तब ब्रह्माजी ने कहा विष्णुकी अथवा महादेवकी जिसमें रुचिहो तिसकी भक्तिकरै परंतु भेद बुद्धिको त्यागकरके क्योंकि नारदीय पुराण में इनका अभेद कहा (हरिरूपी महादेवो लिंगरूपीजनार्द्दनः ईषदप्यंतरं नास्ति भेदकृन्नरकंव्रजेत् ३) विष्णुरूपी महादेवहैं लिंगरूपी जनार्द्दन हैं इनमें जो किंचित् भी भेद बुद्धि करता है वह नर नरकको प्राप्तहोता है॥ और स्कंद पुराण में भेद बुद्धि वालेकी निंदाभीकीहै (वेदवाह्येनमार्गेन पूजयन्तिजनार्द्दनं निंदंतिशंकरं मोहात्पाखंडोपहताजनाः ४) जो पुरुष वेद वाह्य मार्गकरके जनार्द्दन का पूजनकरते हैं और मोहके वश्यहोकर शंकरकी निंदाकरतेहैं पाखंडकरके हतहुये वह पुरुष हैं ५ (ब्रह्माणंकेशवं रुद्रं भेदभावेनमोहिताः पश्यंत्येकंनजानंति पाखंडोपहता-

जनाः ५) पाखंडकरके हतजो पुरुष हैं सो ब्रह्मा और केशव और रुद्र इनको भेद बुद्धिकरके देखतेहैं किंतु अभेद बुद्धि करके नहीं देखते वह पुरुष पुनः पुनः नरक की पीड़ाको प्राप्तहोतेहैं इत्यादि अनेक वाक्य हैं भेद-वादीकी निंदाके इसप्रकार भक्तिकेस्वरूपको दिखादिया अब भक्ति के महत्त्व को भी यत्किंचित् दिखा देते हैं (नवासुदेवभक्तानामशुभंविद्यतेक्वचित् जन्ममृत्यु जरा व्याधि भयंनैवोपजायते १३) वासुदेवके भक्तों को अशुभ कदाचिद् भी नहीं होताहै और जन्म मृत्यु जरा व्याधि भय यहभी कदाचित् नहींव्यापतेहैं (हरिर्हरति पापानिदुष्टचित्तैरपिस्मृतः अनिच्छयापिसंस्पृष्टो दहत्येवहिपावकः १४) यदि दुष्ट चित्त वाले भी हरिके नामों का स्मरण करैं तब उनके भी पापों को हरिकानाम नाश करदेता है जैसे दाहकी इच्छा नहीं भी हो परंतु अग्नि के स्पर्श होनेसे अवश्य वह्नि दाह करदेतीहै तैसेहरि के नाम भी अवश्य पापों को नाश करदेते हैं (शमायाऽलंवह्निस्तमसोभास्करोदयः शांत्यैकलेरघौघस्यनामसंकीर्त्तनंहरेः १५) जैसे वह्नि के शांत करनेमें जलही समर्थ है और जैसे अंधकारके नाशकरनेमें सूर्य समर्थ है तैसे कलिके पापों के नाश करने में हरिकाकीर्त्तनही समर्थ है १५ (गंगास्नानसहस्रेषुपुष्करस्नानकोटिषु यत्पापंविलयंयातिस्मृतेनश्यतितद्धरौ १६ कलिमलमषमत्युग्रं नरकार्तिप्रदंनृणाम् प्रयातिविलयंसद्यःसकृत्कृष्णानुसंस्मृतेः १७) गंगाजीमें सहस्रबार स्नान करनेसे और पुष्करराज में सहस्रबार स्नान करने से जो पाप नाश

को प्राप्त होजाते हैं सो पाप केवल हरिके स्मरणमात्र से नाशको प्राप्त होजाते हैं॥ और पुरुषों को नरक की पीड़ा देनेहारे जो कलिके पापहैं सोपाप एकवार एकाग्र चित्त करके कृष्णके स्मरण सेही दूर होजाते हैं (मुहूर्त्तमपियोध्यायेन्नारायणमतंद्रितः॥सोपिसिद्धिमवाप्नोति किं पुनस्तत्परायणः १८) जो पुरुष एक मुहूर्त्तमात्र भी नारायणको निरालस होकर स्मरण करता है सो भी सिद्धि को प्राप्त होजाता है और जो पुरुष प्रतिदिन परमेश्वर का स्मरण करता है तिसकी उपमाका वर्णन कोई नहीं करसक्ताहै (सर्वदासर्वकार्येषु नास्तितेषाममंगलम्॥येषांहृदिस्थोभगवान् मंगलायतनोहरिः १९) और जिनके हृदयमें मंगलरूपी भगवान् स्वयंस्थित हैं इसप्रकार के जो परमेश्वर के भक्तजनहैं तिनको अमंगल कदाचित् भी नहींहोता पूर्वोक्त युक्तियोंसे कलियुग में अंतःकरण की शुद्धिका सुगम उपाय भक्तिही सिद्ध भया अब इस प्रथम किरणके विषयोंको संक्षेपसे दोहा चौपाई में निरूपण करके समाप्त करतेहैं ॥ चौपाई ॥ जेहि की माया अति बलवारी। उदय अस्तको करनेहारी १ तिनहीं सकलप्रपंच बनायो । पुनिअपनी चातुर दरशायो २ ईश्वर कृपाकरहिंसो जबहीं। मिटै मोहमाया सब तबहीं ३ बिना भक्ति यहदूरि न होई । ताते भक्ति करो सब कोई ४ भक्ति ज्ञानकी माता कहिये । तेहिको पूत ज्ञान पुनि लहिये५॥ दोहा॥ ज्ञान बिना नहिं मुक्ति है पुनि श्रुति कहै पुकार॥ यत्न करौ तेहि में सबै जग जीवन सबद्वार १ अंतःकरण की शुद्धिके साधन कहे

अनेक ॥ तामें कछु असमै लिखे कर बिचारहरएक २ ॥ चौ०॥ अन्न शुद्धि प्रथमैही जानो । पुनद्वितीय कर्मपहि-चानो १ वेदांत महात्म्यकियो बखान । सत्य भाषण पुन फल पहिचान २ योग अंगमें सब दरशाये । पुनतिनके फलनीके गाये ३ सत्य संगत फलकियो बिचार । ईश्वर वादि दीये निस्तार ४ पुन ईश्वर सिद्धि मैं गाइयो । तिस में मत अनेकदर्शाइयो ५ सौत्रांतिक अरुपुन वैभाषिक । योगाचार चतुर माध्यामक ६ येचारों मिलिबौद्धकहावैं । भिन्नकर मत अपनो दरशावैं ७ पुन दिगंबर की आई पारी । ताके मतकी धूरउखारी ८ निरीश्वर से श्वार दोनों साखी । सहत कणाद भये सबराखी ९ योग वै-शिक दोनोंहि आये । पशुपति मतको संगहिलाये १० नारद पंचरात्र मत भारी । इनकी युक्ति सबै व्यभिचारी ११ जितने मत सब किये बखान । खंडन तिनका अस-मै जान १२ ॥ दो०॥ प्रथम किरण पूरणभयो आनँद उर न समात ॥ परमानंद स्वरूपमय जामें जग दरशात १ परमानंद असंगहै नहिं तामें जगलेश ॥ जोध्यावै तिसको सदा पावै पद निर्लेप २ ॥

इतिश्रीसिद्धांतप्रकाशनामकग्रंथेअंतःकरणशुद्धि साधनवर्णनोनामप्रथमःकिरणः ॥ १ ॥

दो०॥ बुद्धि आदि इन्द्रिय सकल जानै नहिं जहँ कोय ॥ सो साक्षी ममरूपहै लखै न मन तिहँकोय १ जिमें जग भ्रम भासियो मनो जेवनीसाप ॥ जिहँ जानै जगनाशहै परमानंद सुआप २ ॥ चौ० ॥ विरागादिक साधन हैं जेते । सोअस किरण बखानों तेते १ तिनको धारण

करिहं जबहीं। परमानंद पदपावैं तबहीं २ प्रथमै करौं विवेक विचारा। लक्षण अरु अभ्यास नियारा ३ एकहि ब्रह्म नित्यकर जानो। तेहिते भिन्न मृषा पहिंचानो ४ पूर्वोक्त साधनों करके जिसका अंतःकरण शुद्धहुआ है तिसीके अंतःकरण में विवेक आदिक उत्पन्नहोते हैं सो विवेकका लक्षण यहहै एक ब्रह्महि नित्यहै तिससे अतिरिक्त संपूर्ण जगत् अनित्यहै इसज्ञान का नाम विवेकहै और विवेकका अभ्यास योगवसिष्ठ मेंभी कहाहै (कोट्यो ब्रह्मणोयाता गताःसर्गपरंपराः॥ प्रयाताःपांशुवद्भूयः काधृतिर्ममजीवने १) करोड़ों ब्रह्म व्यतीतहोगये और अनंत सर्गोंकी परंपरा व्यतीत होगई और धूलीकी न्याहिं राजा होगये हमारे जीवने की कौन आस्था है १ (येषांनिमेषणोन्मेषौजगतांप्रलयोदयौ ॥ तादृशाःसंतिवैनष्टामादृशां गणनैवका २) जिनके नेत्रों के मूंदने और खोलने से जगतोंकी उत्पत्ति प्रलय होतीहै ऐसेप्रतापी जबनाशको प्राप्तहोगये तब अस्मदादिकोंकी कौन गिनती है किंतु कोई नहींहै २ (सुखान्येवातिदुःखानि संपदःपरमापदः॥ भवभोगामहारोगारतिरेवपराऽरतिः ३) संसारके सुख जो सो अतिदुःखरूप हैं और जितनी सम्पदा हैं सो आपदारूपहैं संसारके भोगजो हैं सोतो महारोगरूप हैं और प्रीति जोहै अप्रीति रूपहै३(शक्रोप्याक्रमतेवक्त्रंयमोपिहिनियम्यते॥ वायुरप्येऽत्यऽवायुत्वंकैवास्थाममजीवने४) जिसकाल भगवान्के मुखोंकरके शक्र जो इन्द्र सो भीचर्वण किया जाताहै और यमराजभी जिसके वशहोकर अपनी यमपदवीसे भ्रष्ट होजाताहै और वायुजोहै सो

अवायु भावको प्राप्तहोजातीहै तिसकाल भगवान्केवश्य होकर हमारे जीवनेकी कौन आस्थाहै ४ (पर्णानिजीर्णा नियथातरूणांसमेत्यजन्माशुलयंप्रयांति ॥ तथैवलोकाः स्वविवेकहीनाः समेत्यगच्छंतिकुतोप्यहोभिः ५) जैसे वृक्षोंके जीर्ण पत्ते उत्पत्तिको प्राप्तहोकर पुनः लयको प्राप्त होजाते हैं तैसेही विचारसे शून्य यह जगत्भी उत्पत्ति प्रलयको प्राप्तहोजाताहै५(कास्तादृशोयासुनसन्तिदोषाः कास्तादिशोयासुनदुःखदाहः॥ कास्ताःप्रजायासुनभंगुर त्वंकास्ताक्रियायासुननाममाया ६) कौनसी ऐसी सां-सारिक दृष्टीहै जिसमें दोष न होवै और कौनसी ऐसी दिशाहै जिसमें दुःखरूपी दाह न हो और कौनसी ऐसी प्रजाहै जिसका नाश न होवे और कौनसी ऐसी क्रियाहैं जिनमें मायाका नाम न हो किन्तु सबहिं दोषकर के ग्रस्त हैं ६ (विषंविषयवैषम्यंनविषंविषमुच्यते॥ जन्मां तरघ्नाविषया एकदेहहरंविषम् ७) विष और विषयों में अत्यंत भेद है विष एकहीशरीरको नाशकरती है और विषय जो हैं सो जन्मांतर मेंभी शरीरों को नाश करते रहते हैं ७ और मोक्ष धर्म मेंभी कहा है (श्वःकार्यमद्य कुर्वीतपूर्वाह्णेचापराह्णिकं॥ नहिप्रतीक्षतेमृत्युः कृतम स्यनवाकृतम् ८) जो कार्य कलके दिन करनाहै तिसको आज के दिनही करडाले जो कार्य तीसरेपहर करनाहै तिसको सबेरके पहर करडाले क्योंकि मृत्यु इसका मु-लाहिजा नहीं करेगा जो यह काम इसने किया है या नहीं कियाहै ८ (तंपुत्रपशुसंपन्नं व्यासक्तमनसंनरम्॥ सुप्तव्याघ्रंमहौघेव मृत्युरादायगच्छति ९)नदीके तीरपै

सोया जो व्याघ्रहै जैसे नदी तिसको अकस्मात् आकर बहालेजाती है तैसेही जो पुत्र पशु आदिकोंकरके संपन्न होकर मोहरूपी निद्रा करके सोया है तिसको मृत्यु रूपी नदी किसी कालमें अकस्मात् बहाले जावैगी ९(इदंकृतमिदंकार्यमिदमन्यत्कृताकृतं ॥ एवमीहासुखासक्तं कृतांतःकुरुतेवशे १०) यह कार्य हमने करलियाहै और यह कार्य अब करने के योग्य है और यह कार्य आधा किया है आधाबाकी है इत्यादि इच्छा करके आसक्त पुरुषको यमराज तुरंत अपने वश्य में करलेता है १० और बिचार भी तिसी पुरुषका सफल है जिस पुरुष की भोगों में दिन दिन प्रति अभिलाषा तिरस्कार को प्राप्त होती है बहुत शास्त्रोंके समूहों करके क्या प्रयोजन है इतनाही करने योग्यहै जो स्त्री आदिक भोग्यहैं तिनको बिषके तुल्य जानना चाहिये बिवेकाभ्यासका निरूपण करदिया अब विवेकसे उत्पन्न भया जो बैराग्य तिसको दिखाते हैं ॥ भोगोंकी तृष्णाका अभाव होजाने का नाम बैराग्य है और त्यागेहुये भोगों में पुनः दीनता न होनी यहही बैराग्यका फल है और काककी मल के तुल्य भोगोंका अनादर करना यहही बैराग्यकी अवधिहै और श्रुतिभी इसी अर्थको कहतीहै (परीक्ष्य लोकान कर्म चित्तान् ब्राह्मणो निर्वेद मायान्नास्त्य कृतःकृतेनेति) कर्मों करके संग्रह करे जो स्वर्गादि लोक हैं तिनको अनित्य जानकर ब्राह्मण जो विद्वान्है सो वैराग्य को प्राप्त होवै क्योंकि अकृत्य जो मोक्षहै सो कृत जो कर्म तिन्हों करके प्राप्तनहीं होती है ॥ और जब कि

जीव गर्भमें आता है वहांपर अति क्लेशताहुआ पुकारता है नानाप्रकारके अहार मैंने भोगे और नानास्तन भी मैंने पानकिये और मैं जन्मा और पुनः मृत्यु को प्राप्तहुआ अर्थात् पुनः पुनः जन्मता मरताहीरहा और नानायोनियों में और हजारों स्त्रियों के गर्भोंमें वारबार जन्मताहीरहा और अनेक माता अनेक पिता अनेक सुहृद् भी मैंने देखे परन्तु अब मैं अधोमुख होकर गर्भ में पीड़ाको प्राप्तहोरहाहूं और कृमियों करके युक्त मेरा शरीर है अर्थात् कृमिभी अत्यन्त खेददेरहे हैं जो मैंने सम्बन्धियों के निमित्त शुभ वा अशुभ कर्मकियेथे अब मैं अकेला दाहको प्राप्तहोरहाहूं और जिन सम्बन्धियों के लिये पापकर्मकिये वह अब कोई भी सहायता नहीं करताहै वहसब अपने फलोंको भोगकर चलेगये यदि अबकीबार मैं योनिसे छूटूंगा तब मैं परमेश्वरकी शरण को प्राप्तहूंगा क्योंकि परमेश्वरही कर्मरूपी बन्धन से छुड़ाकर मुक्तिका देनेहारा है इसप्रकार गर्भ में जीव विलापको प्राप्तहोकर नानाप्रकारके हाहाकार शब्दोंको करता है और नानाप्रकार की प्रार्थनाको करता है यह सब गर्भोपनिषद् में गर्भ के दुःखदिखाये हैं और शिवगीतामें भी गर्भके दुःखदिखाये हैं (गर्भेदुर्गन्धिभूयिष्ठे जठराग्निप्रदीपिते ॥ दुःखंमयाप्तंयत्तस्मात्कनीयःकुम्भिपाकजम् १) गर्भ में जीवकहताहै अति दुर्गन्धि करके युक्त और जठराग्नि करके दीपत जो गर्भ तिसमें जो मेरेको दुःखप्राप्त है तिस दुःख से कुम्भीपाक नरकका दुःख अल्प है १ गर्भकी प्राप्तिसे वैराग्यकेलिये गर्भ के

दुःखोंमें यत्किंचित् इसस्थलमें भी दिखादिये अब देहमें भी वैराग्यके निमित्त दोषदिखाते हैं (भोगानामाश्रयोदेहःसचदोषगणान्वितः॥ विण्मूत्रास्थादयोदोषायतःसंति शरीरगाः २ तस्मिन्विष्ठादिसंघातेभोक्तुंनेच्छतिबुद्धिमान्॥गर्तेविण्मतिभुंक्तेकःस्थित्वाश्वादीन्विनापुमान् ३ मूढस्तत्रभुंक्तेहिप्रत्युत्तविषयान्मुदा॥ संमूढोऽतिशिशुर्यद्वद्भुंक्तेस्वीयंमलादिकम् ४) भोगोंका अय जो देहहै सो दोषोंके समूहोंकरके युक्त है क्योंकि विष्ठा और मूत्र और अस्थि आदि सम्पूर्ण दोष इस शरीरमेंही स्थित हैं विष्ठाआदिकोंका संघातरूप जो देह इसमें बुद्धिमान् भोगों के भोगने की इच्छानहीं करता है विष्ठा के गर्त्तमें कूकरादिकोंसे विना कौन पुरुष भोक्ता है किन्तु विवेकी पुरुष कदाचित् भी नहीं भोक्ता है ३ जैसे अति छोटा और मूढ़ बालक अपने मलको भक्षण करलेता है तिसी प्रकार मूढ़पुरुष विष्ठादिकोंका संघातरूप देहमें निवास करके भोगोंको भोक्ता है ४ और व्यासवाक्य॥ (सर्वोऽशुचिनिधानस्यकृतघ्नस्यविनाशिनः॥शरीरकस्यापिकृतेमूढाःपापानिकुर्वते ५ यदिनामास्यकायस्ययदन्तस्तद्बहिर्भवेत्॥ दण्डमादायलोकोयंशुनःकाकांश्चवारयेत् ६) पूर्ण अपवित्रताका स्थान और कृतघ्न और नाशी जो शरीर है इसकेलिये मूढ़पुरुष पापोंको करते हैं किन्तु बुद्धिमान् नहीं करते हैं ७ यदि इस शरीर के भीतर जोहै तिसको विधाता बाहर लगादेता तब यह पुरुष हाथ में दण्डको लेकर कूकरादिकोंको रात्रि दिन हटाता रहता शुकदेववाक्य भी इसमें प्रमाण है (अ

मेध्यपूर्णेकृमिराशिसंकुले स्वभावदुर्गंधितमेलमध्रुवे॥ क लेवरेमूत्रपुरीषभाजने रमंतिमूढाविरमन्तिपण्डिताः ७) अपवित्रता करके पूर्ण और कृमियों के समूहों करके युक्त और स्वभावसेही दुर्गंधित और नाशी ऐसा जो यह शरीररूपी कलेवर मूत्र और विष्ठाका भाजन है तिसमें मूढ़जन स्नेह रखते हैं पण्डितजन नहीं रखते हैं॥ विष्णुपुराण (स्वदेहाऽशुचिगन्धेननविरज्येतयःपु मान्॥वैराग्यकारणंतस्यकिमन्यदुपदिश्यते८) जो पुरुष अपवित्र दुर्गंधि करके युक्त अपने शरीर से वैराग्यको नहीं प्राप्तहोता है तिस पुरुषको इससे भिन्न वैराग्यका कारण क्या उपदेश दियाजावे क्योंकि सर्व वैराग्यके का रणोंमेंसे यहही मुख्यहै इससे अधिक और कोई वैराग्य का कारण नहीं है इसलिये शरीरादिकों में भी प्रीतिका त्यागही करना उचित है (प्रश्न) इस मनुष्य शरीर को शास्त्रमें अतिदुर्लभ कहाहै जब कि दुर्लभहुआ तब इसमें भोगोंकी उपेक्षा करनी उचित नहीं है पुनः पुनः इस मनुष्य शरीरको प्राप्तहोना नहीं इसलिये भोगोंका त्यागकरना उचित नहीं है (उत्तर) (दुर्लभत्वंहिशास्त्रे षुदेहस्ययत्प्रकीर्तितम्॥ तद्भवातरणायैवनात्मत्वेनानुपे क्षया१) शास्त्रोंमें मनुष्य देहको दुर्लभत्व कथनाकिया है सो संसाररूपी समुद्रके तरनेकेलिये अर्थात् आत्मज्ञान की प्राप्तिकेलिये कुछ भोगोंके निमित्त नहीं है १ (आ त्मत्वेनचतंमत्वायोभोगार्थंसमीहते॥ देहस्यैवेहपुष्ट्यर्थंप शुतुल्यस्सनरःस्मृतः२) जो पुरुष इसशरीर को आत्मा जानकर भोगोंके निमित्त चेष्टाकरतेहैं देहकी पुष्टिकेलिये

सो नर पशुके तुल्य कथन कियेहैं ३ (बाल्याद्याअपिदेह स्यावस्थायादुःखहेतवः। ताभ्यस्तथा विरक्तःस्यादिच्छेच्च दात्मनेहितम्) बाल और यौवनादि जो देहकी अवस्था विशेषहैं सो भी दुःखोंका कारणहैं तिन अवस्थोंमें भी विरक्त होकर अपने हितकी इच्छाकरै ४ (प्रश्न) बाल्यादि अवस्थोंका सुखरूपकथन किया है क्योंकि सर्व पुरुषोंकी बालकों में प्रीति होतीहै और बालक रागद्वेषादिकोंसे रहित भी होते हैं तब फिर बाल्य अवस्था को दुःखरूप कैसे बनता है (उत्तर) बाल्य अवस्था में भी अनेक दुःख होतेहैं जिनको बालक निरूपण नहीं करसक्ते और योगवाशिष्ठ में रामचन्द्र ने कहाहै (बाल्यंरम्यमितिव्यर्थबुद्धयःकल्पयन्तिये॥ तान्मूर्खपुरुषान् ब्रह्मन्धिगस्तुहतचेतसः ५ शैशवेगुरुतोभीतिर्मातृतः पितृतस्तथा ॥ जनतो ज्येष्ठबालाच्चशैशवंभयमंदिरम् ६) बाल्य अवस्था बड़ी रमणीक है इसप्रकार जो पुरुष व्यर्थ कल्पना करते हैं तिन मूर्खोंको धिक्कारहै हे ब्रह्मन् कैसे वह पुरुष हैं हत होगयाहै चित्त जिनका ६ बाल्य अवस्था में प्रथम तो गुरुसे भय होता है फिर माता पितासे भय होताहै और जनोंसे बड़े बालकोंसे भय होताहै इसलिये अत्यंत भयका कारण बाल्य अवस्था है ६ (दुखान्यप्यत्रलभ्यन्तेयेषांनविद्यतेसंख्या। तस्मात्ततोविरज्येतश्रेयोऽर्थीनरकादिव७) इसबाल्य अवस्थामें अत्यंत दुःख प्राप्त होते हैं जिन दुःखोंकी संख्या नहीं होसक्ती इसलिये कल्याणका अर्थी जो पुरुषहै तिसको उचितहै जो इस बाल्य अवस्थासे भी उपरतिको

प्राप्तहोवै ७ जैसे बाल्य अवस्था दुःखरूपहै तैसे यौवन अवस्था भी दुःख रूपहै सो यौवन अवस्थाके दोषों को शिवगीता में भी दिखायाहै (ततोऽथयौवनंप्राप्यमन्मथ ज्वरविह्वलः। गायत्यकस्मादुच्चैस्तुतथाकस्मात्तुवल्गति ८ आरोहतितरून्वेगाच्छांतानुद्वेजयत्यपि। कामक्रोधमदांधःसन्नकिंचिदपिवीक्षते ९ अस्थिमांसशिरास्नायुवामालांमन्मथालये। असक्तःस्मरवाणाऽऽर्त्तोआत्मनादह्यतेभृशम् १०) यौवन अवस्था में यह पुरुष बड़े गर्व करके युक्त और कामदेव करके व्याकुल होता है अकस्मात् कभी गाने लगजाता है ऊँचेस्वर से और कभी बिनाही प्रयोजन से कूदने लगजाता है और कभी बड़े वेगसे वृक्षोंपर चढ़ने लगजाताहै और कभी शांतचित्त वालोंको सताने लगजाता है काम क्रोधादिके मद करके अंधा हुआ किंचित् भी नहीं देखता ॥ और अस्थि मांस और नाड़ियों करके रचाहुआ जो स्त्रीका शरीर है सो मानो कामदेवका एक मंदिर है अर्थात् निवासका स्थानहै तिस स्त्रीके शरीरमें आसक्त होकर और कामदेवके बाणों करके पीड़ित हुआ अपने करके आपही निरंतर दाहको प्राप्त होताहै (योगवाशिष्ठ ॥ तावदेवव ल्गन्तिरागद्वेषपिशाचकाः। नास्तमेतिसमस्तैषायावद्यौवनयामिनि ३१ हार्दान्धकारधारिण्याभैरवाकारवानपि। यौवनाऽज्ञानयामिन्याबिभेतिभगवानपि २८ हर्षमायाति मोहात्पुरुषःक्षणभंगिना। यौवनेनमहामुग्धःसर्वैनरमृगः स्मृतः १२) तावत्पर्यंत रागद्वेषादि पिशाच कूदतेहैं यावत्पर्यंत यौवनरूपीरात्रि अस्तभावको नहींप्राप्तहोती है॥

यह यौवन जो है सोई एक अज्ञानरूपी रात्रिहै सो रात्रि मानो हृदय में अंधकार करनेवाली है और भयानक आकारवाली है इससे भगवान् भी भयको प्राप्त होते हैं जो पुरुष क्षणविनाशि यौवनको प्राप्त होकर मोहके वश्यसे हर्षको प्राप्त होते हैं सो महामूढ नरमृगः कथन किये जाते हैं (तेपूज्यास्तेमहात्मानस्तएवपुरुषाभुवि। ये सुखेनसमुत्तीर्णा साधोयौवनसंकटात्) रामजी कहते हैं हे साधो सोई पुरुष पूज्यहैं अर्थात् पूजने योग्यहैं सोई महात्माहैं और सोई पृथिवीपर पुरुष हैं जिन्होंने सुखपूर्वक इस यौवनको व्यतीत किया है॥ यौवन अवस्था में जैसे अनेक प्रकारके दुःखहैं तिसी प्रकार वृद्धावस्था में भी अनेक प्रकार के दुःख हैं इसलिये मुमुक्षु पुरुषों को वृद्धावस्थामें भी प्रीतिका त्यागही करना उचित है (प्रश्न) कामादि दोषही दुःखके जनकहैं सो तो जरा अवस्थामें नहीं हैं किंतु जरा अवस्था में पुत्रादि सेवा करते हैं और आनंद से बैठा रहना पड़ता है किसी प्रकारका विक्षेप नहींहोता तब किसलिये जराअवस्था की निंदा करते हैं (उत्तर) वृद्धोंके भी चित्तमें अनेक प्रकारके दोष रहते हैं और कामादि बिना विचार के नाशको प्राप्त नहीं होते हैं यदि बिनाही विचारसे कामादि नाशको प्राप्त होजावैं तब वृद्ध भी रसादि भोगों की इच्छा नहीं करें ऐसा तो देखने में नहीं आता इसलिये वृद्धावस्थामें भी कामादि नाशको नहीं प्राप्त होते हैं किंतु वृद्धोंकी भोगों में अधिक इच्छा देखने में आती है सो इच्छा भोगों के भोगने से दूर होती नहीं सो कहा है

(नजातुःकामःकामानामुपभोगेनशाम्यति। हविषाकृष्ण वर्त्तेमैवभूयएवाभिवर्द्धते१) जैसे अग्निमें हविडालनेसे अग्नि शान्तिको नहीं प्राप्त होती किंतु अधिक वृद्धिको प्राप्त होती है तैसे भोगोंके भोगनेसे कदाचित् भी भोगों की इच्छा दूरनहीं होती १ (पूर्णंवर्षसहस्रंमेविषयासक्त चेतसः। तथाप्यनुदिनंतृष्णाममैष्वभिजायते २) सहस्र बर्षोंसे आसक्तचित्त जो मैं हूं सो दिनदिन प्रतिभोगोंमें मेरी तृष्णावृद्धिको प्राप्तहोतीहै २ और विवेक चूड़ामणि में भी कहाहै (विषयाशामहापाशात्योविमुक्तः सुदुस्त्य जात्। सएवकल्पतेमुक्त्यैनान्यःषट्शास्त्रवेद्यपि ३) वि- षयों की आशारूपी पाशबड़ेदुःख करके भी त्यागी नहीं जाती तिस विषयरूपी पाशसे जो रहित है सोई पुरुष मोक्षका अधिकारी है और जिसने विषयरूपी पाशको नहीं त्यागाहै यदि वह षट्शास्त्र का वेत्ता भी है तब भी वह मोक्षका अधिकारी नहीं है (शिवगीता॥ महापरिभ वस्थानंजरांप्राप्यातिदुःखितः। श्लेष्मणापिहितोरस्को जग्धमन्नंनजीर्यति४) अत्यन्त तिरस्कार का स्थान जो जरा अवस्था तिसको प्राप्तहोकर अतिदुःखित होताहै क्योंकि छाती अत्यंत कफकरके रुकजाती है और भो- जन पचता नहीं दांत भग्नहोजाते हैं नेत्रोंकी दृष्टि मंद होजाती है कटु कड़ू वा तीक्ष्ण रसोंमें रुचिहोती है और ग्रीवा कटिभाग वातकरके भग्न होजाते हैं और हस्त पाद ऊरूपेट यह सब अंग दुर्बल होजाते हैं इसप्रकार जराअवस्थाके दोषोंको पुनःपुनः आलोचनकरके तिस में भी प्रीतिका त्यागकरना उचितहै अब शरीर में भी

वैराग्यके लिये मृत्युके दुःखोंको पुनः पुनः स्मरणकरे॥ योगवाशिष्ठादिक ग्रंथोंमें मृत्युःके दुःखोंको दिखायाहै सो दिखातेहैं जबकि यहजीव जराकरके कृशमानहोकर इस शरीरको त्यागकर देहांतरकी प्राप्तिकी इच्छा करता है तिस कालमें जैसे शकट भारकरके लदाहुआ चींचीं शब्दको करताहुआ चलता है तिसीप्रकार यहजीव भी वासनारूपी भारकरके दबायाहुआ अनंत शब्दोंको करताहुआ ऊर्ध्वश्वास होकर इस देहसे देहांतरको गमन करताहै (शिवगीता॥ हाकांतेहाधनंपुत्राःक्रंदमानःसुदारुणम्। मंडूकइवसर्पेणमृत्युनागीर्यतेनरः १ अयःपाशेन कालेनस्नेहपाशेनबंधुभिः। आत्मानंकृष्यमाणंतमीक्षते परितस्तथा २) प्राणोंके वियोगकालमें यहजीव इत्यादि शब्दोंको करताहै हाकांते हाधन हापुत्राः यमके दूतोंकरके खैंचाहुआ दारुण भयानक दुःखको प्राप्तहुआ पुकारता है जैसे मेंडक सर्प करके निगीर्यमाणहुआ पुकारता है १ काल भगवान्‌की लोहकी पाशों करके और संबंधियों की स्नेहरूपी पाशोंकरके बंधायमान हुआ आकर्षण कियाहुआ सर्व ओरसे संबंधियों के देखतेही अकेला गमन करताहैं २ (हिक्कयाबाध्यमानस्यश्वासेनपरिशुष्यतः। मृत्युनाऽऽकृष्यमाणस्यनखल्वस्तिपरायणम् ३) हिचकी रोगकरके पीड़ितहुआ और श्वासोंको लेताहुआ मृत्युकरके आकर्षण कियाहुआ तिसकालमें कोई भी इसका सहायक नहींहोता ३ (मातापितागुरुसुनःस्वजनोममेतिमायोपमेजगतिकस्यभवेत्प्रतिज्ञा ४) हे माता हे पिता हे गुरु हे पुत्र हे सज्जनो मेरेको लिये

जाते हैं बड़ाकष्ट है जिनके लिये मैंने अनेक अनर्थ किये सो इस कालमें कोई भी हमारी सहायता नहीं करता है मायाके सदृश इसजगतमें कौनकिसको जानता है ४ (एकोयदात्रजतिकर्मपुरःसरोयंविश्रामवृक्षसदृशःखलुजीवलोकः ५) अकेलाही यह जीव अपने कर्मोंको लेकर जाताहै और इस जगतरूपी वृक्षमें जीनाजोहै सो एक रात्रिके सदृशहै ५ (सायंसायंवासवृक्षंसमेताः प्रातःप्रातस्तेनतेनप्रयान्ति। त्यक्त्वाऽन्योऽन्यंतंचवृक्षंविहंगाःयद्वत्तद्वज्ज्ञातयोऽज्ञातयश्च६)जैसे पक्षी संध्यासमय वृक्षमें अपनेअपने आलयोंमें आकर निवास करतेहैं और प्रातःकाल में अपने अपने चोगोंको चलेजाते हैं परस्पर वृक्षको त्यागतेहुये इसीप्रकार ज्ञातिजन अज्ञातिजन भी इस संसाररूपी वृक्षमें आयुरूपी रात्रिभर निवास करके फिर चलेजाते हैं ६(आत्मपुराण॥द्वासप्ततिसहस्राणिवृश्चिकाएकहेलया। यथादशंतिगात्रेषु पुच्छैःसूच्यग्रसंनिभैः॥तथातज्जायतेदुःखंमुमूर्षोर्देहमोचने७ कोट्यर्द्धसहितास्तिस्रःकोट्यःसूच्यःसुतीक्ष्णकाःयादृक्शरीरिणःकुर्यस्तादृग् दुःखं मृतौनृणाम् ८) बाराहजार बिच्छूएक कालमें तीक्ष्ण सूई के तुल्य पूंछों करके जैसे मनुष्य के शरीरमें बेधनकरैं और तिनके बेधनसे जितना दुःखहोताहै तितनाही शरीरके त्याग कालमें भी दुःख होताहै ७ साढ़े तीन किरोड़ तीक्ष्ण सूइयोंको एक काल में शरीर में चुभोने से जितना दुःख होताहै उतनाही दुःख प्राणोंके वियोग काल में होताहै ८ (हस्तौपादौक्षिपंतंच भूमिष्ठंगतचेतनम्मूर्खजनास्तंतुशोचंतिकाकंकाकायथा

तुरम् ९) मरण कालमें भूमि पर पड़ा हुआ और हाथों पांवोंको पटकता हुआ मूर्च्छित होजाताहै और स्वजन जो बंधुलोगहैं सो तिसको अत्यंत शोच करते हैं जैसे दुःख करके आतुरकाकको और काक शोच करते हैं ९ (बान्धवेषुभृशंशब्दान्मुञ्चत्सुयमकिंकराः। नयंत्येनं यथाराजभृत्याजातापराधकम् १०) संबंधियोंकेरोतेहुयेही यमदूत इसजीवको लेजातेहैं जैसे चौरको राजा के दूत पकड़करलेजातेहैं १० (तएनंभर्त्सयन्त्यादावागत्यपुरतो भटाः। धिक्त्वंमनुष्यदेहस्थंपापिनंस्वात्मघातकम्॥ येन त्वयाशरीरेण नकृतंस्वहितंक्वचित् १०) मरणके सन्मुख जो पुरुषहै सो मरण कालमें मूर्च्छाको प्राप्तहोजाता है और कभी मूर्च्छा से उत्थानताको प्राप्तहोजाताहै भयानक जो यमकेदूत तिनसे भयको प्राप्तहोता है १० (परदोषास्त्वयायद्वत्सावधानेननिश्चिताः॥ सर्वदैवतथात्मा क्विक्षणमात्रंननिश्चितः ११) सो यमके किंकर इसमुमूर्षु को प्रथम आकर झिड़कतेहैं और कहते हैं कि धिक्कार है तेरेको मनुष्य शरीरधारी पापी आत्म घातीको जिसतूने मनुष्य शरीरको पाकर अपना हितनहीं किया औरोंके दोषोंको जैसे तूने सावधानता करके निश्चय किया सर्वदा कालमें तैसे आत्माको क्षणमात्र भी तूने निश्चय नहीं किया है ११ मरण के दुःखोंको निरूपण करदिया अब नरकके दुःखोंको निरूपण करतेहैं (आत्मपुराणे ॥ अनेकशतकोटीनां योजनानियमालयम्। स्वल्पेनैवसकालेननीयतेयमकिंकरैः १२ अत्रदुःखान्यनेकानि मृतानांप्रमशासनात्। भवन्तितानिकोनामव

त्कुंश्रोतुञ्चक्रःक्षमः १३) अनेकसौ किरोड़ योजन
यमकामंदिर है वहां पर थोड़ेही कालमें यमकिंकर
जीवकोलेजातेहैं १२ यमकेमंदिरमें मृतकको यमकी
सनासे अनेक दुःख होतेहैं किसकी सामर्थ्य है
दुःखोंको निरूपण करसके १३ और यमपुरीके मार्ग
डसने वाले जीव विरेह शूकरादि गृध्र आदि
करके महान् उपद्रव होते हैं और पाकविष्ठादिकों
पूर्ण नदियोंका उल्लंघनहोताहै तिन नदियोंमें
डुबोदेतेहैं और तिन नदियों में वड़े मच्छादिकों
भय होता है अग्नि शस्त्र जल पृथिवी वायु
यमपुरकेनरकप्राणियोंको दुःखका हेतुहै
पर्यंत खड्गकीधाराकेसदृशहैं पत्र जिनवृक्षोंके
केवनों में भयानक नरकोंमें बड़ेभारी दुःखोंको
तेहैं सो इसप्रकार नरक के दुःखोंको अनुभवकरके
मर्त्यलोकको प्राप्तहोतेहैं और जो पुण्य कर्मकरते हैं
पुण्यकाफल स्वर्गादि भोगकर पुनः मेघकी
इसलोकमें प्राप्तहोते हैं प्रसंग से पुण्य पापका
दिखादिया अब किंचित् संसार चक्रका स्वरूप दिखा
हैं योगतत्त्वोपनिषद् के मंत्रोंकरके (यःस्तन्यंपूर्वंपी
पिनिष्पीड्यचपयोधरान्। यस्मिन्जातोभगेपूर्वं
तेवभगेरमेत् १) जिनस्तनोंको पूर्वपानकरके जिनस्त
को निष्पीडन करके जिसभग में उत्पन्न होताहै
भगमें फिर जन्मांतरमें रमण करता है १ (
पुनर्भार्यायाभार्याजननीहिसः। यःपितासपुनःपुत्रोयः
सपुनःपिता २) जो इस जन्म में माताहै जन्मान्तर

वह भार्याहोती है जो इस जन्ममें भार्या है जन्मान्तर में सो माता होजाती है और जो इसजन्ममें पिताहै जन्मांतरमें वह तिसका पुत्रहोताहै और जो इसजन्ममें पुत्रहै जन्मांतर में वह पिता होताहै इसप्रकार इससंसाररूपी चक्रकरके घटीयंत्रकी न्याईं जीव अनेक जन्मों में भ्रमता फिरता है इसप्रकार देह में विरागके लिये संसार रूपी चक्रकी शान्तिके लिये गर्भादि दुःखों से लेकर नरक के दुःखों पर्यंत जितने दुःखहैं तिनमें सुधि पुरुष को दोषदृष्टि करनीउचितहै। अब मृत्युके चिह्नोंकोभी दिखातेहैं जिन चिह्नोंकरके जीवोंको अपनेमरणकाल का ज्ञानहोवे और परीक्षित की न्याईं कुछउपायकरै॥ दोहा॥ ध्रुवताराव अरुंधती तनुछाया पुनि जान॥ व्योममार्ग देखै नहीं जीवै वर्ष प्रमान १ कपोत गिद्धअरुकाकपुनि मुखमें धरहैं माँस॥ असुर तुल्य जिहि शिरचढ़ैं जियैनवहषटमास २ दर्पणमें यानीरमें पर नेत्रन के माहिं॥ शिर विहीन तन देखहीं मास एक मरिजाहिं ३ श्याम वरण वाला पुरुष वस्त्रधरे पुनि श्याम॥ जो देखै पुनि स्वप्न में शीघ्र जाय यम धाम ४ श्याम केश जेहि पुरुष के तिहिकर पीड़ित होय॥ जो देखिहै निज स्वप्न में यमपुर वसिहै सोय ५ श्वेत वस्त्र वाला पुरुष स्वप्न माहिं दरशाय॥ कानन सुनही शब्द को मृत्यु पहूंच्यो धाय ६॥ वैराग्यकेहेतु मृत्युके चिह्नों को दिखादिया अब भोगसे वैराग्यको दिखातेहैं संसार में मुख्य भोग तीनि हैं श्री, धन, पुत्र तीनोंमें से प्रथम स्त्रीरूपी भोग की निंदा करतेहैं वैराग्यके निमित्त और

मुमुक्षुपुरुष को उचित है जो सुंदर रूपवती स्त्री
डाकिनी से अधिक भयका कारणजाने क्योंकि
केवल दुर्बल छोटेबालकको मारती है और रूपवती
यौवन अवस्थापन्नबली पुरुषका नाशकरदेती है
लिये डाकिनीसेभी अधिक भयदायकहै(प्रश्न) वृद्ध
से भय नहीं मानना क्योंकि वहतो रूपादिकों सेहीन
(उत्तर)ऐसामतकहोस्त्रीमात्रसे भयमाननाउचितहै
किव्याघ्रीयदि वृद्धाभी हो और क्षुधाकरके आतुरभी
परंतुवहघासको कदाचित् भक्षणनहींकरे किंतु
भक्षण करैहै तैसे स्त्री यदि वृद्धा भी हो तब भी
पुरुष ने तिसके संगका त्यागही करना उचितहै
इन्द्रियग्राम बड़ा प्रबलहै विद्वानों को आकर्षण
ताहै अविद्वानोंकी कौनकथा है और मनुने भी कह
(मात्रास्वस्रा दुहित्रावा नाविविक्तासनोभवेत्॥ ब
न्द्रियग्रामो विद्वांसमपिकर्षति१)माता हो या भगिनी
या कन्याहो इनके समीप एकांत देशमें कदापि
न करै क्योंकि इन्द्रियग्राम बड़ा बलवान् है
भी आकर्षण करलेता है अविद्वानों की कौनकथा है
और व्याघ्री पुरुष का एकही शरीर नाशकरती
और स्त्री रूपी व्याघ्री अनेक जन्मों में अनेक
को नाश करती रहती है इसी कारण से व्याघ्री से
अधिक भयका हेतु स्त्रीहै और व्याघ्री दांतों से पुरु
कोभक्षण करतीहै स्त्री विनाहीं दांतोंसे किंतु योनिरू
छिद्र करके पुरुष का नाश करती है यहवार्त्ता
में लिखी है(श्रुतिः॥इपेदमदकंलिंदुमाभिगामिति)

नाम रक्त वर्णका है अदत्के नाम दांतोंसे हीन का है लिंदु नाम दुर्गंधि करके युक्त का है अर्थात् रक्त वर्ण वाली दांतहीन दुर्गंधि करके युक्त महा अपवित्र योनि रूप चिह्न करके स्त्री जो है सो पुरुषोंको भक्षणकरती है और व्याघ्री करके माराहुवा पुरुष नरकको गमन नहीं करता और स्त्री करके माराहुआ नरकको भी गमन करताहै॥ चौपाई॥ चारवर्णमें इस्त्री जोई॥ तासोंसंगकरै जनिकोई १ ऐसअशुभ दूसर नाहिं जानो॥कहैंशास्त्र सो सत्यकर मानो २ करिहैंसंग परस्त्री जबहीं॥ घोरनरक पावें पुनि तबहीं ३ जितनेहिं रोम इस्त्रि तनुमाहीं॥ भोगै नरक फरक कछु नाहीं४दो०॥वृकककूकर अरुस्यार पुनि गीधसर्प पुनिजान। इन योनिन में परत हैं जेरतपरदा रान १ (भारते॥ भगेनचर्मखंडेनदुर्गंधेनव्रणेनचे। खंडितंहिजगत्सर्वंसदेवाऽसुरमानुषम् १ तत्रमुग्धारमन्तेथे सदेवासुरमानवाः। तेषांतिनरकंघोरंसत्यमेवनसंशयः २ गौडीपैष्टीतथामाध्वीविज्ञेयात्रिविधासुरा। चतुर्थीस्त्रीसुरा ज्ञेयाययेदंमोहितंजगत३) दुर्गंधि करके पूर्ण और घाव के सदृश एक चर्मका टुकड़ारूपी स्त्रीकी भग है तिसने सहित देवतों असुरों और मनुष्यों के संपूर्ण जगत् को नाशकर दियाहै १ तिस भगरूपी चर्म खंड में मूढ पुरुष सहित देवतों असुरों औरमनुष्यों के रमण कर- ते हैं २ तीन प्रकारकी मदिरा शास्त्रकारोंने कही है एक गौड़ी जोकि गुड़की बनाई जाती है दूसरी पैष्टी जोकि यवके पिसानकी बनती है तीसरी माध्वी जोकि महुवेके फूलकी बनती है और चौथी स्त्री रूपी एक मदिरा है

जिसने संपूर्ण जगत्को मोहनकर रक्खा है यह सब से अधिक बली है क्योंकि मदिराके पानकरने से अमल होताहै और स्त्रीरूपी मदिराके दर्शन स्मरणसेही उन्मत्त होजाताहै ३ (योगवाशिष्ठे॥सत्कारोच्छ्वासमात्रेणभुजंग दलनोत्कया॥कांतयोह्रियतेजंतुःकरभ्योत्रोरगोविलात् १) कर भी नाम भल्लकी नाम करके एक जीवका है वहसर्प की बिलपर जाकर अपने श्वाससे सर्पको बिलसे खैंच कर भक्षण करजाता है तिसी प्रकार स्त्री भी अपने सत्कारादि श्वासोंकरके स्त्रीलंपट पुरुषोंके चित्तको आकर्षण करके तिनके नाशमें उत्साह करके पुरुषको अपने वश करलेती है १ (आयातूरमणीयत्वंकेवलंकल्पतेस्त्रियः। ममतदपिनास्त्यत्रमुनेमोहैककारणम् २) विना विचारसेही स्त्रीको रमणीय कल्पना करते हैं हे मुने मेरे को तो इसमें रमणीयतानहीं प्रतीतहोती है केवलमोह के वश होकर जीव स्त्रीको रमणीय जानते हैं २ चौ० नारि कुलक्षण जेहि घरहोई। तेहिजगसुखहोवैनहिंकोई १ खानपान तिसकोनहिंभावै। निशिदिन जरतै उमर विहावै २ करै सोच पुनि पुनि मनमाहीं। तजैंभजैं नहिं वनको जाहीं ३ जबलग इस्त्रिरहै घरमाहीं॥तबलग भोग इच्छा मनमाहीं ४ ताते त्यागकरौ सबकोई। बिन त्यागे सुखकबहुं न होई ५ ॥ जैसे स्त्रीकेसंबंध से पुरुषोंकोमहान् क्लेशहोतेहैं तैसेही पुत्रादिकोंके संबंधसेभी अनेक दुःखहोतेहैं इसलिये पुत्रादिकोंकी इच्छाकाभी त्यागकरना उचित है पुत्रके संबंध से जो क्लेश उत्पन्नहोतेहैं सो दिखातेहैं यावत्पर्यंत जिसके पुत्र नहीं होताहै तावत्पर्यंत

पुत्रकी चिंताकरके रात्रिदिन दग्ध रहता है और जिनके पुत्र नहींहै वह पुत्रवालोंको देखकर हृदयमें बड़े दाहको प्राप्तहोतेहैं और कहतेहैं कि इन्होंने बड़ी पुण्य की है क्योंकि इनके गृहमें पुत्रहैं और हम बड़े पापात्मा हैं जो हमारे गृहमें एकभी पुत्रनहीं है जिस उपायकरके हमारे भी पुत्रहो सो उपाय करना उचित है यत्नकरके पुत्रको उत्पन्नकरना चाहिये रात्रिदिन इसीचिंतामें रहते हैं फिरपुत्रकीइच्छाकरके यत्नकरतेहैं जोकिमोक्षके देनहारे विष्णु आदिक देवता हैं तिन से पुत्रकी याचना करते हैं जैसे कोई मूर्ख पुरुष राजासे तक्रकी याचना करै॥ और यदि तिन विष्णु आदिकों की उपासना से पुत्र उत्पन्न होकर मृत्यु होगया तब फिर तिनमें श्रद्धा को त्यागकर राजस जो यज्ञादिकहैं तिनकी उपासना करते हैं और यदि तिनकी उपासनासे पुत्र न हुआ तब पुनः ज्योतिषीके पास जाकर मुमुक्षु की तरह पूछते हैं हेविप्र जिस उपाय करके हमारे गृहमें पुत्र उत्पन्न होवै सो उपाय कहिये जब इस प्रकार पुत्रार्थी पुरुषने कहा तब तिसके वचन सुनकर ज्योतिषी ने तिसके प्रति ग्रहोंकी पूजा बतलाई जिसमें बहुत द्रव्यका खर्चहो तब पुत्रार्थी अपने मनमें विचार करनेलगे कि यह पंडित लोभी कुटिल है पूजामेंही यह तो सब धन हमारा कपट से हरलेगा इस प्रकार चिन्तना करके तिस ज्योतिषी का त्याग करदेताहै फिर अन्नादिकों का दानकरके भिक्षुकों की सेवा करता है पुत्रकी आशा करके तिनकी सेवा करनेसेभी यदि पुत्र नहींप्राप्त हुआ तब तिनकी सेवाको

भी त्यागकर पुनः प्रदोषादि व्रतोंको धारणकरताहै पुत्र की आशाकरके यदि व्रतादिकोंके करने से भी पुत्र नहीं हुवा तव वेद में श्रद्धाको त्यागकर श्मशानादिकों में जाकर तुच्छ भूत प्रेत पिशाचादिकोंकी उपासना करता है अपने द्विज भावको त्यागकर पुत्रकी इच्छाकरके पिशाचोंके उपासक नीचजातिवाले जो वतलाते हैं सो करताहै और वह नीचजाति वाले जोकि मांस मदिरादि इसको प्रसादकरके देतेहैं तिनकी आज्ञासे श्रद्धापूर्वक तिसको ग्रहणकरताहै इसप्रकार अनेकउपायों करके यदि किसी को पुत्र प्राप्त हो भी जाता है और वहुतों को अनेक उपायोंकरके भी नहीं प्राप्तहोताहै यदि किसी प्रकारसे पुत्रउत्पन्न होभीगया तव और अधिक चिन्ता होतीहै पुत्रकेजीवनकेलिये भैरव शीतलादि और तिनके वाहन जो कूकरगर्दभ आदिकहैं तिनकी पूजाभी करता है और यदि जीताभी रहा तव तिसको विद्या पढ़ने की चिंता रहती है जो मेरा पुत्र मूर्ख न हो यदि विद्या भी पढ़गया तव तिसके विवाहकी चिंता रहती है परन्तु किसीप्रकारसे विवाहभी होगया तवतिसपुत्रकी संतति की चिंतारहती है किसी प्रकारसे इसके आगे यदि वंश भी चला तव फिर तिस वंशकेजीनेकेलिये पूर्वोक्त संपूर्ण चिंता प्राप्त होती हैं यदि पुत्र पौत्र जीते भी हैं तदपि तिनके अनाचरण का भयरहता है और यदि कुकर्मी नहीं निकला परंतु विवाह होकर मृत्युहोगया तव जन्मभर तिसके रोने में व्यतीतहोताहै इत्यादि दुःखों की खानि है पुत्रकी इच्छा सो मुमुक्षु पुरुषको त्यागनी उ-

चितहै और यदि कहो यौवन अवस्थापन पुत्र सुखको देताहै यह भी नियम नहीं क्योंकि बहुत से पुत्र यौवन अवस्था में प्राप्तहोकर पिता से धन छीनलेते हैं देखिये कंसने अपने वृद्ध पिता उग्रसेन को बंदीगृहमें डालकर आप राज्य करता रहा और देवी माहात्म्य में वैश्य की कथा प्रसिद्धहै समाधि नामक बड़ाधनी वैश्य था जब तिसके पुत्र युवाअवस्था को प्राप्तभये तब संपूर्ण धन पितासे छीनकर तिसको बनमें निकासादिया और कहाभीहै(युवानःसूनवोप्येवंपित्रोःप्रायेणदुःखदाः। तथापितेषुनोप्रीतिं त्यजन्तिरागिणोजनाः १) युवाअवस्था में भी प्रायःकरके पिताको दुःखही देतेहैं तथापि रागी पुरुष तिनमें प्रीति का त्याग नहीं करतेहैं १ जैसे पुत्र दुःखका हेतुहै तैसेही और संबंधीभी दुःखके हेतुहैं तिस कारणतें बुद्धिमान् पुत्रादिकोंकी उपेक्षाकरदेवेजैसे जूकादिक शिरके बालों में जो पैदाहोते हैं तिनकी नाईं (प्रश्न) व्यास भगवान् बड़े तपकरके पुत्रको लभतेभये और कृष्णमहाराज महादेवकी उपासनासे पुत्रकोलभतेभये और ऐतरेयोपनिषद्में पुत्रको पिता का आत्मा कहाहै (सोऽस्याऽयमात्मापुण्येभ्यः कर्मभ्यःप्रतिधीयते) इसपिताका यहआत्मा पुत्ररूपहै पुण्यकर्मों करके पिता केस्थानमें स्थापितकियाजाताहै अर्थात् जिसकर्तव्यको पिताकरताहै तिसीको पुत्रभी करताहै (मंत्रः॥पतिर्जायां प्रविशति गर्भोभूत्वाऽस्वमातरम्। तस्यांपुनर्नवोभूत्वा दशमेमासिजायते १) पिता जो भर्ताहै सो अपनीभार्याकी योनि में वीर्य सिंचनद्वारा प्रवेश करताहै जबकि

पतिने तिसकी योनि में प्रवेश किया तब वह पत्नी पति की माता स्थानापन्न होगई क्योंकि पुत्ररूपकरके तिसमें अपने को उत्पन्न करने से अर्थात् नवीन रूपहोकर दशममास में उत्पन्न होता है सो इन पूर्वोक्त वाक्यों से पुत्रतो अपना आत्मा हुवा अपने आत्मा की उपेक्षा कदाचित् नहीं बनती और (स्मृतिः ॥ अपुत्रस्यगतिर्नास्ति स्वर्गेनैवनेहच ॥ येनकेनाप्युपायेनकार्यंजन्मसुतस्यवै १) अपुत्रकी अर्थात् पुत्ररहित जो है तिसकी स्वर्गलोक में और इस लोकमें गति नहीं होती इसलिये जिस किसी उपाय करके पुत्रको उत्पन्न करना उचित है (उ०) और तुमने जो श्रुतिस्मृति प्रमाणदी है जो पिताही पुत्ररूप करके उत्पन्न होता है और अपुत्रवंत्की गति नहीं है सो ऐसे अर्थको कथन करनेवाली जो श्रुतिस्मृति है सो अर्थवाद रूपहै क्योंकि स्तुति या निंदा परक जो वाक्य हैं सो तिसका नाम अर्थवाद है इसलिये इन श्रुतिस्मृति का अपने अर्थमें तात्पर्य नहीं है केवल पिता और पुत्रकी स्तुतिमें तात्पर्य है क्योंकि यदि पिताही पुत्ररूप होकर उत्पन्न होवै तब पिता का आत्मा तो एक है जिस कालमें पिताका आत्मा गर्भमें प्रवेश करजावै तिसी कालमें पिताका शरीरपात होना चाहिये क्योंकि पिताका आत्मा तो गर्भ में जारहा अब शरीर न रहना चाहिये और यह तो नहीं होसक्ता जो आधा आत्मागर्भ में चलाजावै और आधा तिसके शरीर मेंबाकीरहै क्योंकि आत्मा तो निरवयवहै तिसकाबिभाग बनता नहीं और जिसके अनेक पुत्र उत्पन्न होतेहैं वहां

पर तो तिसके आत्माके टुकड़े होतेहोते नाशही होजा-
वेगा इसलिये यह अर्थवाद रूप श्रुति है इस श्रुति का
अपने अर्थ में तात्पर्य नहीं किंतु स्तुति परकहै और
स्मृतिमें जो कहाहै अपुत्रकी गति नहीं है सो गतिशब्द
करके मोक्षका ग्रहण करतेहो या इसलोक परलोक का
सुखग्रहण करतेहो यदि गतिशब्दकरके मोक्षग्रहण क-
रोगे तब महान् दोष पडेगा क्योंकि यदि पुत्रवालोंहीकी
मुक्ति होनेलगेगी तब फिर कूकर शूकरादि सब मुक्त
होजावेंगे क्योंकि इनके बहुत से पुत्र होते हैं और ज-
ड़भरत शुकदेव बामदेवादिकों की तुम्हारे मत में मुक्ति
नहीं होगी क्योंकि इनके कोई पुत्र नहींथा इसलिये गति
शब्दकरके मोक्ष नहीं लेसक्तेहो और यदि गति शब्द
करके दोनों लोगोंका सुखग्रहण करोगे सोभी नहीं बन-
ता क्योंकि कुपुत्रोंमें व्यभिचार देखतेहैं अर्थात् जिनके
पुत्रअधर्मीहैं और द्यूतादि कर्मोंको करते हैं पिता माता
को ताड़ना करके तिनका धन छीनकर वेश्यादिकों को
देदेतेहैं और अनेक अनर्थ करते हैं तिनको पुत्र करके
दोनों लोकमें सुखनहीं होताहै इसलिये गति शब्दकरके
दोनों लोकोंका सुखनहींग्रहणकरसक्तेहो और धर्मकर के
पुत्रका लाभ होता है सो यहभी नियमनहीं है क्योंकि
शूकर कूकरादिकों के भी बहुतसे पुत्रदेखने में आते हैं
कहो तिन्हों ने कौनसाधर्म किया है और यदि कहो
जिन्होंने पूर्व मनुष्य जन्ममें धर्म कियाहै तिन्हींको फिर
मनुष्य जन्ममें पुत्रकी प्राप्ति धर्मकाफलहै सो पापयोनि
कूकरादिकों में नहीं मानाजाता और जिसने पूर्वमनुष्य

जन्ममें धर्मनहीं किया तिसको मनुष्य जन्म में पुत्र की प्राप्ति नहीं होती सो यह भी नियम नहींहै क्योंकि नीच जातिवाले अंत्यजादिकोंके अनेक पुत्र देखने में आते हैं और अंत्यजादि योनिपापका फलहै वहांपर पूर्वजन्म में धर्म करने की संभावना मात्रभी नहीं होसक्ती और यह तुम्हारा कथनभी नहीं बनता जो पूर्व मनुष्य जन्म में जिन्होंने धर्म किया है तिनको फिर मनुष्य जन्म में पुत्र होता है क्योंकि धर्मादिक पशुजन्म में होही नहीं सक्तेहैं पश्वादियोनियोंमें यदि नहींहोसक्ते तब आपकैसे कहते हैं कि जिन्होंने मनुष्य जन्ममें धर्म कियाहै तिन को पुत्रकी प्राप्ति होती है और यह भी नियमनहीं है जो मनुष्य जन्मसे अनंतर मनुष्यही योनि में जन्म होताहै और मुख्य धर्मका फल सुखहै न कि दुःख और जिन्हों ने पूर्व जन्ममें धर्म किया है तिनका उत्तम कुल में जन्म और राजलक्ष्मीकी तिनको प्राप्ति तो है परंतु तिनके पुत्र नहीं है पुत्रकी चिंतामें सदैव दग्धरहते हैं तिनके पुत्र क्यों नहीं है धर्मका फल तो तुमने पुत्र माना तब फिर राजलक्ष्मी आदिक यह सब धर्मके फल प्राप्त हैं पुत्रक्यों नहीं पुत्रभी होना चाहिये जिस हेतुसे नहीं है इसी हेतुसे तुम्हारी कल्पना वृथाहै और धर्म करके सुखका हेतुपुत्र प्राप्तहोताहै सोभी नियमनहीं है (देवाजिष्टातपस्तप्त्वाकृपणैः पुत्रगृद्धिभिः दशमासान्प रिधृत्वाजायन्तेकुलपांसनाः १) जोपुत्रकी इच्छाकरके दीनहैं तिन्होंने देवतोंका पूजन करके दशमास उदर में धारण कर फिर भी तिनके कुलमें दूषितही पुत्रउत्पन्न

होतेहैं अबदेखिये इतने धर्मभी किये फिरभी दुःखका हेतु पुत्रहुआ (प्रसक्तःपुत्रपशुषुधन्यधान्यसमाकुलः स्नेहपाशसितो मूढोनमोक्षायकल्पते २) जो पुरुष पुत्र पशु धन्य धान्य आदिकों में आसक्तहैं और स्नेह रूपी पाशों करके बंधायमानहै सो मोक्षका अधिकारी नहीं होसक्ता २ जिसप्रकार तिल कोल्हू में निष्पीड़न किये जाते हैं क्योंकि तिनमें स्नेह रूपी तेल है इसी प्रकार जिसपुरुषका स्त्रीपुत्रादिकोंमें स्नेहहै वहभी संसाररूपी कोल्हू में निष्पीड़न किया जाताहै अर्थात् पुनःपुनःजन्म मरणको प्राप्तहोताहै और जोपुत्रादिकोंके स्नेहसे शून्य है वह पुरुष निष्पीड़न नहीं कियाजाताहै जैसे वालूका जो रेताहै तिसमेंतेलनहींहै तिसका निष्पीड़न कदाचित् नहीं होता है और स्नेही पुरुष जबतक जीतारहताहै तबतक पुत्रादिकों के पोषण पालनकी चिंताकरके व्याकुलही रहताहै पूर्वोक्त दृष्टान्तसे यहसिद्धभया जो पिता के कर्मों करके पुत्रकी उत्पत्ति नहीं होती यदि पिता के कर्मों करके पुत्रकी उत्पत्ति मानोगे तब पिताके कर्मों करके पुत्रको भोग्यभी होनाचाहिये सो तो नहीं होता क्योंकि जगत्में ऐसा देखनेमें आताहै कि जोकोई एक पुरुषराजोंकेगृहमें उत्पन्नहोकर फिर भीखमांगतेहैं और कोई धनी पुरुष बहुत धन छोड़कर मृत्यु होजाते हैं पश्चात् तिनके पुत्र महानिर्धनहोजाते हैं अब तिनको निर्धननहोनाचाहिये क्योंकिपिताकेकर्मतो अतिउत्तमथे तिन्होंने वहुतसा सुखभोगाकिया पुत्रकोभी सुखहीहोना चाहिये क्योंकि पुत्रनेतो तुम्हारे मतमें पिताके कर्मका

फल भोगताहै और कोई कोई अति निर्धनों के गृहोंमें उत्पन्नहोतेहैं और तिनको राज्यादि ऐश्वर्यप्राप्तहोजाता है अबयहांपर तिनको राज्यादि ऐश्वर्य न होनाचाहिये क्योंकि तिनके पिताके कर्मों में तो थाही नहीं अब पुत्रों को क्योंहुआ और यदि पुत्रका भोग अपने कर्मों के अनुसार मानोगे तब तिसका जन्मभी अपने कर्मोंके अनुसार मानो पिता के कर्मोंको माननेका क्या प्रयोजनहै इसीविषयमें एक पुरातन इतिहासभी तुमको सुनातेहैं दक्षिणदेश में जहांपर गोदावरी और वंजरा दोनों का संगम है तिसके तीरपर एकशर्मानामकरके ब्राह्मण और सुमंगला नाम करके तिसकी भार्या दोनों निवास करतेथे वह दोनोंपुत्रकी कामना करके बहुत कालपर्यंत गोदावरी की उपसना करते भये जबकि वह दोनों वृद्धावस्था को प्राप्त भये तब एक अंधा लड़का तिसके गृह में उत्पन्न भया तबतिन दोनोंको बड़ाहर्षहुआ पश्चात् पुत्रका सब जातकर्म किया जब कि पांच सात वर्ष का हुआ तब तिसके पिताने तिसके संस्कारादि कराकर तिसको वेदपढ़ाना प्रारंभ किया कुछ काल में वह अन्धा बालक पढ़गया एक दिन तिसका पिता तिसके समीपगया तब पिताका शब्द सुनकर तिसबालकने जानलिया कि यह हमारे पिताआये हैं तब तिसने पितासे पूछा हे पिता आप जानते हो कि हम किस कर्म करके अंधेभावको प्राप्तभयेहैं तब इसप्रकारका तिसका वाक्य सुनकर पितावोला हे पुत्र जो पूर्व जन्ममें रत्नोंकी चोरी करताहै वह दूसरे जन्म में अंधाहोताहै इसप्रका-

रका पिताका वाक्य सुन वह अंधापुत्र हँसा और बोला हे पिता जन्मांतरका कारण आप किसलिये कहते हैं मैं प्रत्यक्षही कारण इसमें कहताहूं लोकमें ऐसा कहतेहैंकि कारणके जो गुणहैं वही कार्य के गुणोंको उत्पन्न करते हैं जैसे श्वेत तंतुवों का जो श्वेत रूपगुणहै सोई पट में भी श्वेतरूपको उत्पन्नकरदेताहै नीलरूपको नहीं उत्पन्नकरता तैसेही तुम अंधपितासे उत्पन्नहुआ मैं नेत्रोंवालाकैसे होसक्ताहूं किंतु कदापि नहीं होसक्ताहूं यदि तुमकहो कि हमकैसे अंधेहैंसो सुनोऐसा पुराणोंमें लिखाहै (यत्रगोदावरीदेवसिंगतावंजराजलैः।तत्रस्नानंनिवासश्चमुक्तिहेतुः सतांमतः१) जहांपर गोदावरी और वंजरा का संगमहै तहांपरका निवास और स्नानजो है सो साक्षात् मुक्तिका देनेवालाहै यहवार्त्ता श्रेष्ठ पुरुषोंकोभीसम्मतहै अर्थात् श्रेष्ठपुरुषभी ऐसामानते हैं हे पिता ब्रह्मअस्त्रको धारण करकेफिर भीतुमने एकमच्छरकोहीमारा क्योंकि साक्षात् मुक्तिके देनेवालीजो यह गोदावरी है तिसकी उपासना करके पुत्रकी तुमने प्रार्थनाकरी और हमनेलोगोंसे सुना है कि जो तुमने स्नान और अग्निहोत्रादि कर्म पुत्रकी कामना करकेकिये हैं कहो पिताकूकर शूकरादि पुत्रों की प्रार्थनानहीं करते हैं और तिनके वहुतसे पुत्र होते हैं कहो तिन्होंने कौनसा धर्म कियाहै एक क्षणमात्र सुख के लिये मनुष्य और शूकरादि भोगकरते हैं और वह क्षणमात्र भोग्यका सुखभी दोनों को तुल्यहै हे पिता जीवों की उत्पत्ति जो है सो पिता के अदृष्ट करके नहीं होती यदि पिताके अदृष्ट करके जीवोंकी उत्पत्ति

होवे तब विष्ठा के कृमि आदि जीव कैसे उत्पन्न होंगे किंतु नहीं होंगे क्योंकि वहांपर तिनके पिता आदिकों का कोई अदृष्ट नहीं है क्योंकि वह स्वेदजहैं इसवास्ते जिस जिस जीवकी उत्पत्ति होती है सो सो अपने अपने अदृष्टसेही होतीहै पिता के अदृष्टकरके नहीं होती और यदि धर्मही किया हुआ पुत्रको उत्पन्नकरदेवै तब फिर मैथुनादिकोंसे विना भी पुत्र होना चाहिये सो तो नहीं होसक्ता और जो मैथुनरूप प्रत्यक्ष कर्म करके उत्पन्न होताहै तिसमें तुम अदृष्टकारणको स्वीकार करोगे तब भोजनसे बिनातृप्तिहोनीचाहिये सोतो नहीं होतीहै तैसे हजारों वर्ष धर्म करतारहे परंतु विना मैथुन कर्मके जीवोंकी उत्पत्ति नहीं होसक्ती इसलिये जीवोंकी उत्पत्ति में धर्मकारण नहींहै किन्तु मैथुनही कारणहै और कहा भी है(अद्वैतामृतवर्षिणीमें ॥ जाताऽपिसुताःतत्रत्यजंति यस्यहीछया । तदात्मज्ञानमुत्सृज्यकिंसुतःप्रार्थितस्त्वया १)जिसआत्मज्ञानकी प्राप्तिकी इच्छाकरके उत्पन्नहुयेभी पुत्रादिकों को त्यागदेतेहैं तिस आत्मज्ञानको त्यागकर तुमने क्यातुच्छ पुत्रकी प्रार्थनाकरी(मानुषंजन्मसंप्राप्य पशुपक्षिविलक्षणं । आत्मज्योतिर्योनपश्येदेषोऽधोनाक्षि वर्जितः १) पशुपक्षियों से विलक्षण जो मनुष्य जन्म तिसको प्राप्तहोकर जो प्रकाश स्वरूप आत्मा को नहीं देखताहै सोई अंधा है नेत्रहीन अंधानहीं है (अविद्या यां निग्नानांमांसैवमधुरायते। विट्कृमिःकिंविजानातिमाधुर्यंशर्कराश्रयं २) जैसेविष्टेकाकीटशर्कराकेरसकोनहींजा नसक्ता है तैसे अविद्या में निमग्नजो पुरुषहैं तिनको

पुत्रादि विषय भोगही प्रियलगते हैं वह अमृत रूपी वैराग्य के सुखको नहीं जानसक्तेहैं इसलिये अधिकारी पुरुषको सर्वदा पुत्रादि इच्छाका त्यागहीकरनाउचितहै जैसे पुत्रादिकों का त्यागकरना अधिकारी को उचित है तैसेही धनकी इच्छाकाभी त्यागहीकरनाउचितहै जो कुछ अदृष्टवशसे प्राप्तहो तिसी में संतुष्टरहे (प्रश्न) ज्ञानकी प्राप्ति धनकरकेमतहो मोक्षतोधन करकेहीप्राप्त होगी क्योंकि जैसे विषय सुख धनकरके प्राप्तहोसक्तेहैं धनियोंको तैसे मोक्षभी एकसुख विशेषहै सो भी धन करके प्राप्तहोजावेगी और सुखकी प्राप्ति के प्रति धन को कारणता भी है और सुखत्वेन सुखएक है फिर कि-सलिये आप धनके त्याग को विधानकरते हैं (उत्तर) यहतुम्हारी शंकानहींबनतीक्योंकि तुच्छजो पुत्रादि वि-षयसोतो धनकरके प्राप्तनहीं होसक्तेहैं चित्रकेतु नाम करके चक्रवर्त्ती राजा था तिसके पुत्रनहीं होता भया सो राजाने धनकरके अनेक यत्नकिये परंतु धनकरके पुत्रको नलभताभया किंतु अंतमें नारद के वरकरके तिसको पुत्र प्राप्तभया और विश्वामित्र धनकरके ब्रा-ह्मणत्व भावको नलभता भया किन्तु तपकरके प्राप्त भया और परीक्षित राजाऋषिके शापकरके आयुके नाशको प्राप्तभया तिसके अनंत धनथा परंतु धनकरके फिर आयुको न लभता भया और जगत् में बहुत से राजा और धनी रोग करके ग्रस्त होकर पर्यंत तिन-का रोग धनकरके दूरनहीं होता और बहुतसे धनी पुत्रों से हीन होते हैं तिनको धनकरके पुत्रप्राप्त नहीं

होती और शांतनुका पुत्र चित्रवीर्य राजारोग करके ग्रस्तरहा परन्तु धनकरके तिसके रोग की निवृत्ति न भई देखिये जो तुच्छ नाशी पदार्थ हैं तिनके सुख को तो धनकरके प्राप्तनहीं हो सक्ते तब फिर नित्य सुख जो मोक्ष तिसको कैसे धनकरके प्राप्तहोवेंगे किन्तु कदाचित् भी नहीं होवेंगे और जो तुम्हारी शंका है सुखत्वेन सुख एक है सो नहीं बनती क्योंकि जिस मोक्षरूप नित्य सुखके लिये बड़े बड़े राजा राज सुख को तुच्छ जानकर त्याग देते हैं तिस मोक्ष सुखके साथ क्षणिक विषय सुखकीएकता कैसे होसक्तीहै किंतु कदापि नहीं होसक्ती है और (नप्रजयानधनेनत्यागे नैकेनामृतत्वमानशुः) न प्रजा करके न धन करके केवल त्याग करकेही अमृतत्व जो मोक्ष तिसको प्राप्त होताहै यह श्रुति भी धन करके मोक्ष की प्राप्तिका निषेध करतीहै और विषय सुखतो बिनाही धनके कूकर शूकरादिकों को भी प्राप्त होता है और जैसा आनन्द चक्रवर्ती राजा को अपनी रानी से भोग कालमें होता है वैसाही कूकरकोकूकरनीसेभी भोग्यकालमें आनन्द होताहै बिनाही धन से और यदि धन करके मोक्षहोवे तो जगत् में सब धनी मुक्तही होजावेंगे और निर्धनक॰ भी मोक्ष नहीं होगा और श्रुति धन के त्यागको कथन करती है वहभी व्यर्थ होजावेगी इसलिये धन करके मोक्ष की आशा का लेश मात्रभी नहींबनता और बृहदारण्यक में याज्ञवल्क्य की गाथा प्रसिद्ध है जिसकाल में याज्ञवल्क्यजी संन्यासके ग्रहण करने को उद्यतभये

तिस कालमें अपनी दो भार्या जो हैं मैत्रेयी और का-
त्यायनी तिनको बुलाकर कहा अब हम गार्हस्थाश्रमसे
संन्यासाश्रमको प्राप्तहोनेकी इच्छा करतेहैं और मैत्रेयी
से कहा तुम्हारे को कात्यायनी से धन का विभाग कर
देते हैं तब मैत्रेयीने कहा हेभगवन् मेरेको यदिसंपूर्ण
पृथिवी धन करके पूर्णहोवे तिस करके मैं अमृतत्व को
प्राप्तहोजाऊंगी याज्ञवल्क्य ने कहा नहीं जिसप्रकार
और धनी धन करके जीते हैं तिसी प्रकार तूभी धन
करके जीवेगी और मोक्ष की तो धन करके आशाभी
नहींहोसक्ती तब प्राप्ति कैसे होगी याज्ञवल्क्य जी धन
करके मोक्षकी आशाकाभी निषेध करतेहैं (भागवते॥
(स्तेयंहिंसानृतन्दंभःकामःक्रोधः स्मयोमदः। भिदोवैर
मविश्वासःसंस्पर्द्धाव्यसनानिच १ एतेपंचदशाऽनर्था
ह्यर्थमूलामतानृणाम्॥तस्मादर्थमनर्थाख्यंश्रेयोऽर्थीदूर
तरस्त्यजेत् २॥) चोरी हिंसा मिथ्याबोलनादम्भ पाखंड
काम क्रोध गर्व मद हर्ष फूट वैरअविश्वास स्पर्द्धा और
और परस्त्री गमनादि यहपंद्रह अनर्थ धनकी प्राप्तिसे
होतेहैं॥(धनिनोरोगिणःप्रायोदृश्यन्तेक्षुद्विवर्जिताः॥ रा
ज्यचौरादिभिर्भीताअन्योन्यंवैरिणोभृशम् ३॥) इस सं-
सारमें धनीलोगही प्रायःरोगीदेखनेमेंआते हैं क्षुधासेर-
हितराजा और चोरोंसेसदाभयमानरहतेहैं और परस्पर
धनियोंकावैरभी अत्यन्त देखनेमें आताहैइसलियेमुमुक्षु
पुरुषोंको धनकी आशाका भी त्यागही करना उचितहै
और पूर्वोक्त युक्तियों से इस लोक के भोगों का त्याग
करनाही जैसे उचितहै तैसेपरलोक स्वर्गादि भोगों का

भी त्यागही करना उचित है (प्रश्न) इस लोकके भोगों को दुःख का जनक होनेसे त्याग करना उचितहै परंतु स्वर्गादि भोग्य तो दुष्ट नहीं है क्योंकि श्रुति कहतीहै (अपामसोममम्रतामभूम) हम यज्ञमें सोमवल्ली को पान करेंगे अमर होंगे॥ (अक्षयंहवैचातुर्मासयाजिनः सुकृतंभवति)जो चातुर्मास में यज्ञ करताहै तिसको अ-क्षय अर्थात् नाश से रहित पुण्य होता है ये श्रुतियाँ स्वर्ग सुखको नित्य बोधन करतीहैं और नचिकेताने भी यमराज के प्रति कहाहै (स्वर्गेलोकेनभयंकिंचनास्ति नतत्रत्वंजरयाबिभेति उभेतीर्त्वाऽशनायापिपासेशोकातिमोदतेस्वर्गलोके) हे मृत्यो स्वर्ग लोकमें किंचित् भी भय नहीं है और तुमभी देवतों के मारणके लिये स्वर्गमें प्रवृत्त नहीं होसक्तेहो और जराकरकेभी देवता भय को नहीं प्राप्तहोते हैं और दोनों अशना पिपासा अर्थात् भूख पियास को अतिक्रमण करके स्वर्ग में आनन्दको प्राप्त होते हैं यह कठ श्रुति स्वर्ग को और स्वर्गसुखकोनिर्भय कहतीहै पुनःस्वर्गादिभोगोंकी इच्छा केत्यागकोकैसे विधानकरते हो (उत्तर॥ यथेहकर्मचितो लोकाःक्षीयतेएवमेवामुत्रपुण्यचितोलोकाक्षीयते) जै-से इस मनुष्य लोकमें कर्मोंकरके सम्पादन किये जो खेती आदिक हैं वह जैसे नाशको प्राप्त होजाते हैं तैसे पुण्यकर्मोंकरके सम्पादनकरे जो स्वर्गादि भोगहैं वह भी नाशको प्राप्त होजाते हैं यह श्रुति स्वर्ग के भोगों को अनित्यता बोधन करती है इसलिये दोनों श्रुतियों का तात्पर्य स्वर्ग सुखकी चिरकाल स्थिरता में है कुछ

स्वर्ग सुखकी नित्यता में नहीं है और महाप्रलय में ब्रह्मलोकादि सम्पूर्ण नाशको प्राप्त होजाते हैं तब फिर स्वर्गादि कहांरहेंगे जबकि स्वर्गादि नहींरहे तब तन्निवासी देवताआदि अर्थसेहीन नहींरहेंगे जबकि स्वर्गादि भोग अनित्य सिद्धभये तब तिनकी इच्छाका त्यागही करना उचितहै और स्वर्गसुख अतिशयवाला भी है अर्थात् न्यून अधिकतावाला भी है और तैतरेय उपनिषद् में मनुष्यानन्दसे लेकर ब्रह्मानन्द पर्यंत आनन्द कथनकरके पुनः तिस ब्रह्मानन्दसे भी शतगुणा अधिक आनन्द वीतराग आत्मवित्को कहा है और स्वर्गादि सुखको नाशवाला और अतिशय वाराश्रुति प्रतिपादन करती है जो श्रुति स्वर्गमें अभयको कथन करती है वह अर्थ बादपरकहै केवल स्वर्गकी स्तुतिमात्र परकहै क्योंकि इससे उत्तर श्रुतिकेसाथ विरोध भी आताहै (भीषास्माद्वातःपवतेभीतोदेतिसूर्यः ॥ भीषाऽस्मदग्निश्चेन्द्रश्चमृत्युर्धावतिपञ्चमः १) इस परमात्मा के भयसे वायु जो है सो रात्रि दिन बहती है अर्थात् चलती रहती है, और इस परमात्माके भयसे प्रतिदिन सूर्य उदय अस्तको प्राप्तहोताहै और इस परमात्माके भयसे अग्नि और इन्द्र और मृत्यु जो पंचम हैं सो दौड़ते रहते हैं क्षणमात्र भी स्थितिको नहीं प्राप्त होते हैं यह श्रुति सम्पूर्ण देवतादिकोंको परमात्माका भय प्रतिपादन करती है इसकेसाथ पूर्वोक्त स्वर्ग में अभय को बोधन करनेवाली श्रुतिका विरोध आवेगा इसलिये वह श्रुतिभी अर्थ वादको कहती है और गीता

में भी भगवान्ने अर्जुनकेप्रति कहाहै (आब्रह्मभुवना ल्लोकाः पुनरावर्त्तिनोऽर्जुन ॥ तेतम्भुक्त्वास्वर्गलोकंवि-शालं क्षीणेपुण्येमर्त्यलोकंविशन्ति २) ब्रह्मलोक पर्यंत जितनेलोक सो पुनरावृत्तिवाले हैं अर्थात् सम्पूर्णलोकों में पुण्यके फलको भोगकर फिर हटआते हैं और कर्मी जो हैं सो स्वर्गलोकको भोगकर जब पुण्य क्षीण हो-जाते हैं तब फिर इसलोकमें आकर प्रवेश करते हैं इ-त्यादि वचनोंकरके भगवान्ने भी स्वर्गको नाशीकहा है (योगवाशिष्ठे ॥उत्पद्यतेसुखंयादृक्ब्रह्मणःपरमेष्ठिनः॥ विष्ठाकृमेस्तादृगेवस्याद्योगादिन्द्रियार्थयोः १) ब्रह्मा को विषय इन्द्रिय के सम्बन्धसे जो सुख प्राप्त होताहै उतनाही सुख विष्ठाके कृमिको भी इन्द्रिय विषय के सम्बन्ध से प्राप्त होताहै १ (विट्क्रिमिरपिसन्त्येवह्य न्नदाराःसुतास्तथा ॥ ब्रह्मणोपिविशेषःस्यादनयोःकेन हेतुना २)जैसे विष्ठाके कृमियोंके अन्न दारा और पुत्रा दिकहैं तैसे ब्रह्माके भी हैं तब फिर किसहेतुकरके इन दोनोंमें से ब्रह्माकी विशेषता होसक्ती है किन्तु कदापि नहीं होसक्ती २ (जायतेम्रियतेब्रह्मा विट्कृमिश्चतथै वहि ॥ सुखदुःखकरन्तद्वत्सदेहत्वंसमंद्वयोः ३) जिस प्रकार ब्रह्मा जन्मता मरताहै विट्क्रिमीभी तिसीप्रकार जन्मते मरते हैं और सुख दुःखका भोग औरसदेहत्व भी दोनोंको तुल्यहै ३ (किंबहूक्तेनदेवेन्द्र संक्षेपेणाव धारय ॥ समःसंसारआत्माच ममतेपिशुनोपिच ४) हे देवेन्द्र बहुत कहने से क्या प्रयोजन है संक्षेप से तुम निश्चयकरो हमारे को और तुम्हारेको और कूकरको

संसारतुल्यहै और आत्माभी सर्वमें तुल्यहै ४ और अनादिकालका यह चित्त विषयों की वासनाकरके आकर्षण कियाहुआहै अर्थात् खैंचहुआहै इसलिये विषयों की वासना के दूरकरने में बारम्बार यत्नकरके मुमुक्षु पुरुषों को विषयों में दोष चिन्तन करने चाहिये पूर्व भोगोंमें दोष निरूपण करते हैं पञ्च ज्ञानेन्द्रिय पञ्च कर्मेन्द्रिय और एक अन्तःकरण यह भोगोंके साधनहैं साधन उसको कहते हैं जिसके विना जो सिद्ध न हो तिसके प्रति वह साधन कहताहै जैसे अग्नि इन्धन के विना रसोई सिद्ध नहीं होसक्ती है इसलिये अग्नि इन्धन रसोईका साधनहै तैसे चक्षुरादि इन्द्रियोंसेविना भोगभोगे नहींजातेहैं इसलिये इन्द्रियआदिक भोगका साधन हैचक्षु,घ्राण,श्रोत्र,रसना और त्वग्ये पांचज्ञानेन्द्रियहैं हस्त,पाद, पायु, उपस्थ और वाक् ये पांचकर्म इन्द्रियहैं और एकही अंतःकरणकी चार वृत्तिहैं मन १ बुद्धि २ अहंकार ३ चित्त ४ और इनचार वृत्तियों के चारही विषयहैं संशय १ निश्चय २ गर्व ३ स्मरण४ और वृत्ति के भेदहोनेसे वृत्तिवारेकाभी भेद होजाताहै जब कि अंतःकरण की संशयाकार वृत्तिहोती है तब तिसकी मनसंज्ञाहोती है जब निश्चयाकार वृत्तिहोती है तब तिसकी बुद्धि संज्ञाहोती है जब गर्वाकार वृत्ति होती है तब तिसकी अहंकार संज्ञाहोतीहै और दशही इन्द्रियों में अपने अपने विषयों में आसक्ति और बाह्य मुखता रूप दोषहै क्योंकि विधाताने इनको बाह्य मुख रचाहै इसलिये विषयोंकी ओरसर्वदा धावनकरतेहैं और

काम क्रोध लोभ तृष्णा मोहमद आदि यहसब अंतः करणमें दोषहैं सो यहदोषही अनर्थका हेतुहै और दुष्ट इन्द्रियों करके भोक्ताको सुख कदापिनहीं होता जैसेदुष्ट अश्वोंकरके रथके स्वामियों को सुखनहींहोता है। और इन्द्रियों के दोष योग वसिष्ठमेंभी कहे हैं (चिरमासुदुरंतासुविषयारण्यराजिसु ॥ इन्द्रियैर्विप्रलब्धोस्मि धूर्तैर्बालैरेवार्भकः १) रामचन्द्रजी वसिष्ठके प्रति कहते हैं हे ब्रह्मन् जिनका चिरकालपर्यंत भी अंतनहीं आसक्ता ऐसी जो विषय रूपी वनोंकी पंक्ति (पांति) हैं तिनमें इन्द्रियरूपी वंचकों करके मैं ठगागयाहूं जैसे धूर्तबालकों करके छोटाबालक ठगाजाता है १ (आत्मंभरीण्यनार्याणिसाहसैकरतीनिच॥अंधकारविहारीणिरक्षांसिस्वेन्द्रियाणिच २) हे ब्रह्मन् यह अपने इन्द्रियाँही राक्षस हैं जैसे राक्षस अपनाही उदर पूर्ण करताहै तैसे यह इंन्द्रियां भी अपने अपने विषयों को भोगते हैं और अनार्यहैं और विनाविचारही विषयों में प्रीति करनेवाले हैं २(मृदूनिपरितापीनिदृषट्दृढबलानिच॥ छेदेभेदेचदक्षाणिसुशस्त्राणीन्द्रियाणिच ३) कोमल हैं परितापि हैं पत्थर के तुल्यकड़ेहैं बलीहैं छेदन और भेदन में तीक्ष्ण शस्त्र के तुल्यहैं ३ (यानिदुःखानिदीर्घाणिविषयाणिमहान्तिच ॥ अहंकारात्प्रसूतानिताान्यगात्खदिराइव ४) जितने बड़े लम्बे और कठोर महान् दुःखहैं वहसब अहंकार से उत्पन्न होतेहैं जैसे पर्वतमें खैरका वृक्ष उत्पन्न होताहै४ (चेतःपततिकार्येषुविहंगःस्वामिषेष्विव॥ क्षणेनविरतिंयातिबालःक्रीडनाकादिव ५) यह चित्त इसप्र-

कार कार्यों में पतितहोता है जैसे पक्षी मांसको देखकर गिरता है और फिर क्षणमात्रमें उपरामता को प्राप्त हो जाताहै जैसे बालक क्रीड़ासे उपरामहो जाताहै ५ (भो गदूर्वांकुराकांक्षीश्वभ्रपातमचिंतयन् ॥ मनोहरिणकोब्र ह्मन्दूरंविपरिधावति ६) जैसे मृग सुन्दर घासके अंकुरको देखकर दौड़ताहै और गढ़े में गिरने का चिंतन नहीं करताहै तैसे हे ब्रह्मन् मनरूपी हरिण विषय रूपी अंकुर को देखकर दूरसेही धावन करता है ६ भोगोंके साधन जो इन्द्रिय हैं तिनमें दोषदिखादिये अब भोक्ता में दोष दिखातेहैं सो भोक्ता तीनप्रकार का है उत्तम १ मध्यम २ अधम ३ तिनमें से इन्द्रादि देवता उत्तम भोक्ताहैं और चक्रवर्ती राजा मध्यम भोक्ताहै और दरिद्री पुरुष अधमभोक्ता हैं विवेकी पुरुषने तीनों भोक्तों कोनाशी जानना चाहिये क्योंकि महाप्रलयमें जब ब्रह्मा की आयु समाप्तहोजाती है तब इनचौदहो भुवनों में कोई भी भोक्ताएकक्षण मात्रभी स्थितनहींरहसक्ता और जब ब्रह्माकी रात्रिहोती है तब स्वर्गादि लोक निवासी सब भोक्ता लयकोप्राप्तहो जातेहैं यह वार्त्ता पुराणों में लिखीहै भोक्तामें दोष दिखादिये अब तृष्णामें दोषदिखाते हैं तृष्णाकी पूर्त्तिभोगोंकरके किसीने भी नहीं की है और अनंतर भी कोई नहीं करेगा इसलिये भोगोंकी तृष्णाका त्याग करनाहि उचितहै (भारत ॥ सूच्यासूत्रं यथावस्त्रेसंसारयतिवायकः । तद्वत्संसारसूत्रंहितृष्णासूच्यानिवध्यते १) जैसे दर्जी तागेको सूई करके वस्त्रमें प्राप्त करदेताहै तैसेही संसाररूपी सूत्रतृष्णारूपी सूई

करके सियाजाताहै १ (योगवासिष्ठ ॥ अपिमेरुसमंप्रा
ज्ञमपिशूरसमंस्थिरम् ॥ तृणीकरोतितृष्णैकानिमेषेण
नरोत्तमम् १) सुमेरु के तुल्य विशाल बुद्धिवालाभी हो
और शूर के तुल्य चित्तकी स्थिरतावालाभीहो तिसको
भीयह तृष्णानेत्रके फरकनेमें तृणकेतुल्य लघुकरदेतीहै
॥१॥विरागकेविनातृष्णाका नाशनहीं होसक्ता इसलिये
तृष्णाकी शान्तिकेनिमित्तशुद्धवैराग्यको प्राप्तहोवैऔर
विषयों में दोष दृष्टि वैराग्यका कारण है और वमनकी
नाईं विषयों में त्याग बुद्धिहोनी यही वैराग्य का स्व-
रूप है और पुनः विषयभोगों की आशाका अभाव हो
जानायही वैराग्यका कार्यहै सो वैराग्य चारप्रकारका
पुराणों में कहा है एकयतमानसंज्ञक दूसराव्यतिरेक
संज्ञक तीसरा एकेन्द्रियसंज्ञक चौथा वशीकारसंज्ञकहै
शास्त्र और आचार्य्यके उपदेशकरके इससंसारमें सार
क्या है और असारक्या है इसकोहम निश्चयकरेंगे इ-
सके निमित्तजो यत्न है तिसका नाम यतमान है यत
मानकीप्राप्ति के अनन्तर मनमें पूर्वविद्यमान तृष्णादि
दोषों के मध्य में कौनसेदोष पक्कहोगये हैं कौनपक्कहो
तेहैं कौनसेहोनेवालेहैं इनतीनोंका भिन्नभिन्नकर के नि-
श्चयकरनेकानाम व्यतिरेकहै इसलोक औरपरलोक के
विषयोंको दुःखरूपकरके देखना और इन्द्रियोंकीवृत्ति
उत्पन्नकरनेमें असमर्थजोतृष्णादिदोषोंकासंस्काररूप-
ताकरके विषयग्रहणमें उत्साहमात्रकरके मनकीस्थिति
होनी इसकानाम एकेन्द्रियसंज्ञकहै औरमनमें उत्साह
मात्रकरके भी तृष्णादि दोषों काअभावहोजाना और

संपूर्ण इसलोकपरलोकके विषयोंकी तृष्णा निवृत्तहो-जानीइसकानाम वशीकारसंज्ञक वैराग्यहै औरमोक्षका द्वार जोमनुष्यशरीरइसको प्राप्तहोकर जोवैराग्यको न-हींप्राप्तहोते हैं किंतुविषयों में आसक्तिकरते हैं तिनको भारत में गर्द्दभ कहा है (आत्मानमात्मस्थंनवेत्तिमूढः संसारकूपेपरिवर्त्ततेयः। त्यक्त्वात्मरूपंविषयांश्चभुंक्ते सवैजनोगर्द्दभएवसाक्षात् १) शरीर में स्थितआत्मा को मूढजननहीं जानते हैं और संसाररूपीकूपमें पतित होते हैं अपने शुद्धस्वरूप आत्माको त्यागकरके जो वि-षयोंकोभोगते हैं सोईमूढजन साक्षात् गर्द्दभहैं यहवैरा-ग्यकास्वरूपऔर लक्षणादिनिरूपणकरादिये अबषटसं-पदको दिखाते हैं प्रथमशमकी विरागसेउत्पत्ति होती है चित्तकाशांतहोना औरवासनाका त्यागहोजाना इसीको शम कहते हैंसो वासना दोप्रकारकीहै एकशुद्ध वासना दूसरी अशुद्ध वासना तिन दोनों में से जो दैवीसम्पद रूपी शुद्धवासनाहै तिनका मुमुक्षु पुरुषोंको सदैवग्रहण करना चाहिये और जो अशुद्ध वासना मनकी मली-नता के हेतुहैं तिनका सदैव त्याग करना चाहिये सो अशुद्ध वासना तीनप्रकार की हैं एक लोकवासना दू-सरी शरीर वासना तीसरी शास्त्र वासना प्रथम लोक वासना को दिखाते हैं सम्पूर्णलोक जिस जिसप्रकारसें मेरी निन्दा न करैं और जिसप्रकार सम्पूर्णलोक मेरी स्तुतिकरैं तैसे मैं करूँ इस अशक्य अर्थका जो हठ करना इसीकानाम लोकवासनाहै और देह वासनाभी तीन प्रकारकी हैं एक तो देहमें आत्मभ्रान्ति दूसरी

गुणाधान भ्रान्ति तीसरी दोषापनयभ्रान्ति गुणाधान भ्रान्ति दोप्रकारकी है एक लौकिक दूसरी शास्त्रीय है जो समीचीन शब्दादि विषयोंका सम्पादन करना वह लौकिकी गुणाधानरूप है दूसरी गङ्गास्नानादि है अर्थात् सर्वदा गङ्गास्नानादि मेरे बने रहैं यह दोनों भी पुरुषों करके सर्वदा संपादनकरनेको अशक्य हैं इसलिये यहत्यागने योग्य हैं और शास्त्रवासनाभी तीन प्रकारकीहै एकतो पाठहीकरने का व्यसनहोना राति दिन शास्त्रोंका पाठहीकरतेरहना भरद्वाजकीतरह दूसरी शास्त्रके अर्थका व्यसनहोना अर्थकाहीविचार दिनरात्रिकरतेरहना दुर्वासाकीतरह तीसरीअनुष्ठानही करते रहना मंत्रजपादिकोंका निदाघकीनाईं यहतीनों वासनाभी मलिनहैं त्यागनेयोग्यहैं देहमेंआत्मभ्रांति देहही आत्मा है और देहमें गुणों का आरोपकरना यहगुणाधान भ्रान्तिरूप वासनाभीत्यागने योग्यहैं क्योंकि देह नाशीहै इसलिये आत्मा नहींहोसक्तीहै और देहसदा अपवित्रहै इसमें गुणोंका आरोप्यभी नहींहोसक्ताहै और सम्पूर्ण वासनाकेत्यागमें विचारही मुख्य साधन हैवशिष्ठ (दृढाभ्यासपदार्थैकभावनादतिचंचलंचित्तंसं जायतेरामजरामरणकारणम् १तस्माद्वासनयाबद्धंमुक्तं निर्वासनंमनः।रामनिर्वासनीभावमाहराशुविवेकतः २) हेरामः पदार्थोंका दृढ़ अभ्यास करके अति चंचल चित्त होताहै और वहीचित्तजरामरण का कारण है तिसकारणते वासना करकेही यह जीवबद्ध है और जब मन निर्वासन होजावेगा तब ये मुक्तहै और विवेक से नि-

वासन होताहै २ और बासना दोप्रकारकी कहीहै एक शुद्ध बासना दूसरी मलिन वासना दोनोंमें से मलिन वासना जन्मकाहेतु है और शुद्ध बासना जन्मकेनाश का हेतुहै प्रथम मानसी बिषय बासनाको त्यागकरके फिर शुद्धबासना को ग्रहणकरै और संपूर्ण उपद्रव का करनेवाला जो यह संसाररूपी वृक्षहै तिससंसाररूपी वृक्षके नाशका उपायएक अपने मनको निग्रहकरनाही है (हस्तंहस्तेनसंपीड्यदन्तोदंतान्विचूर्ण्यच । अंगै रंगंसमाक्रम्यजयेदादौस्वकंमनः ३) हाथकरकेहाथको दवाकर और दांतों करके दांतोंको काटकर और अंगोंकरके अंगोंको खैंचकर प्रथम अपने मनकोजीतै ३ (उत्सेकउदधेर्यद्वत्कुशाग्रेणैकबिंदुना। मनसोनिग्रहस्तद्वद्भवेदपरिखेदतः ४) जैसे एकटिटीरी पक्षीने कुशाके अग्रकरके समुद्रकोसुखादियाथा तिसीप्रकार मनकेनिग्रहकरनेमें खेदरहितहोकर यत्नकरै यदि इसजन्म में निग्रहनहींहोगा तवजन्मांतरमेंकरूंगा इसप्रकार का दृढ़विश्वासकरके यत्नकरै ४ क्योंकि मनका निग्रहही मुख्यसाधनहै वासनाकेनाशका औरचित्तके नाशकरने में कारणदो हैं एकतो वासनाका नाशकरना दूसरा प्राणवायुका प्राणायामकरके स्थिरकरना तिनदोनों के मध्यमें एकके नाशहोने से दोनोंशान्तहोजाते हैं जिस पुरुषने प्राणवायुको रोकलियाहै तिसने मनको भीरोक लिया है औरजिसपुरुषने मनकोरोकलिया है तिसीने प्राणवायुकोभी रोकलिया है दृढ़प्राणायामके अभ्यास करके और गुरुकरकेवताईहुई युक्तियों करके आसन

भोजनका संयमकरके प्राणोंकीक्रियाकानिरोध(रोकना) होताहै ॥ ज्ञानके मध्यमअधिकारीको मनके शमकाउपाययोगकहा है इसलिये योगकेलक्षणको दिखातेहैं ॥ सूत्र (योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः १) चित्तकेपरिणामरूप जो वृत्तियें तिनकानिरोधकरना अर्थात् बहिर्मुखतासे हटाकर अपनेकारणसें लयकरना उसीकानामयोगहै॥ (अभ्यासवैराग्याभ्यांतन्निरोधः २) अभ्यासवैराग्य करके वृत्तियोंका निरोधहोता है ॥ (तत्रस्थितौ यत्नो ऽभ्यासः ३) इसमें चित्तकी स्थितिकेलिये जो यत्न है अर्थात् स्वभावसेही चंचलहोनेसे सदा बाह्य विषयों की और प्रवाहवालेचित्तको हमनिरोधकरेंगे इसरीतिसे उत्साहकर के निरोधके साधनों में जोयत्नकरना है उसीकानाम अभ्यास है (दृष्टानुश्रविकविषयवितृष्णस्यवशीकारसंज्ञावैराग्यम् ४) दोप्रकारका विषयहै एक दृष्ट दूसरा आनुश्रविक दोनोंमेंसेजो इसी लोकमें स्त्री अन्नपान राज्यादिक हैं सोदृष्ट हैं औरदेवलोकादिकोंमें जो विषयहैं तिनको आनुश्रविककहते हैं तिन दोनोंप्रकारके विषयोंको परिणाम में विरसदेखने से जोतिनमें तृष्णा से रहितहोजाना उसीकानाम वशीकारसंज्ञक वैराग्यहै ४ पूर्वसेभी सुगमउपायमन के निरोधका दिखाते हैं (ईश्वरप्रणिधानाद्वा ५) प्रणिधाननाम भक्तिविशेषकाहै फलकीइच्छासेरहितहोकर प्रीतिपूर्वक संपूर्णक्रियाको ईश्वर में अर्पणकरदेना इसीकानामभक्तिविशेष है तिसकरकेभी समाधिलाभहोता है ५ ॥ औरउपायकहते हैं ॥ (मैत्रीकरुणामुदितोपेक्षाणांदुःख

पुण्यापुण्यविषयाणां भावनातश्चित्तप्रसादनम् ६) मैत्रीनामसुहृदताकाहै,करुणानामकृपाकाहै मुदितानाम हर्षका है उपेक्षानाम उदासीनताका है यहचारोंक्रमसे दुःखीसुखियोंमें जानलेने अर्थात् सुखियोंमें मैत्रीकोकरै ईर्षाकोनकरै और दुःखियोंमेंकृपाकोकरै किसीप्रकारसे इनकादुःख निवृत्तहोवै और पुण्यवालोंको देखकरहर्ष-करैकिंतुद्वेषनकरै औरअपुण्यवालोंको देखकरउदासीन रहै हर्षनकरैइनमैत्रीआदिकोंके करनेसेभीचित्तकीस्थि-रताहोतीहैऔरउपाय(यथाभिमतध्यानाद्वा७)जोअपने कोअभिमतहो अर्थात् जिसकिसीदेवताकी मूर्त्तिअथवा औरकोई वस्तु जोअपने को प्रियहो तिसकी प्रतिमाका ध्यानकरनेसेतिसमें चित्तकीस्थिरताहोनेसे पुनः अन्यत्र आत्मामेंभी चित्त स्थिरताकोलभताहै इन पूर्वोक्तरीतियों सें मनका निरोध शमविचार और योग करके निरूपण करदिया अबदमका निरूपणकरते हैं शब्दादिबाह्य बि-षयों से इन्द्रियों को रोकने का नाम दमहै और दमका फल भारतमें भी कहाहै (दमस्तेजोवर्द्धयति पठितंच दमःपरम् । विपापात्मातेजसायुक्तःपुरुषो विन्दतेमह त् ३)दमतेजकोवढ़ाताहै और दमकोही परम (उत्कृष्ट) कथन करतेहैं और पाप से रहित हुआ तेज करके युक्त हुआ पुरुष महत्पदको प्राप्तहोताहै १ (अदांतःपुरुषः क्लेशमभीक्ष्णंप्रति पद्यते ॥ अनर्थांश्च बहूनन्यान्प्रसर-त्यात्मदोषजान् २) अदांत पुरुष जिसने इन्द्रियों का दमननहींकिया वहबारंबार क्लेशको प्राप्तहोताहै औरजो आत्माके अज्ञानजन्य अनेकअनर्थ तिनकोभीप्राप्तहोता

है और जो इन्द्रियांहैं वह शब्दादिविषयोंमेंही प्रीति करेहैं इसलिये इनके जयकरने में यत्नकरना जीवोंको उचित है दम का निरूपण करदिया अब उपरतिका निरूपण करतेहैं वाह्य विषयों से दमनकी हुयी इन्द्रियों का जो उपरत हो जाना उसीको आचार्य्य लोग उपरतिकहते हैं और सम्पूर्ण ईर्षणाके त्याग को परम उपरति कहते हैं और उपरतिके कारण यम नियमादिकहैं चित्तका निरोध होजाना उपरतिका स्वरूपहै और संपूर्ण व्यवहार का नाश होजाना उपरतिका कार्य्य है और इसी उपरतिको संन्यासभी कहतेहैं उपरतिको दिखादिया अब तितिक्षाको दिखातेहैं खेदसे रहित होकर बिचार पूर्वक शीतोष्णादि द्वन्दोंके सहारने का नाम तितिक्षा है सो भागवतमेंकहाहै(नायंजनोमेसुखदुःखहेतुर्नदेवतात्माग्रहकालकर्म। मनःपरंकारणमामनन्तिसंसारचक्रंपरिवर्त्तयद्यत् १) यह जनलोक मेरेसुखदुःखका हेतुनहींहै देवता ग्रह(सूर्य्यादि)काल औरकर्म इनमेंसे कोईभी मेरेसुख दुःखका हेतुनहींहै मनहीको सुखदुःखका कारणकथन करते हैं जो संसार रूपी चक्रको भ्रमावता है १ (भारत धर्मपुत्रनिषेवस्वसुतीक्ष्णौचहिमातपौ। क्षुत्पिपासेचवायुंचजयनित्यंजितेन्द्रिय २ अतिवादांस्तितिक्षेतनावमन्येतकञ्चन। क्रोश्यमानःप्रियंब्रूयादाकुष्टःकुशलंवदेत् ३) हेधर्मपुत्र, तीक्ष्ण जो पाला और धूप इनको तुम सहारो और हे जितेन्द्रिय क्षुधा पिपासा पुनः वायुकोभी सहन करो अर्थात् प्रारब्ध भोगसे जो आकर प्राप्तहोवै तिसको विचार पूर्वक सहारो १ हेराजन् दुष्ट पुरुषों के दुर्वाक्यो-

को सहारो किंचित् भी खेदको मत प्राप्तहो और तिनसे प्रियवाणी को बोलो और जो ताड़नाकरै तिसको भी कुशलकहो ३ (अवकीर्णःसुगुप्तश्च नवाचाह्यप्रियम्ब देत् । मृत्युःस्यादप्रतिक्रूरो विस्रब्धःस्यादकत्थनः ४) और मूढ़ोंकरके इतःततः खैंचाहुआ धर्मनिष्ठ जो पुरुष है और धूलिकरके आच्छादन कियाहुआ और भिति आदिकोंमें बिठायाहुआ जो तितिक्षुहै सो अप्रियवाणी को कदाचित् भी न बोले कोमल और करुणाकरकेही युक्त होवै और क्रूरतासे रहितहोवै और विस्रब्धहोवै तिसतिस दुःखके सहारनेमें निर्भय होवै और हम धन हैं जो इसप्रकारके दुःखके सहारने में सामर्थ्य हैं ४ इस प्रकार विचार पूर्वक सुखदुःखके सहारने कानाम तितिक्षाहै अब श्रद्धाका लक्षण दिखाते हैं गुरुवेदान्त वाक्यों में अत्यन्त विश्वास होना जोकि गुरु वेदान्त कहताहै सोई सत्यहै इसीकानाम श्रद्धाहै और (श्रद्धस्व सौम्य) हे सौम्य श्रद्धाकर ऐसा उपनिषद् में उद्दालक ने अपने पुत्रको उपदेशभीकियाहै इस श्रुतिप्रमाण से और (श्रद्धावान्लभतेज्ञानम्)श्रद्धावान्ही ज्ञानकोपाता है इसस्मृति प्रमाणसे श्रद्धाको ज्ञानकी प्राप्तिका साधन कहाहै अबसमाधानका लक्षणदिखातेहैं (ब्रह्मण्याचार्य वाक्येवाचैकाग्र्यंयत्तुचेतसः।समाधानंहितत्प्रोक्तंकर्त्तव्यं श्रवणेच्छुभिः१) ब्रह्ममें और आचार्य के वाक्यमें चित्त की एकाग्रताकानाम समाधानहै सोश्रवणकी इच्छावाले पुरुषको कर्त्तव्य है अब मुमुक्षुताका लक्षण दिखाते हैं (शृंखलाभिर्हिबद्धस्य यष्टिभिस्ताडितस्यच।राजभृत्यैर्

थोदेति मोचनेच्छाभृशंहिनः १ तथासंसृतिपाशेन बद्ध स्याज्ञानतोभृशम् । प्रतीचोमोचनेछाया मुमुक्षासोच्यते वुधैः २) जंजीरोंकरके बंधायमान जोपुरुषहै और राजा के दूतोंकरके पीड़ित भी है तिस पुरुषको जैसे छूटनेकी इच्छाहोती है १ तिसीप्रकार जन्ममरणरूपी पाशोंकरके और अज्ञानकरके निरन्तर बंधायमानहुआ जो जीव तिस जीवको जो संसाररूपी बंधनसे छूटनेकी इच्छा उसकानाम मुमुक्षुताहै २ साधन चतुष्टयका निरूपण करदिया अब संन्यासका निरूपण करते हैं क्योंकि संन्यासको भी ज्ञानकेप्रति साधनताकही है सो दिखाते हैं साधन चतुष्ट सम्पन्न जो अधिकारी है सो गृहस्थाश्रम से संन्यासाश्रमकोप्राप्तहोवै चित्तकीशान्ति और आत्म ज्ञानकी प्राप्तिकेलिये क्योंकि संन्यासही ज्ञानकेप्रति उत्तम साधनहै (प्रश्न) संन्यासमें क्या प्रमाणहै क्योंकि बिना श्रुति या स्मृति प्रमाणसे स्वीकृत नहीं होसक्ता है (उत्तर) (त्यागएवहिसर्वेषां मोक्षसाधनमुत्तमम् ॥ त्यजतैवहिविज्ञेयं त्यक्तुम्प्रत्यक्परम्पदम् १) सम्पूर्ण पुरुषों को मोक्षकेप्रति संन्यासही उत्तम साधन विधानकियाहै क्योंकि त्यागकरकेही त्यागी पुरुषको आत्मपद जानने योग्यहै यहभाल्लवीय श्रुतिकहतीहै १ और वृहज्जाल उपनिषद्में भी कहाहै (अथपरिव्राड्विवर्णवासामुण्डोऽपरिग्रहिशुचिरद्रोहीभैक्षाणोब्रह्मभूयायकल्पते २) परिव्राड् जो संन्यासी सो विवर्णवास होकर अर्थात् वर्णाश्रमसे रहितहोकर और अनियतवास होकरप्रतिग्रहसे रहितहोकर पवित्र और द्रोहसेरहितहोकर भिक्षा भोजन

को करताहुआ मोक्ष के योग्य होता है २ (यदामानसि वैराग्यंजायतेसर्ववस्तुषु तदैवसंन्यसेतविद्वान् अन्यथा पतितोभवेत् ३) जिसकाल मनमें सब वस्तुओं में वैराग्य उत्पन्न होवे तिसी काल में विद्वान् संन्यास को धारण करलेवे यदि नहीं करेगा तो पतित होगा पूर्वोक्त श्रुति और स्मृति संन्यासमें प्रमाण हैं (प्रश्न) संन्यास कितने प्रकार का है और तिसके अधिकारी कितने प्रकार के हैं (उत्तर) प्रथम तो दोप्रकार का वैराग्य है एक अपरवैराग्य, दूसरा परवैराग्य है फिर अपर वैराग्य तीन प्रकार का है मंद १ तीव्र २ तीव्रतर ३ तीनों मेंसे पुत्र दारा आदिकों के नष्ट होनेपर धिक्कार है इससंसार को ऐसी जो बुद्धि है तिसको मंदवैराग्य कहते हैं क्योंकि वह बुद्धि तिसीकाल मेंहीहोतीहै पश्चात् नहीं होती पुनः तिसको विषयासक्ति होजातीहै इसलिये मंद वैराग्य वाले का संन्यासमें अधिकार नहीं है अब तीव्र को दिखाते हैं इसीजन्ममें मेरे पुत्र दारादिक मत होवें ऐसी जो स्थिर बुद्धिहै विषयों के त्यागकी इच्छा तिसका नाम तीव्र वैराग्य है तीव्र वैराग्यवाले का कुटीचक बहूदक संन्यासमें अधिकारहै ॥ ब्रह्मलोक पर्यन्त जितने देवलोकहैंतिनमें मेरागमन कदापि मतहो इसप्रकार के वैराग्यकानाम तीव्रतरहै इसमें हंस संन्यासका अधिकार है और पर वैराग्य में परमहंस का अधिकार है संन्यासके अधिकारी कहदिये अब संन्यासके भेद दिखाते हैं संन्यास दोप्रकारका है एक लिंगसंन्यास दूसरा अलिंग संन्यासहै दोनोंमें से लिंगसंन्यास छःप्रकारकाहै

कुटीचक १ बहूदक २ हंस ३ परमहंस ४ तुरीयातीत ५ अवधूत ६ तिनमेंसे जो अपने आश्रमके कर्मोंकोप्रधानताकरकेकरताहै तिसकानाम कुटीचकहै और जो आश्रमकेकर्मोंको गौणताकरके करताहै किन्तु ज्ञानमें प्रधानतारखताहै तिसकानामबहूदकहै औरजोज्ञानकेअभ्यासकीनिष्ठावालाहै तिसकानाम हंसहै और जो प्राप्ततत्त्वहै तिसका नाम परमहंस है सो परमहंस संन्यास पुनःदो प्रकार का है एक विविदिषा संन्यास दूसरा विद्वत्संन्यास दोनों में से आत्म ज्ञानकी प्राप्ति के अर्थ जो संन्यास है तिसका नाम विविदिषा संन्यास है और जीवन्मुक्ति के लिये जो न्यास है तिसका नाम विद्वत्संन्यास है सो तिनके लक्षणों को दिखाते हैं गृहस्थाश्रम में ही साधन चतुष्टय सम्पन्न होकर आत्मज्ञान की प्राप्तिके लिये जो संन्यास धारण करना है तिसको विविदिषा संन्यास कहते हैं और गृहस्थाश्रममेंही याज्ञवल्क्य आदिकों कि न्याईं साधन संपति करके ब्रह्म साक्षात्कार को प्राप्त होकर जीवन्मुक्ति के लिये जो संन्यास ग्रहण करना है तिसका नाम विद्वत्संन्यास है इसमें भी श्रुति का प्रमाण दिखाते हैं (किम्प्रजयाकरिष्यामा येषांनोयमात्मायंलोकइति) दुःखरूप जो प्रजा स्त्री पुत्रादि इन्हों करके हम क्या करेंगे जिन हम लोकों कोयह आत्माही लोक है ॥ और लिंग संन्यास में श्रुति ब्राह्मण काही अधिकार कहती है ऐसा किसी का मत है ॥ (ब्राह्मणाःपुत्रैषणायाश्चवित्तैषणायाश्चलोकैषणायाश्चव्युत्थायाभिक्षाचर्यंचरंति १) ब्राह्मण जो हैं

सो पुत्र इषणा अर्थात् पुत्र की इच्छा धन की इच्छा स्वर्गादिलोकोंकी इच्छासे उपराम होकर भिक्षाचरणको करते हैं अर्थात् संन्यासको धारण करते हैं स्मृतिः॥ (कषायंब्राह्मणस्योक्तंनान्यवर्णस्यकस्यचित्। मोक्षाश्रमे सदाप्रोक्तंधातुरक्तंतुयोगिनाम् १) ब्राह्मणकोही कषायादि कहे हैं अन्यवर्णों को नहीं कहे और मोक्ष आश्रममें प्रविष्ट योगियों को धातुकरके रक्त विधान है १ विष्णुस्मृति॥ (मुखजानामयंधर्मोवैष्णवंलिङ्गधारणम्। वाहुतोरुजातानांनायंधर्मोविधीयते २) ब्राह्मणकोहीये लिंग संन्यास का धारण कहा है क्षत्रिय और वैश्यको लिंग संन्यास बिधान नहीं है याज्ञवल्क्यस्मृतिः॥ (चत्वारोब्राह्मणस्योक्ताःस्वाश्रमाःश्रुतिचोदिताः। क्षत्रियस्य त्रयःप्रोक्ताद्वावेकोवैश्यशूद्रयोः ३) ब्राह्मणकोही श्रुति ने चारों आश्रम कहे हैं ब्रह्मचर्य गार्हस्थ वाणप्रस्थ संन्यास और क्षत्रियको ब्रह्मचर्य, गृहस्थ और वाणप्रस्थ और वैश्यको दो ब्रह्मचर्य्य गृहस्थ और शूद्रको एक गृहस्थही उक्त श्रुतिस्मृति प्रमाणों से लिंग संन्यासमें ब्राह्मणकाही अधिकार है और कोई कहते हैं लिंग संन्यासमें भी तीनों वर्णों का अधिकार है क्योंकि श्रुति में जो ब्राह्मण शब्दहै सो द्विजाति पर कहै इसमें सुरेश्वराचार्य्यका वाक्य प्रमाण है (ब्राह्मणग्रहणंचात्र द्विजानामुपलक्षणं। अविशिष्टाधिकारित्वात्सर्वेषामात्म वोधने ४) श्रुतिमें ब्राह्मण शब्द जो है सो द्विजातियों का भी उपलक्षण (जतलानेवाला) है क्योंकि आत्मबोध में सर्वका अधिकार तुल्यहोने से (याज्ञवाल्क्य

स्मृतिः (ब्राह्मणःक्षत्रियोवैश्यस्ततोगच्छेत्वनंप्रति। संन्यसेद्बन्धनाशायसर्वभूतदयापरः५) ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य ये तीनों वनके प्रति गमनकरें और बन्ध के नाशके निमित्त संपूर्ण भूतों परदया करते हुये संन्यास को ग्रहणकरें ब्रह्माण्ड पुराणकी स्मृतिः॥ (त्रैवर्णिकानां संन्यासोविद्यतेनात्रसंशयः। शिखायज्ञोपवीतानांत्यागपूर्वैकदण्डयुग् ६)तीनोंवर्णोंको संन्यास विधान किया है इस में संशय नहीं है शिखा यज्ञोपवीत के त्यागपूर्वक एक दण्डका धारण करनाभी कहाहै ब्रह्मवैवर्तपुराणमें भी कहा है॥(वैराग्योत्पत्तिमानेवसंन्यासेपरियुज्यते। रागवान्नतुविप्रोपिवेदवेदांगवित्तमः ७) वैराग्यकी उत्पत्ति वालाजोहै सोई संन्यासका अधिकारीहै और सांगोपांग वेदका वेत्ता रागवाले ब्राह्मणकाभी संन्यासका अधिकार नहींहै श्रुतिः॥ (यदातुविदितंतत्वंपरंब्रह्मसनातनं। तदैकदण्डसंगृह्यसोपवीतांशिखांत्यजेत्८) जबकि गृहस्थ मेंही विदित तत्त्वहोवै अर्थात् ब्रह्मज्ञानको प्राप्तहोवै तिसी कालमें एकदण्ड को ग्रहण करके यज्ञोपवीत के सहित शिखाका परित्याग करदेवै इन वाक्यों से तीनों वर्णोंको लिंग संन्यास भी विदित होता है और बाकी बचा जोशूद्रहै तिसकोभी श्रुति संन्यास विधानकरती है पारिव्राज्योपनिषद् (वैराग्यमासाद्यतुपापयोनि शूद्रोपि संन्यासमुपेत्यमोक्षं। प्राप्नोतिपापंतुविधूयविप्रः संन्यासमेत्यननुमुच्यतेवै ९)पापयोनि जो शूद्र है सोभी वैराग्य को प्राप्त होकर त्याग मात्र संन्यासको धारणकरके मोक्ष को प्राप्त होजाताहै और ब्राह्मण जो है सो पापोंको दूर

करके संन्यासको प्राप्तहोकर मुक्त होताहै संन्यासमात्र में चारोंवर्णों का अधिकार है (प्रश्न) परस्पर श्रुति स्मृतियोंका बिरोधहुआ (उत्तर) बिरोधनहीं है क्योंकि जिनके मत में लिंग संन्यास ब्राह्मणकोही विधान है तिनके मतमें अलिंग संन्यासमें अधिकार बाकीके तीनों वर्णोंको रहेगा क्योंकि जिस कालमें क्षत्रियआदिकों को बिबिदिषा उत्पन्नहोवै तिसीकाल में जन्म के संपादिक कर्मोंका त्यागकर देना तिनको उचितहै इसमें ब्रह्माण्ड पुराणकी स्मृतिको प्रमाणता पूर्व कह आयेहैं और जिन के मतमें लिंग संन्यासमें तीनों वर्णों का अधिकार है तिनके तो कोई बिवाद नहीं है अलिंग में शूद्रका अधिकार रहजावेगा पूर्वोक्त श्रुति प्रमाणसे इसरीति से चारोंबर्णोंका संन्यासमें अधिकार सिद्ध होता है और बिरोध भी नहीं आता और चारोंही वर्णोंको शांतिआदिक गुणोंके धारण करनेसेही त्यागमात्रको स्मृतिस्फुट कहती है (भैक्षचर्यंततःप्राहुस्तद्धर्मादिचारिणः तथावैश्यस्यराजेन्द्रराजपुत्रस्यचैवहि १०)पूर्वआश्रमसे उपरतिके अनंतर पूर्वकहे जो शांति आदिधर्म तिनका आचरण करने हारे शूद्रको जैसे भैक्ष्यचर्य बिधान हैं तैसे बैश्य क्षत्रियादिकोंकोभी बिधानहै१० और त्यागमात्रसंन्यास में स्त्री शूद्रके अधिकारको वार्त्तिककार भी कहति हैं (विद्यांगतत्फलात्मानंगार्गींविदुरयोरपि। स्त्रीशूद्रयोर्भाष्यकारःसंन्यासमनुमन्यते ११) विद्याका साधन जो शमादिक हैं और शमादिकों का फल जो इषणा त्रयका त्याग है सो ईर्षणात्रयका त्यागरूप संन्यासगार्गी और

बिदुरादिकोंनेभी कियाहै इसहेतुसे स्त्रीशूद्रकाभी संन्यास में अधिकारहै (प्रश्न) लिंग संन्यासकोहीसंन्यास कहाहै लिंगसे बिना संन्यास कहींनहीं कहा(उत्तर)लिंगसे बिना भी संन्यास कहाहै ॥ भाष्यकारवाक्य (हठाभ्यासोहिसंन्यासोनैवकाषायवाससा । नाहंदेहोहमात्मेतिनिश्चयोन्यासलक्षणम् १२) हठसे इंद्रियों का दमन करके जो आत्म चिंतनका अभ्यास है तिसी का नाम संन्यास है कषाय वस्त्रादि धारणका नाम संन्यास नहीं है और मैं देह नहींहूं और न मेरा यह देहहै इसप्रकारका निश्चय जो है सोई संन्यासका लक्षणहै इस भाष्यकार वाक्यसे मुख्य संन्यास अलिंगही सिद्ध होताहै क्योंकि कषायादि चिह्नों का खण्डन करने से और यदि देहादिकों में आत्म बुद्धि बनी है तब लिंगादिक कुछ कल्याण नहीं करसक्ते किंतु दोषके जनकहैं और ईषणात्रयका त्याग लिंग अलिंग दोनों में तुल्य बिधान है क्योंकि मोक्ष के प्रतिमुखसाधनता ईषणा त्रयके त्यागको ही श्रुति बिधान करती है (त्यागेनैकेनामृतत्वमानशु) एक त्याग मात्रकरकेहीमोक्षको प्राप्तहोताहै (निष्कामत्वमकोपत्वंक्षमासत्यंशमादया । यस्मिन्नित्यंप्रवर्त्ततेससंन्यासेऽधिकारवान्) जिस पुरुषमें निष्कामता अक्रोधता क्षमासत्य शम और दया यह सम्पूर्ण गुण नित्यही रहते हैं सो संन्यासका अधिकारी है वृहस्पति स्मृति (यस्मिन्क्रोधःशमंयातिविफलःसम्यगुत्थितः।आकाशेऽसिर्यथाक्षिप्तःसकेवल्याश्रमेवसेत् १३) जिसमें क्रोधशान्तिको प्राप्तहोजाताहोकिन्तु उत्पन्न होकरकेभीनिष्फलताको प्राप्त होजाता

है जैसें आकाशमें चलायाहुआ खड्ग(तलवार) निष्फल होजाताहै सोई पुरुष संन्यासका अधिकारी (अतीतान्न स्मरेद्भोगान्नातथाऽनागतानपि। प्राप्तांश्चनाभिनन्देद्यःस कैवल्याश्रमेवसेत् १४) जो भोग व्यतीतहोगये हैं जो आगे प्राप्त होने वालेहैं जो वर्त्तमानमें प्राप्त हैं तिनमेंसे किसीका स्मरण कदाचित् भी जोनहीं करताहै सोई संन्यास आश्रम में अधिकारीहै इत्यादि स्मृतियोंकरके यहसिद्ध हुआ जिसमें क्षान्ति आदिकगुणहैंवही संन्यासका अधिकारी है किसी वर्णाश्रमवाला हो संन्यासके भेद और संन्यासके अधिकारीका निरूपण करदिया अबयतियोंके नियमोंका निरूपणकरतेहैं (कुटीचकास्त्रिवारंवैस्नानंकुर्वीतयत्नतः। बहूदकोद्विवारंचैकवारंतुहंसकः १ स्नानंपरमहंसस्यमानसमुदितंतथा। तुर्य्यातीतस्यतद्भास्ममवधूतस्य वायुना २)कुटीचकदिनमें तीनबार स्नानकरै और बहूदकको दोवार स्नान बिधान है और हंसको एकवार १ और परमहंस को मानस और तुरीयातीतको भस्म करके अवधूतकोवायुकरके स्नानविधानकियाहै परिव्राजोपनिषद्कीश्रुति २ (कुटीचकोबहूदश्चवेदांतानांपुनः पुनः। कुर्य्याद्धिश्रवणंनित्यंब्रह्मज्ञानाभिवाञ्छया ३ हंसः परम हंसश्चकुर्वीतमननंमुहुः। तूर्य्यातीतोवधूतश्चनिदिध्यासनमाचरेत् ४ कुटीकादिषड्भिःकार्यमात्मानुचिन्तनम् श्रेष्ठस्त्वेषांहिविज्ञेयःसदोत्तरोत्तरोयतिः ५)कुटीचक और बहूदक जोहैं सो पुनः पुनः वेदान्तोंकाश्रवणकरै नित्यही ब्रह्मज्ञानकी प्राप्तिकी इच्छाकरके ३ और हंसपरमहंस जोहैं सो पुनः पुनः मनन करै और तुरीयातीत अरु-

अवधूत ये दोनों निदिध्यासनकोकरैं ४ कुटीचकादिकैंहों को आत्माकाही चिंतनकरना उचितहै और इनमेंसेउत्त-रोत्तरयतिको श्रेष्ठताकहीहै परिव्राज्योपनिषद् करके नि-यमोंकोकहदिया (प्रश्न)संन्यासकेधर्मोंको निरूपणकरना योग्यनहीं है क्योंकि कर्मके अधिकारको विद्यमानहोनेते (कुर्वन्नेवेहकर्माणि जिजीविषेच्छतःसमाः)कर्मोंको कर्त्ता हुआही सौवर्षजीनेकी इच्छाकरै इत्यादि वेदवाक्योंकरके संन्यासका अधिकार नहीं बनता और केवल आत्म-ज्ञानको मोक्षके प्रति साधनतारहो परंतु ज्ञानमेंतो कर्मी का अधिकारहै कर्मी संन्यासिका नहींहै तथाच श्रुतिः(या वज्जीवमग्निहोत्रंजुहोति) यावत्पर्यन्तजीतारहेअग्निहो त्रकोही करतारहे (जायमानोहवैब्राह्मणस्त्रिभिर्ऋणैऋण वान्जायते) तीनोंऋणोंकरके युक्तही ब्राह्मणउत्पन्नहोता है (ऋणानित्रीण्यप कृत्यमनोमोक्षेनिवेशयेदिति) तीनों ऋणोंको दूरकरकेमनको मोक्षमें लगावै इनवाक्योंसेभी कर्मी का अधिकार सिद्धहोताहै अकर्मीका नहीं (उत्तर) कर्मकोही प्रधानता है संन्यास को नहीं है यह तुमारी शंकानहीं बनती क्योंकि श्रुति वाक्यों करके संन्यास आश्रमको विद्यमान होनेते ब्रह्मोपनिषद् (सशिखंवपनं कृत्वा वहिःसूत्रंत्यजेद्बुधः यदक्षरंपरंब्रह्मतत्सूत्रमितिधा-रयेत् १ द्वावेवपंथानावनुनिष्क्रांततरौभवतः क्रियापथ श्चैवपुरस्तात्संन्यासश्चतयोःसंन्यासएवात्ति रेचयतीति श्रुतिः) विद्वान् मुंडनको कराकर सहित शिखाके यज्ञो-पवीत का त्याग करदेवै और अक्षर जो परब्रह्म तिसी को सूत्ररूपकरके धारण करै १ संसार से उत्क्रमण

करने के दोमार्गहैं प्रथम क्रियामार्ग है द्वितीय संन्यास मार्ग है दोनों में संन्यासही श्रेष्ठहै क्योंकि श्रुति भी संन्यासको ही श्रेष्ठकहती है ज्ञानके प्रति (अंगिरास्मृतिः संन्यसेद्ब्रह्मचर्य्येणसंन्यसेद्वागृहादपि।वनाद्वासंन्यसेद्विद्वानातुरोऽथवादुःखितः १) विद्वान् जो हैं सो ब्रह्मचर्य्य आश्रम में संन्यास को धारण करलेवे अथवा गृहस्थाश्रमसे संन्यासको धारणकरै अथवा वाणप्रस्थ आश्रम से ग्रहणकरै आतुरहुआभी संन्यासको धारणकरै दुःखी हुआभी संन्यासको धारण करलेवे २ इनस्मृतियोंकरके संन्यासकोही ज्ञानके प्रतिमुख्यसाधनता बनतीहै और कर्मोंकोकरता हुआहीशतवर्ष जीनेकी इच्छाकरै इत्यादि जो श्रुतिहैं सो अज्ञानीपरकहैं मुमुक्षु परक नहींहैंक्योंकि कर्म और कर्मीकी वेदनेनिंदाभी की है (प्लवाह्येतेअदृढ़ायज्ञरूपाअष्टादशोक्तमवरंयेषुकर्मएतच्छ्रेयोयेऽभिनन्दन्ति मूढ़ाजरामृत्युंतेपुनरेवापियन्ति १) यज्ञरूप जो प्लव हैं अर्थात् संसारसे तरनेके जो साधनहैं सो अदृढ़हैं जिन में अठारह कर्मके आश्रय कहेहैं यज्ञ में सोला ऋत्विज होतेहैं एकयजमान एकपत्नी यह अठाराही कर्मकाआश्रय हैं और ज्ञानसे वर्जितहैं इसलिये संसार के तरने में अदृढ़हैं जो पुरुष इसकर्मकोही श्रेयकासाधन जानकर स्तुति करते और हर्षको प्राप्तहोतेहैं वहमूढ़हैं अज्ञानी हैं इसीसे वह पुनःपुनः जन्म मरणको प्राप्तहोते हैं (अविद्यायामन्तरेवर्तमानाःस्वयंधीराः पण्डितम्मन्यमानाः जंघन्यमानाःपरियन्तिमूढ़ा अंधेनैवनीयमाना यथान्धाः २) अज्ञानीजन कर्मी अविद्या के मध्यमें वर्त्तमान

होकर रहतेहैं और अपने को बुद्धिमान् पंडित मानते हैं हमहीं कृतार्थ हैं और वेद के वेत्ता हैं और जरा रोगादि अनेक अर्थोंके समूहों करके पीड़ाको प्राप्तहोते हैं अज्ञानी जो कर्मी हैं सो संसाररूपी चक्र में भ्रमते हैं आत्मदर्शन से रहित हुये जैसे एक अंध करके ले जाया हुवा दूसरा जो अंध है सो दोनों गढ़े में गिरते हैं तैसेही एककर्मी दूसरे को भी कर्मरूपी गर्त में गिरातेहैं जन्ममरणचक्रमें भ्रमते रहतेहैं २ इनवाक्यों करके कर्म कर्मी निंदा करके श्रुति पुनः संन्यास को विधान करतीहै(यदहरेवविरजेत्तदहरेवप्रव्रजेत)जिसकाल में वैराग्य को प्राप्तहोवै तिसीकालमें संन्यास को धारणकरलेवै और यदि कर्मीकाही ज्ञानमें अधिकारहोता तव कर्म और कर्मी की निंदा करके वेद संन्यास को किस लिये विधान करता जिस हेतु से कर्म कर्मी की निंदाकरके संन्यास को विधान किया है इसी से सिद्ध होता है जो कर्मी को ज्ञान में अधिकार नहीं है किंतु अकर्मी का अधिकार है (प्रश्न) वशिष्ठ जनकादि गृहस्थी कर्मी थे और शास्त्रोंमें तिनको ज्ञानी लिखा है अव वह तुम्हारे मत में ज्ञानी नहीं होवैंगे क्योंकि तुम्हारे मतमें तो अकर्मीकाही ज्ञानमें अधिकारहोनेते(उत्तर) गृहस्थ शब्दका क्या अर्थ करतेहो मैं गृहस्थहूं इस अभिमान पूर्वक पुत्र धनादिकों के अभिमान का नाम गृहस्थ है या गृहस्थ के चिह्नों के धारण का नाम गृहस्थ कहतेहो आद्यपक्षतोनहींवनता क्योंकि ब्रह्मविद्याकरके अविद्याकी निवृत्ति होगई अर्थात् ज्ञान के उ-

दय होतेहीं जब अज्ञान निवृत्त होगया तब अज्ञानका कार्य जो अभिमान सो भी साथहीनिवृत्त होजावैगा तब अभिमानके बिना कर्म नहीं होसकेगा क्योंकि ऐसा नियम है जिसको ये अभिमान है मैं क्षत्रीहूं मैं ब्राह्मणहूं मैं कानाहूं मैं बधिराहूं तिसीको कर्ममें अधिकारहै और जिसकोजाति बर्णाश्रमोंकाअभिमाननहींहैतिसकाकर्ममें अधिकारनहीं है इसलियेये प्रथमपक्षतोनहींबनता और यदि चिह्न धारणकानाम गृहस्थकहो सोभी नहींबनता क्योंकि चिह्न धारण तो अकर्मीकोभी तुल्यहै (प्रश्न) संन्यासीकोभी संन्यासके चिह्नोंका अभिमान तो बना है तिसकाभी ज्ञान में अधिकार नहीं होगा क्योंकि अभिमान तो तुल्यही है (उत्तर) अभिमानीका नाम संन्यासी नहींहै (गुरुगीता ॥ सत्कारमानपूजार्थदण्डकाषायधारणः।ससंन्यासीनवक्तव्यःसंन्यासी ज्ञानतत्परः १) जो पुरुष सत्कार और मानपूजा के अर्थकषायदण्डादिकों को धारणकरताहै वह संन्यासी नहीं है जो ज्ञानपर कहै वही संन्यासी है (विजानंतिमहावाक्यं गुरोश्चरणसेवया।तेवैसंन्यासिनःप्रोक्ताइतरेवेषधारिणः)जो महावाक्य के अर्थको धारण करते हैं और गुरुओं के चरणों की सेवाकरके जानते हैं वही संन्यासी हैं जो वेदांत के अर्थको नहीं जानते हैं वहकेवल वेषधारी है संन्यासी नहीं है (शिखासूत्रपरित्यागीवेदांतश्रवणंविना। विद्यमानेपिसंन्यासेपतिएवनसंशयः ३) जिसने शिखासूत्र का परित्याग कर दिया है और वेदांत का श्रवण नहीं करता है तिसको संन्यास के विद्यमान होने परभी वह

पतितही है (सर्वतोप्यभिमानराहित्येनसर्वसंबंधराहि त्यंपरमहंसपरिव्राजोलक्षणं) जो सर्वओर से अभिमान से रहितहो और सर्वके साथ संबंध से रहितहो अर्थात् आसक्ति से रहितहो तिसी को संन्यासी कहा है यहही संन्यासीका मुख्यलक्षणहै (नलिंगधर्मकारणं)लिंग जो दण्डादि चिह्नहैं सो संन्यासरूपी धर्मकाकारणनहींहैंइस स्मृति प्रमाणसे लिंगमें भी अभिमान का त्याग विधान कियाहै इसलक्षणकरकेजोसंपन्नहै तिसीका ज्ञानमेंअधि कारहै चाहे गृहस्थाश्रममेंहो चाहे और किसी आश्रममें हो और जो इसलक्षणकरके युक्तनहींहै तिसका ज्ञानमें अधिकारनहीं है और जनकादिकोंने भी अपनी निरभि मानता दिखाई है (जनक वाक्य॥ अनंतवत्तुमेवित्तंयस्य मेनास्तिकिंचन॥मिथिलायांप्रदीप्तायांनमेदह्यतिकिंचन २) जनक कहतेहैं मेराआत्मरूपी जो धन है सो अनंत है अर्थात् नाश से रहित है और मिथिलापुरी के दग्ध होने से मेरा किंचित् भी दग्ध नहीं होताहै पूर्वोक्त रीति से यह सिद्धहुआ जिसमें अधिकारी के लक्षण घटें व- हीज्ञान का अधिकारी(अब यत्किंचित् यतियों के धर्मों कानिरूपणकरतेहैं॥अत्रिः॥अहिंसासत्यमस्तेयंब्रह्मचर्या ऽपरिग्रहो॥भावशुद्धिहरौभक्तिसंतोषःशौचमार्यवम्१) अ हिंसासत्यभाषणऔर चौरकर्मसे रहितता ब्रह्मचर्यऔर शरीर यात्रा से अधिक का अग्रहण भावशुद्धि अर्थात चित्तकी शुद्धि परमेश्वर में प्रीतिः संतोष यथा लाभ संतुष्ट शौच अंतरबाह्य शुद्धहोना अर्जव कोमलता १ (आहारशुद्धिर्वैराग्यंप्रसादोदयान्नृणाम्। अस्नेहगुरुसु-

श्रूषाश्रद्धाशांतिर्दमःशमः २) अहारकी शुद्धि होनी बै-
राग्यहोना प्रसन्न रहना दयाहोनी किसीमें स्नेह न होना
गुरुसेवा करनी शास्त्र गुरुपर श्रद्धा होनी शांत चित्त
होना दमहोना शमहोना २ (ह्रीस्तपोज्ञानविज्ञानं यो
गोलघ्वशनंधृतिः । अदीनत्वमनुद्धर्षोब्रह्मधीःसमदर्शनं
म् ३) ह्रीः लज्जा तप ज्ञान शास्त्रीयज्ञानहोना अर्थात्
मूर्ख न होना बिज्ञान अपरोक्ष ज्ञानहोना अल्प भोजन
करना धीर्यताहोनी अदीनता होनी किसी का दबाव न
होना ब्रह्मविषयणि बुद्धिहोनी और समदर्शताहोनी(न
शिष्याननुवध्नीत्तमठान्नारभेतृक्वचित् । नव्याख्यामुपयु
ञ्जीतनसेवेत्राजमंदिरम् ४) बहुतशिष्यन बनावै और
मठको न बांधै और व्याख्यान करके जीविका को न
करै और राजमंदिरको सेवन न करै ४ (मेधात्तिथिस्मृ-
तिः ॥ यस्तुप्रब्रजितोभूत्वापुनःसेवेतमैथुनं । षष्टिब्र्षस
हस्राणिबिष्टायांजायतेकृमिः १ शून्यागारेषुघोरेषुआखु
र्भवतिदारुणः । सतिर्यक्स्यात्ततोगृध्रःश्वावैद्वादशवत्स
रः २खरोबिंशतिबर्षाणिदशबर्षाणिशूकरः । आयुष्योऽफ
लितोबृक्षोजायतेकंटकान्वितः ३ ततोदावाग्निनादग्धः
स्थाणुर्भवतिकामुकः । स्थावराच्चपरिभ्रष्टोयोनिष्वन्न्यासु
गच्छति ४) जोसंन्यास को धारणकरके पुनः स्त्रीकेसाथ
भोग करता है वह साठहजार वर्ष विष्ठा में कृमि योनि-
को प्राप्त होताहै१ पश्चात् शून्य मंदिर में अथवा शून्य
ग्रहमें भारीमूसा होताहै पुनःतिर्यक् योनिमेंप्राप्त होताहै
पश्चात् गृध्रहोताहै पुनः द्वादशवर्ष कूकरकीयोनिकोप्राप्त
होताहै२पश्चात् बीसवर्षपर्यंत गर्द्दभयोनिको प्राप्तहोता

हैं पुनः दशवर्ष शूकर की योनिको प्राप्त होता है ३ प-
श्चात् दावाग्नि में दग्धहोकर कामुक जो है सो स्थाणु
योनिको प्राप्त होता है फिर अन्य योनियों में प्राप्तहोता
है ४ (पितामातास्वसाभ्रातास्नुषाजायासुतस्तथा। ज्ञा
तिबंधुसुहृद्वर्गोदुहितातत्सुतादयः ५ यस्मिन्देशेवसंत्येते
नतत्रादिवसंवसेत्। द्वेषःशोकोभवेतत्ररागहर्षादयोमलाः
६ अश्रुपातंयदाकुर्याद्भिक्षुःशोकेनचार्द्रितः।योजनानांशतं
गत्वातदापापात्प्रमुच्यते ७ आत्मवत्सर्वभूतानिपश्यन्
भिक्षुश्चरेन्महीं। अंधवत्कुब्जवद्वापिबधिरोन्मत्तपिशा
चवत् ८) पितामाता भगिनी स्नुषास्त्री पुत्र और ज्ञातिके
लोक संबंधी सुहृद्वर्ग कन्या नाती आदिक ५ जिसदेश
में यहलोग वसतेहों वहांपर एक दिनभरभी निवासनकरै
तहां पर निवास करने से द्वेषहोगा और शोक रागह-
र्षादिक उत्पन्न होवेंगे ६ और सम्बन्धी लोक भिक्षुकेशो-
ककरके जब अश्रुपात करेंगे तब बहुत योजनों से दूर
जाकर भिक्षुतिसपापसे मुक्तहोगा अपने आत्माके तुल्य
संपूर्ण भूतोंको देखता हुआ भिक्षु पृथिवी में विचरै अंध
कोंकी नाईं कुब्ज के तुल्य बधिरे की सदृश पिशाचवत
होकर भूमिपर विचरै (स्कंद पुराण ॥ गंगा कूलेवसे
न्नित्यंभिक्षुर्मोक्षपरायणः । सिद्धक्षेत्रंतुविज्ञेयंयावद्धनुश-
तत्रयम् १) मोक्षपरायण जो भिक्षुहै सो नित्यही गंगाके
तीरमेंनिवासकरै क्योंकि गंगाकातीरतीनसौ धनुषप्रमाण
तक सिद्ध क्षेत्रहै १(मनुः॥दृष्टिपूतंन्यसेत्पादं वस्त्रपूतंपिबे-
ज्जलं। सत्यपूतांवदेद्वाचंमनःपूतंसमाचरेत् १)दृष्टिकरके
पवित्रहुआ चरणोंका विन्यासकरै और सत्यकरके पवित्र

हुई वाणी से भाषण करै अर्थात् मिथ्या भाषण न करै और वस्त्रसे छानकर जल को पानकरै (व्यासस्मृतिः॥ चतस्रो घटिकाः प्रातररुणोदय उच्यते । यतीनांस्नान कालोयं गंगांभः सदृशः स्मृतः १) चार घड़ी सूर्य उदय तक प्रातःकाल कहा है सोई प्रातःकाल यतियों के स्नानकाकाल है तिस काल में जिस किसी जल से स्नान करता है वह गंगाजल के सदृश कहा है (यावज्जीवंजपेन्मंत्रं प्रणवं ब्रह्मणोवपुः) यावत्पर्यंत जीता रहै प्रणव काही नित्य जपकरै क्योंकि जो बारहहजार ॐकार का जप एकाग्र चित्त होकर नित्यही करता है तिसको द्वादश मास में आत्मसाक्षात्कार होताहै (बृहस्पतिः॥ श्रवणंमननं ध्यानं स्वाध्यायंज्ञानमेवच । सद्योनश्यंतितांयां तिसकृच्छ्राद्धान्नभोजनात् १ अंतःकरण शुद्धिस्तुनस्यात्तस्यैवसर्वदा।यदान्नं प्रेतयोग्यंचभवेत्संकल्पमात्रतः२)श्रवणमननध्यान स्वाध्याय शास्त्रीयज्ञान यह सब तत्कालही नाशको प्राप्तहोजातेहैं जो यती एकबारभी श्राद्धके अन्न को भक्षण करता है १ जो अन्न प्रेत के लिये संकल्प किया है तिस अन्नको जो यती भोजन करता है तिसके अंतः करण की शुद्धि सर्वदा काल नहीं होती है (याज्ञवल्क्य ॥ यति पात्राणि मृद्वेणुदार्वालावुमयानिच।सलिलंशुद्धिरेतेषांगोबालैश्चावघर्षणम् १) यतिकेचारपात्र कहे हैं एक मृत्तिकाका बांसका लकड़ीका फलका अर्थात् तुंबीका सो इनचारों पात्रों की जलकरके शुद्धि होती है या गौ के पूंछसे स्पर्श करने से (अत्रिः॥ कांस्ये कार्यसकेचैवआयसेताम्रभाजने। भुंजन् भिक्षुर्नलिप्येतलिप्यंते

गृहमेधिनः १) हाथपररखकरवस्त्रपररखकरलोहकेपात्रमें तांबेकेपात्र में भोजन करताहुआ भिक्षुपापकरके लिपायमान नहीं होता और गृहस्थी इनमें भोजन करता हुआ लिपायमानहोताहै (शातातपस्मृतिः॥ भिक्षामाधुकरीनाम सर्वपाप प्रणाशिनी। अवधूताच पूताचसोमपानंदिनेदिने १ भिक्षाहारोनिराहारोभिक्षानैवप्रतिग्रहः।श्रोत्रियान्नंचभैक्षंचहुतशेषंचयद्धविः २)माधूकरी भिक्षा जो है सो संपूर्णपापोंका नाशकरने हारी है लोकदृष्टि करके मलिनहै परंतु शास्त्रदृष्टिसे अमृतपानके तुल्यहै दिनदिन प्रति १ भिक्षाहार जो है सो निराहार है और भिक्षाप्रतिग्रहसे वर्जित है श्रोतिअन्न भिक्षान्न हविका शेषअन्न जो है (आनखाग्राच्छोधयेत्पापंतुषाग्निरिवकाञ्चनम्) सो नखोंसे लेकर संपूर्ण शरीरको शुद्धकर देताहै ३ (अंगिरास्मृतिः॥ संन्यासंचैवयःकृत्वापुनरुत्तिष्ठतेद्विजः। नतस्यनिष्कृतिःकार्याःस्वधर्मात्प्रच्युतस्यवै १) जोसंन्यासको धारण करके पुनः संन्यासको त्यागकर गार्हस्थ्य कर लेता है तिसका प्रायश्चित्तविधान नहीं है क्यों कि वह स्वधर्मसे पतित होगया (विष्णुस्मृतिः॥ चाण्डालाः प्रत्यवसिताःपरिव्राजकतापसाः। तेषांजातान्यपत्यानि चाण्डालैसहवासयेत् २) जो संन्यासाश्रमको आरूढ होकर और तिसी आश्रम में स्त्रीको रखकर संतति को उत्पन्न करताहै तिसीका नाम चाण्डाल कर्म है तिसकी संततिको राजा चण्डालों में वास करावै (परमहंसोपनिषद्॥ काष्ठदण्डोधृतोयेनसर्वाशीज्ञानवर्जितः। सयातिनरकान्घोरान्महारौरवसंज्ञिकान् १) जिस यति ने

काष्ठदण्डको धारण किया है और मांस मदिरा आदि कोंको भक्षण करता है सो घोरनरकों को गमन करता है (दक्षस्मृतिः ॥ पारिव्राज्यंगृहीत्वातुयःस्वधर्मेनतिष्ठति । श्वपादेनांकयित्वातुराजाशीघ्रंप्रवासयेत् २) जो संन्यासको ग्रहण करके पुनः अपने धर्म में स्थित नहीं रहता राजा तिसके मस्तकमें दागदेकर शीघ्रही तिसको देशसे निकासदेवै (अत्रिः ॥ यातुपर्युषिताभिक्षानैवेद्येकल्पितातुया। तामभोज्यांविजानीयाद्दाताचनरकंव्रजेत् १) दुर्गन्धि करके युक्त और वासीअन्न जो भिक्षुके प्रतिदेता है और जो किसी देवताके अर्पणकिया हुआ अन्न भिक्षा में देता है भिक्षुः तिसको अभक्ष जाने और तिस अन्न का देनेवाला दाता नरकको पतित होता है (नारद ॥ श्राद्धभोजीयतिर्नित्यमाशुगच्छतिशूद्रताम्। तादृशंकश्मलंदृष्ट्वासचैलोजलमाविशेत् १) जो यति श्राद्धकाअन्न नित्यही भक्षण करता है सो शीघ्रही शूद्रभाव को प्राप्त होजाता है तिसको देखकर सचैल स्नान करै १ (जमदग्निः ॥ मूलाङ्कुरेषुपुष्पेचदलेषुचफलेषुच । स्थावराणांचोपमर्देप्राणायामास्त्रयस्त्रयः १ धान्यंवृक्षंलतांयस्तु स्थावरंजंगमंतथा । उत्पाटयतिमूढात्माअवीचीनरकंव्रजेत् २) मूल अंकुर पुष्प फलवृक्ष इनको यति यदि उत्पाटन करै तब तीन प्राणायाम करके शुद्धि को प्राप्त होताहै १ जो मूढात्मा यति धान्य वृक्ष लता स्थावर जंगम को उत्पाटन करता है सो अवाची नाम नरक को प्राप्त होताहै २(हरीतस्मृतिः ॥ अहोरात्र्याचयान्जन्तून्हिनस्त्यज्ञानतोयतिः। प्राणायामान्दशाष्टौचप्रायश्चि

त्तंयतिश्चरेत् ३) अज्ञानसे दिनरात्री में जितने कीट मशकादि जीवोंकी हिंसा होती है तिस दोषके दूरकरने के लिये अठारह प्राणायामों को करै (अत्रिः ॥ नस्ना नमाचरेद्भिक्षुःपुत्रादिनिधनेश्रुते। पितृमातृक्षयंश्रुत्वास्ना त्वाशुद्ध्यतिसाम्बरः ४ नकुर्यात्सूतकंभिक्षुःश्राद्धपिण्डो दकक्रियाः ५) पुत्रादिकों के मरणको श्रवण करके भी यति स्नानादिकों को न करै और माता पिता के मरण को सुनकर वस्त्रों के सहित स्नान करने से शुद्ध होताहै ४ यति सूतकको कदापि न मानैं श्राद्ध पिण्डदान जल दानादि क्रियाको भी न करै ५ (ज्ञातीनांतुकुलेभिक्षुर्न भिक्षेतकथञ्चन । आचरेच्चयदाभिक्षांतदाचान्द्रायणंचरे त् ६) संबंधियोंकी कुलमें भिक्षा चरण न करै यदि संब न्धियों के ग्रह में भिक्षा करलेवै तव चान्द्रायण व्रतको करके शुद्ध होता है ६ (देवलस्मृतिः ॥ उपानहौविना भिक्षुःकृत्वाभिक्षाटनादिकम् । मार्गेमूत्रसमाकीर्णेसम्यक् स्नानेनशुद्ध्यति ७) जूता पहने के विना भिक्षाटनादि यदि करै तव मूत्र विष्टादिको करके युक्त मार्ग में चलने से पुनः स्नान करके शुद्धिको प्राप्त होता है (परमहंसो पनिषद् ॥ सर्वान्कामान्परित्यज्याद्वैतेचपरमास्थितिः । ज्ञानदण्डोधृतोयेनएकदण्डीसउच्यते ७) संपूर्ण काम नाका त्याग करके अद्वैतमें स्थिर मति होकर ज्ञानरूपी दण्डको जिसने धारण किया है वही एक दण्डी है काष्ठ दण्डको धारण करने हारा एकदण्डी नहीं है ७ (श्रुतिः ॥ आत्मानमात्मनासाक्षाद्ब्रह्मबुध्वासुनिश्चलम् । देहजा त्यादिसम्बन्धान् वर्णाश्रमसमन्वितान् १ वेदशास्त्रपुरा

णादिपादपांशुमिवत्त्यजेत् । एकाकी निस्पृहस्तिष्ठेन्नहि केनसहालयेत् २) अपने आप करके अपने आत्मा को साक्षात् ब्रह्ममयहूं इसप्रकार निश्चयकरके और देहजातीआदिक संबन्धोंका और वर्णाश्रमादिसंबंधोंको त्याग करदेवे १ वेद शास्त्र पुराणादिकों को पादकी धूलिकी न्याईं त्यागदेवै एकाकी इच्छासे रहित स्थिर मति सहायता से रहित होकर विचरे यतियों के धर्मों के सहित संन्यासका निरूपण करदिया पूर्वोक्त साधनों करके संपन्न जो अधिकारी है सो आत्मज्ञान ज्ञान के लिये ब्रह्मनेष्ठि ब्रह्मश्रोत्रिगुरुके समीपप्राप्तहोवे पूर्व ग्रंथकरके यह सिद्ध हुआ अब इसकिरणके विषयको संक्षेपसे चौपाई में निरूपण करतेहैं ॥चौ०॥ किरण दूसरेमें जोहि भाषा। करूंविचारसहितअभिलाषा १ प्रथमबिवेकनिरूपणजानो तापाछे वैराग्य पछानो २ गर्भ दुःखमें सबहिं दिखाये। देह दुःख नीके पुनिगाये ३ बाल अवस्थामें दुखभारी। कहन सकैं अतिही नाचारी ४ युवाअवस्थाहैदुखरूपा जेहिमें काम सतावे भूपा ५ वृद्धा में आदर नाहिं होवै। दुरदुर होते काल बिगोवै ६ मृत्युसमयअतिकठिनकराला। डरपै सकल जननकी माला ७ नरक दुःख में सब दरशाये। संख्या तिनकी कही न जाये ८ काल ज्ञानका कियो विचार। नहिं कछु बिगरयो करो विचार ९ स्त्री दुखनका मूल बखानी। जानै चतुर सगुरु नरज्ञानी १० पुत्र दुःखसम दुखहि नकोई। तिसते अधिक शूल नाहिं होई ११ धन दुखसबते कठिन कराला॥ करै दीन नीचन के आला १२ स्वर्गादिक भोग हैं जेते॥

दुःख मूलजानों सब तेते १३ इन्द्री सबते महादुखदाई। तृष्णा इनसे अधिक बताई १४ ताते इन सबको तज दीजे। बैठे कांत बिचार पुनि कीजे १५ मन निरोध का कयो प्रकारा। पुनि सम्पद्षट सहित विस्तारा १६ यती धर्म सब किये बखान। जिनको धारण करैं महान १७ किरण दूसर पूर्ण पुनिभयो। परमानंद आत्म पदलयो १८॥ दो०॥ जो असकोउ धारण करै पावै पद निर्वा- न। परमानंद पदको लहै संशयनहिं असआन १९॥

इतिश्रीसिद्धान्तप्रकाशनामकग्रन्थेसाधनचतुष्ट यवर्णनोनामद्वितीयःकिरणः॥ २॥

दो०॥ शुद्धरूपआनंद घन सदाहि अचलअरू प॥ सोइ मेरोहै आत्मा परमानंद सरूप॥ १॥प्रश्न॥ साधन चतुष्टसम्पन्न अधिकारि ब्रह्म नेष्टि ब्रह्मश्रोत्रि गुरुके समीपजावै आत्म ज्ञानकी प्राप्तिके ऐसा आपने कहाहै सो आत्मज्ञानकी प्राप्ति शास्त्र के श्रवण से और तर्कों करके होजावैगी आचार्य्य के पास जानेका क्या प्रयोजनहै (उत्तर) बिनाहीं आचार्य्य के केवल शास्त्र के श्रवणकरनेसे और वेदवाह्य तर्कों से आत्मज्ञान की प्राप्ति नहीं बनती क्योंकि श्रुति ने ऐसा नियम कियाहै (आचार्य्यवान् पुरुषोवेद) आचार्यवान्‌ही पुरुषआत्मा कोजानता है और वेद वाह्य तर्कों का श्रुति निषेध भी करतीहै (नैषातर्केणमतिरापनेयाप्रोक्तान्येनैवसुज्ञानाय प्रेष्ट) हेप्रियतम यह जो आत्म विषयणी बुद्धि है सो त- र्कों करके प्राप्तहोनेके योग्य नहींहै किंतु आत्मवित् आ चार्य करके निरूपण कीहुई सुष्टु बोध के योग्य होती है

और केवल शास्त्र के श्रवण से भी आत्मबोध नहीं होता क्योंकि श्वेतकेतु नाम करके आरुणि का पुत्र द्वादशवर्ष पर्यंत गुरुकुल में निवास करके सांगो पांग वेदों का अध्ययन करताभया परंतु आत्मबोध को न प्राप्त होता भया अंतमें पितासेही आत्मबोध को लंभता भया इसकी गाथा छांदोग्य में प्रसिद्ध है इसी हेतु से आचार्य्य के समीप जाकर गुरुमुख से तत्व मस्यादि वाक्यों का श्रवण करै क्योंकि श्रुतिने ज्ञान के के लिये श्रवणादिकोंकोही मुख कारणता कहीहै(श्रुतिः॥ श्रोतव्यःश्रुतिवाक्योभ्योमन्तव्यश्चोपपत्तिभिः। श्रुत्वा चसततंध्यायेदेतेदर्शनहेतवः १) श्रुति वाक्यों करके आत्मा श्रवण करने के योग्य है और युक्तियों करके मनन करने के योग्यहै श्रवण करके निरंतर ध्यान करै क्योंकि ये तीनहीं आत्म दर्शन के हेतु हैं १ और आचार्य्यसे तावत्पर्यंत श्रवणादिको करै यावत्पर्यंत यथार्थ बोधको प्राप्त न होवै क्योंकि अज्ञानही बन्धका हेतु है और ज्ञानबन्धका नाशक है तिसकारण ते आत्मज्ञान के निमित्त श्रवणादिक करने योग्य हैं (व्यासवाक्य॥ गुरुमूलाःक्रियाःसर्वाभुक्तिमुक्तिफलप्रदाः। तस्मात्सेव्यो गुरुर्नित्यंयुक्तार्थस्तुसमाहितैः ३) जितनी क्रिया भोग मोक्षरूप फलके देनेवाली हैं सो संपूर्ण गुरु मूलकहैं तिस कारणते कल्याणार्थी पुरुषने एकाग्र चित्त होकर गुरुही सेवने योग्य है (गुरोर्यत्रपरिवादोनिन्दावापिप्रवर्तते। कर्णौतत्रापिधातव्यौगन्तव्योवाततोऽन्यतः २) जिस स्थानमें गुरुकी निंदा प्रवृत्तहो तहां पर कानोंको

बंद करके अन्यत्र गमन करजावै २ (प्रश्न) विना लक्षणके शिष्य ब्रह्मवित् गुरुको कैसे पहँचानेगा और ब्रह्मवित्‌ही से आत्म ज्ञानका नियम है इस कारणते ब्रह्मवित्‌का लक्षण कहनाचाहिये और उपदेशके योग्य जो शिष्य तिसकाभी लक्षण कहना चाहिये और जो शिष्य उपदेश के योग्य नहीं है तिसका भी लक्षण कहना चाहिये और यदि दैवगति से अबोध गुरु प्राप्त होजावै तब तिसका परित्याग करै वा नहीं करै यदि त्याग नहीं करैगा तब शिष्यको तिस अबोध गुरु से आत्म लाभ नहीं होगा और यदि त्यागकरै तब जगत् में निंदा होगी और लोक कहते हैं (गुरु गुंगे गुरु बावरे गुरु देवनके देव) अर्थात् यदि गुरु गुंगा भी हो या वावराभी हो तदपि वह देवनका देव है यह तो महान विरोध है क्योंकि जो गुंगा बावरा होगा वह शिष्य को कल्याण कैसे करेगा इसलिये प्रमाण और युक्ति पूर्वक इन प्रश्नों का उत्तर कहिये (उत्तर) जो तुमने प्रश्न किये हैं तिनका क्रमसे उत्तर सुनो प्रथम तो गुरु दो प्रकारकेहैं एक लौकिक दूसरेवैदिक इसी प्रकार शिष्य भी दो प्रकारके जानलेने और लौकिक गुरुवह हैं जो केवल शिष्यमात्र ही करना जानते हैं अपने लाभके लिये तिनकी दृष्टि इसी में रहती है जो अधिक शिष्य होवैंगे तब अधिक लाभहोगा कल्याण अकल्याण को वह नहीं जानते हैं और लौकिक शिष्य वह कहाते हैं जो इतनाही जानते हैं जो गुरुमुख होना अच्छाहै सो इनके लक्षण करने की यहां आवश्यकता नहीं है क्यों

कि इस स्थल में मुमुक्षु शिष्य और ब्रह्मवित् गुरुका प्रकरण चला है इसलिये वैदिक गुरु अर्थात् वेदप्रतिपाद्य गुरुका लक्षण कहते हैं (गुरुगीता ॥ गुकारः प्रथमोवर्णोमायादिगुणभासकः । रुकारोऽस्तिपरंब्रह्म मायाभ्रांतिनिवारकः १) गु जो प्रथम अक्षर है सो मायादि गुणों का प्रकाशक है और रु जो द्वितीय वर्ण है सो मायारूपी भ्रांति का नाशक है १ (गुकारश्चांधकारोहिरुकारस्तेजउच्यते। अज्ञानग्रासकंब्रह्मगुरुरेवनसंशयः २) अथवा गुवर्ण अंधकार का वाचि है और रुकार तेजका वाचि है सो तेज अंधकारका नाशक है अर्थात् जो अविद्या रूपी अंधकार को नाश कर देवै वही ब्रह्म रूप गुरु है इस में संशय नहीं है (सर्वश्रुतिशिरोरत्ननीराजितपदाम्बुजम्। वेदान्तार्थप्रवक्तारंतस्मात्सम्पूजयेद्गुरुम्३) सर्व श्रुति शिरोरत्न नाम वेदान्त का है तिस करके भूषित हैं चरण कमल जिसके और वेदांत अर्थ का जो वक्ताहै वही गुरु पूजन करने योग्य है और वैदिक शिष्य नाम साधन चतुष्टय संपन्न अधिकारी का है सो तिसका लक्षण वैराग्यादि साधन सम्पति करके युक्त होनाही है॥ गुरु शिष्यके लक्षण कह दिये और जो तुमने प्रश्न कियाहै जो यदि अज्ञानी गुरु मिलजावै तो तिसका त्यागकरै वा नहीं करै अब इसका उत्तर शास्त्र प्रमाणसे सुनिये॥ (गुरोरप्यवलिप्तस्यकार्याकार्यमजानतः। उत्पथप्रतिपन्नस्यपरित्यागोविधीयते१) जो (लिप्सु) लोभी गुरुहै और कर्तव्य अकर्तव्य नहीं जानता है और निषिद्ध मार्ग में प्रवृत्त है तिसगुरुका-

परित्यागही करना उचित है (गुरुगीतायां॥ज्ञानहीनो गुरुस्त्याज्योमिथ्यावादिविडंबकः।स्वविश्रांतिनजानाति परशांतिकरोतिकिम्(२) ज्ञानसेहीन जो गुरु मिथ्यावादी और दांभिक तिसका त्यागही करना उचित है क्योंकि अपने कल्याणको तो वह जानताही नहीं है परका वह कल्याण क्या करेगा जैसे शिलाको अपने तरनेका तो ज्ञानही नहीं है परको वह कैसे तरावैगी ज्ञान लुप्त गुरु के त्याग में इत्यादि अनेक वाक्य कहे हैं (मधुलुब्धो यथाभृंगःपुष्पात्पुष्पांतरंव्रजेत्॥ ज्ञानलुब्धस्तथाशिष्यो गुरोर्गुर्वंतरंव्रजेत(४) जैसे मधुकरके लुब्ध जो भ्रमरहै सो एक पुष्प से पुष्पांतर को गमन करता है तिसी प्रकार ज्ञान लुब्ध जो शिष्य है सो एक गुरुसे गुर्वंतर को प्राप्त होवै जबतक आत्मवित् गुरु न मिलै तबतक पूर्वपूर्व अज्ञानी गुरुओंका त्यागही करता चलाजावै शास्त्र प्रमाण से और जो तुमने शंका करी है जो लोककहते हैं(गुरु गुंगे गुरुबावरे) सो इसजगह गुंगेपदके अर्थको लोग नहीं जानते हैं यदि गुंगे पदका अर्थ जिह्वा से हीन करोगे और बावरे पदका अर्थ पगला करोगे तब महान् विरोध होगा क्योंकि जिसकी अपनी जिह्वाही नहीं और जो पागलहै वह उपदेशक्याकरेगा तिसको तो उपदेश बनताही नहींहै किंतु गुंगे पदका यह अर्थ है (इदमिष्टमिदंनेतियोऽश्नन्नपिनसज्जते। हितसत्यंप्रियंवक्तितमजिह्वंप्रचक्षते५) जो भक्षण करताहुवाहै बस्तु इष्टहै यह अनिष्टहै इसप्रकार संसक्तिकोनहीं प्राप्त होता है और हितसत्य प्रियबाणीको जो कथन करताहै तिसका

नाम अजिह्वा है अर्थात् गूंगा है लोक प्रसिद्ध जिह्वा
रहित गूंगा नहीं लेना॥(मनुः॥ संदिग्धःसर्वभूतानांवर्णा
श्रमविवर्जितः॥ अंधवज्जडवच्चापिमूकवच्चमहींचरेत्॥
और संपूर्ण भूतोंकरकेसंदिग्धहुआ अर्थात् जिसकेवर्णा
श्रमको कोई भीनजानसकै इसप्रकारका वर्णाश्रमअभि-
मान से रहित जो आत्मवित् सो अंधजड़ मूककीनाईं अ
र्थात् पागलकीनाईं भूमिमें विचरै सो बावरे पदकरके मनु
उक्तबावरा लेना लोक प्रसिद्ध नहीं लेना तब कोई भी
विरोध नहीं आवेगा अब प्रकृत प्रसंगको कहते हैं
पूर्व उक्त साधनों करके सम्पन्न जो मुमुक्षु है (सगुरुमे
वाभिगच्छेत् समित्पाणिःश्रोत्रियंब्रह्मनिष्ठं) हाथमें कुछ
पदार्थ लेकर ब्रह्मश्रोत्रिय ब्रह्मनेष्ठि गुरुके समीप गमन
करै श्रुति ने यह शिष्यके प्रति नियमको दिखाया है
और आचार्य का नियम भी कहा है मुंडकमें नीतिपूर्वक
प्राप्त भया जो शिष्य है तिसको यथावत् ब्रह्म विद्याका
उपदेश करै (प्रश्न) यद्यपि शिष्यको गुरुमुखसे वाक्य
श्रवण करने से बोध होताहै तथापि इसबोधका अधि-
कारीजीवहै या कोई अन्यहै(उ०)ब्रह्मबोधका अधिकारी
ब्रह्मही है ब्रह्मसे भिन्न अन्य अधिकारी नहीं है जैसे
कर्ण ने अपने को कुंती पुत्रके अज्ञान करके अपने में
सूतपुत्रता कल्पनाकीथी तैसेही ब्रह्मनेभी अपने में जी-
वत्वभाव अज्ञान करके कल्पा है तिस जीवत्वके दूर
करने के लिये ब्रह्मबोधका अधिकारी ब्रह्मही है (प्रश्न)
जन्म मरणादि दुःखसागर में निमग्न जो जीव है सो
कैसे इस दुःखसे छूटैगा (उत्तर) तत्वमस्यादि महा-

वाक्यों करके उत्पन्नभया जो ऐकात्म्य ज्ञान तिसीकरके
यह जीव जन्म मरणरूपी दुःखसे छूटैगा (प्रश्न) ज्ञानजो
है सो अज्ञानकोही नाशकरताहै और अज्ञानमात्र का
नाशक जो जीव ब्रह्मका ऐक्य ज्ञानहै सोदुःखरूप सागर
का नाशक कैसे होगा (उत्तर) यद्यपि ऐक्य ज्ञानको दुःख
रूप समुद्र के नाशकरने में साक्षात् साधनता नहीं है
तथापि संपूर्ण दुःख का हेतु जो मूल अज्ञान तिसका
नाश होने से दुःखाब्धि का भी नाशक बनता है (ऐ-
क्यज्ञानं विनानान्यदस्त्यात्माज्ञाननाशकम्। तन्नाशश्च
विनानास्तिजन्मादिदुःखसंक्षयः १) आत्मा के अज्ञा-
नका नाश ऐक्य ज्ञानसे बिना और साधन नहीं है
और अज्ञानके नाशसे बिना दुःखों का नाश भी नहीं
बनता तथाच श्रुतिः (ऋतेज्ञानान्नमुक्तिः। नान्यःपन्था
विद्यतेऽयनाय ॥ ज्ञात्वातंमृत्युमत्येति) ज्ञानसे बिना
और कोई मुक्तिका साधन नहीं है और मोक्षके प्रति-
ज्ञान से बिना दूसरा कोई मार्ग नहीं है तिस देव परमा-
त्मा को जानकर मृत्युको अतिक्रमण करजाता है इन
श्रुति स्मृति प्रमाणों करके जन्म मरणादि दुःख का
नाशक जीव ब्रह्मकी ऐक्यताका ज्ञान कारणहै हेशिष्य
सावधान होकर सुनो तुम जीव नहीं हो (प्रश्न) हे
भगवन् मैं कौन हूं (उत्तर) तुम ब्रह्महो तुमहीं को
संपूर्ण वेदवाक्य ब्रह्मरूपता कथन करते हैं (एकमाद्यं
तरहितं चिन्मात्रममलंततं॥ खादप्यतितरांसूक्ष्मंतद्ब्र-
ह्मासिनसंशयः१) एक चैतन्य स्वरूपब्रह्म उत्पत्ति नाश
से रहित और शुद्ध परिपूर्ण आकाश से भी जो सूक्ष्म

है सो ब्रह्म तुमहींहो इसमें संशय नहीं है १ (परंब्रह्म सर्वात्मा विश्वस्यायतनंमहत्॥ सूक्ष्मात्सूक्ष्मतरंनित्यं तत्त्वमेवत्वमेवतत् २) जो परंब्रह्म सर्वात्मा संपूर्ण विश्वका आश्रय सर्वसे महान्है और सूक्ष्म जो आकाशादि तिन से भी जो सूक्ष्मतरहै नित्यहै सो तुमहींहो और तुम सो हो २ (आदिमध्यावसानेषु दुःखंसर्वमिदंयतः॥ तस्मात्सर्वं परित्यज्यतत्त्वनिष्ठोभवानघ ३) आदिमध्य अंततीनोंकाल में यहजगत् दुःखरूप अनुभव प्रमाणकरके सिद्धहै इसी हेतुसे इसका परित्यागकरके हे अनघ निष्पाप तुम स्वरूपमें स्थिरहो ३ (सर्वव्यापारमुत्सृज्य अहंब्रह्मेतिभावयति॥ अहंब्रह्मेतिनिश्चित्य अहंभावंपरित्यज ४) संपूर्ण व्यापारोंका त्यागकरके अहंब्रह्म अर्थात् मैं ब्रह्महूं इस प्रकारका चिंतवन करके मैं ब्रह्महूं ऐसा निश्चय करके अहंभावका परित्याग कर ४ हे शिष्य लोकवार्ता जो है आत्माके विस्मरण करानेवाली तिनको अवसर न देकर अपने स्वरूपका तुम चिंतवन करो क्योंकि (तत्त्वमेवत्वमेवतत्) इत्यादि श्रुति वाक्य तुमहीं को ब्रह्मरूपता कथन करते हैं (प्रश्न॥ तत्त्वमेवत्वमेवतत्) तत्त्वमसि इस श्रुति में जो तत्पद और त्वंपद तिनके अर्थ के जाने विना महावाक्यके अर्थका ज्ञान कैसे होगा इसी हेतुसे प्रथम तत्त्वं पदोंके अर्थोंकोकहिये तदनन्तर महावाक्यके अर्थ और लक्षण को कहिये जिसके जाननेसे मेरे को शीघ्रही आत्मबोध प्राप्तहोवे (उत्तर) छांदोग्य उपनिषद् में उद्दालक ऋषिने श्वेतकेतु नामक पुत्र के प्रति तत्त्वमसि महावाक्य का उपदेश किया है सो तत्त्वमसि

इसवाक्य में तीनपदहैं ततपद त्वंपद असिपद सो तत पद ईश्वर का वाचक है त्वंपद जीवका वाचक है असि पद ऐक्यता का वाचकहै अर्थात् जीव ब्रह्मके अभेदका बोधकहै और जो अभेदका बोधवाक्यहै तिसी को महा-वाक्यकहाहै (तत्वमसि अहंब्रह्मास्मि प्रज्ञानं ब्रह्मअय-मात्मा ब्रह्म) यह चार वेदोंके चार महावाक्यहैं महावा-क्यका लक्षण तुमको कहदिया अब महावाक्योंके अर्थ को कहतेहैं प्रथम ऋग्वेद की शाखागत जो महावाक्य है प्रज्ञानंब्रह्म इसके अर्थ को कहते हैं अंतःकरण की तत्तद्वृत्ति उपहित जो चेतन तिसवृत्ति उपहित चेतनकरके दर्शन के योग्य जो रूपादिक हैं अर्थात् वृत्ति उपहित होकर चेतन रूपको देखताहै शब्दको सु-नताहै गंधको ग्रहण करता है वाणीको बोलता है रस-ना करके स्वादु अस्वादु रसको जानता है और अंतः-करण की वृत्तियों के भेदकरके लक्षित जो चेतन तिस-का नाम प्रज्ञान है और ब्रह्मासे आदि लेकर संपूर्ण प्रा-णियों में जो एकही व्यापक चेतन है तिसका नाम ब्रह्म है और सर्वत्र स्थित जो प्रज्ञान चेतन और व्यापक चेतन सोई मेरे में भी स्थितहै और उपाधियोंको त्याग कर तिनका अभेदहै इसहेतुसे प्रज्ञान ब्रह्मरूपहै प्रज्ञान नाम जीवका है अर्थात् जीवही ब्रह्म रूप है यह सिद्ध भया १ अब यजुर्वेदकी शाखागत जो (अहंब्रह्मास्मि) महावाक्यहै तिसके अर्थको दिखाते हैं जो चेतन पूर्ण है और स्वभावसेही देशकाल वस्तु परिच्छेद रहितहै सोई माया करके कल्पित जगत् में ब्रह्म विद्याका अधिकारी

शमादि साधनों करके युक्त और विद्याके संपादनके योग्य श्रवणादि अनुष्ठान वाले मनुष्य शरीर में सूक्ष्म शरीरका भी साक्षी अविकारता से स्थित होकर स्फुरण-मान प्रकाशमान जो है सोई लक्षणाकर अहंशब्द करके कथन किया है और स्वतः परिपूर्ण स्वभावसेही देश काल वस्तु भेदसे रहित जो परमात्मा है सो इसवाक्य में ब्रह्मपद करके कथन किया है और इसी महावाक्य गत जो अस्मिपद तिसके साथ सामानाधिकरणताको लभताहै अर्थात् जीवब्रह्मकी ऐक्यताको बोधन करता है इस हेतुसे जीवही ब्रह्मरूप है २ अब अथर्वण वेद गत जो महावाक्यहै (अयमात्माब्रह्म) इसके अर्थको दिखाते हैं अयं इस पदकरके स्वप्रकाश अपरोक्ष का ग्रहण है सोहंकारसे लेकर स्थूल शरीर पर्यंत जितना संघातहै तिसका अधिष्ठान करके साक्षिताकरके अंतर जो है सोई आत्मा इस वाक्यमें कथन किया है तिसी की जीवसंज्ञा भी है और मिथ्याभूत संपूर्ण जगत् का अधिष्ठान रूपकरके अर्थात् मिथ्याभूत जगत् की वाधि-ताका अवधि भूत जो सच्चिदानंद रूपहै सोई ब्रह्मशब्द करके कथन कियाहै सो जीव आत्माही ब्रह्म है ३ अब सामवेदीय छांदोग्य श्रुति गत जो तत्त्व मसि महावाक्य है तिसके अर्थको दिखातेहैं जो सृष्टिसे पूर्वभी औरवर्त्त-मान कालमें भी और अंतकालमें भी सत्यरूप है और जो देशकाल वस्तुकृत भेदसे रहित है सोई तत्पद करके ग्रहण किया है और जो देह इन्द्रियों करके रहित और देह इन्द्रियों करके प्रतीयमान शरीरादिकों का साक्षी

शरीरादिकों से विलक्षण जो चेतन है सो त्वंपद करके ग्रहण किया है और इसी वाक्यमें स्थित जो असिपद तिस करके तत्त्वं पदों का अभेद शिष्यके प्रतिबोधन किया है ॥ इन चारों महावाक्योंने जीव ब्रह्मका अभेद प्रतिपादन किया है अर्थात् जीवकोही ब्रह्मरूपता कही है (प्रश्न) तत्पदका वाच्य जो ईश्वर और त्वंपद का वाच्य जो जीव तिनकी ऐक्यता बनती नहीं क्योंकि ई-श्वर सर्वज्ञता सर्वशक्तिमत्ता आदिकों करके युक्त है और जीव अल्पज्ञता असमर्थता आदिकों करके युक्त है दोनों विरोधी धर्मवालोंकी ऐक्यता कैसे होगी किंतु कदापि नहीं होगी (उत्तर) पदकेदो अर्थ हैं एकवाच्य अर्थ है दूसरा लक्ष्य अर्थ है शब्दका अर्थ के साथ जो संबंध है सो शब्दकी वृत्ति कहिये सो वृत्ति दो प्रकार की है एकका नाम शक्तिवृत्ति है दूसरीका नाम लक्षणा वृत्ति है दोनोंमेंसे अर्थके बोधन करने की जो सामर्थ्य है तिस सामर्थ्य द्वारा जो शब्दका अर्थ के साथ सा-क्षात् संबंध है तिसका नाम शब्दकी शक्तिवृत्तिहै और शक्ति वृत्ति करके जाना हुआ जो अर्थ तिस अर्थद्वारा जो शब्दका अर्थके साथ परंपरा रूप संबंध है तिसको शब्दकी लक्षणा वृत्ति कहतेहैं तिनमें से शक्तिवृत्ति क-रके जो अर्थ जाना जाताहै तिसको शब्दका वाच्यार्थ कहते हैं और लक्षणावृत्ति करके जो अर्थ जानाजाता है सो शब्दका लक्ष्य अर्थ कहाजाताहै सो लक्षणावृत्ति तीन प्रकारकी है ॥ जहत१ अजहत २ जहतअजहत३ इसी तीसरी को भाग त्यागभी कहते हैं प्रथम जहत

लक्षणाको दिखाते हैं जहां पर संपूर्ण वाच्य अर्थ का परित्याग करके वाच्यार्थ के संबंधी का ग्रहण होवै तिसकानाम जहत लक्षणाहै जैसे किसी ने किसी ग्रामीण ग्वाल से पूछा तुम्हारा ग्राम कहांहै तिसने कहा गंगामें यहां परविचारकिया तो गंगापदका वाच्य अर्थ प्रवाहहै तिस प्रवाह में ग्रामबन नहीं सक्ता इस हेतु से संपूर्ण वाच्यार्थ जो प्रवाह तिसका त्यागकरके तिस प्रवाहका संबंधी जो तीर तिसतीरका ग्रहणकरलिया तबयहअर्थ सिद्धहुआ गंगाके तीरमें इसका ग्रामहै इसीका नामजहतलक्षणाहै १॥ और जहांपर वाच्यअर्थकात्यागनकरके और वाच्यार्थ के संबंधी का ग्रहणहोवै वहांपर तिसी को अजहत लक्षणा कहते हैं जैसे किसी ने कहा शोण दौड़ता है सो शोणनाम रक्तवर्णका है सो शोण पदका वाच्यार्थ जो रक्तवर्ण तिसमें दौड़ना बनता नहीं इसवास्ते शोण पदका वाच्यार्थ जो रक्तवर्ण तिसका त्यागन करके तिसका संबंधी जो घोड़ारूप अर्थ तिसका भी ग्रहण करलिया तब यहअर्थ सिद्धहुआ जो रक्तवर्ण वाला घोड़ा दौड़ताहै इसीकानाम अजहत लक्षणाहै२ और जहां परकुछ विरोधी वाच्य भागका त्यागकरके और तिसके संबंधी अवरोधी कुछ वाच्य भागका ग्रहण होवै तिसका नाम भागत्याग लक्षणा है जैसे किसी पुरुषको किसी ने मथुरादि देश और भूतकाल में देखा था तिसीको पुनः अन्यकाशी आदि देश वर्त्तमान काल में देखा तब देखने वालेको ऐसाज्ञान होता है जो वही यह पुरुष है अर्थात् जो पूर्व मथुरा देश भूतकाल में

देखाथा वही इदानीं काशीदेश वर्तमान कालमें देखने में आता है सो यहां पर विरोधी वाच्य भाग जो है पूर्वदेश भूतकाल और समीप देश वर्त्तमान काल तिनका त्याग करके केवल पुरुष का पिंडमात्र अवरोधी भाग का ग्रहण करना इसीका नाम भागत्याग लक्षणाहै ३ और महावाक्यमें जहत लक्षणा नहीं बनती क्योंकि जहां परजहत लक्षणाहोतीहै तहांपर संपूर्ण वाच्यार्थका त्याग होता है जैसे गंगायां घोषः में गंगा पदका वाच्यार्थ जो प्रवाह तिसका त्याग होताहै तैसे महावाक्य में यदि जहत लक्षणा मानियेगा तब तत्त्वं पदों के वाच्यार्थ में प्रविष्ट जो चेतन तिसकाभी त्यागहोजावेगा और चेतन से भिन्न असत्दुःखरूप प्रपंच का ग्रहण होजावेगा तब महाअनर्थ की प्राप्ति होवैगी तिससे पुरुषार्थ की सिद्धिनहीं होगी इसलिये महावाक्य में जहतलक्षणा नहीं बनती और जहां पर अजहतलक्षणा होती है तहां पर वाच्यार्थका भी कुछ त्यागनहीं होता जो महावाक्य में अजहतलक्षण मानियेगा तब तत्त्वं पदके वाच्यार्थ का भी ग्रहण होजावेगा तब लक्षणा करनेका कुछ प्रयोजन नहीं सिद्ध होगा क्योंकि लक्षणाका प्रयोजन ऐक्यता है सो बनैगी नहीं विरोधी अंशों का ग्रहण होने से इसलिये अजहत लक्षणा भी महावाक्य में नहींकरनी किंतु भागत्याग लक्षणा करनी और जहां भागत्याग लक्षणा होतीहै तहां विरोधी भागका त्याग करके अविरोधी भागका ग्रहण होता है सो महावाक्य में तत्त्वं पद के विरोधी भाग जो सर्वज्ञता अल्पज्ञता

तिनका त्याग करके अविरोधी भाग जो असंगशुद्धचेतन का ग्रहण होता है ताते तिनकी ऐक्यता भी बनजाती है और तिसी ऐक्यज्ञानसेही परमपुरुषार्थ की प्राप्ति होती है इसी हेतुसे महावाक्य में भाग त्याग लक्षणा करके जीव ईश्वरकी ऐक्यता सिद्ध होती है (प्रश्न) तत् पदका वाच्यार्थ कौन है और लक्ष्यार्थ कौनहै और त्वंपद का वाच्यार्थ कौनहै और लक्ष्यार्थ कौनहै (उत्तर) अव्याकृत जो माया सोई ईश्वरका देशहै उत्पत्ति स्थिति प्रलय ये तीनों ईश्वरके काल हैं और सत्व रज तम यह तीनों गुण ईश्वर का शरीर हैं अर्थात् सृष्टि करने की सामग्री है यदि कहो माया और तीनों गुण एकही पदार्थहैं इसलिये ईश्वर के देश और सामग्री और शरीरकी एकता होजावेगी भेदनहीं रहेगा तथापि जैसे कुलालको घट बनाने के निमित्त मृत्तिका रूप पृथ्वी देशहै और मृत्तिकाका पिंड सामग्री है और अस्थि आदि रूप पृथिवी भाग तिसका शरीर है तिनकी एकताका असंभव नहीं है तिसी प्रकार ईश्वर के भी देश आदिकों की ऐक्यता असंभव नहीं है और विराट् हिरण्यगर्भ अव्याकृत यहतीन ईश्वर के शरीरहैं और वैश्वानर सूत्रात्मा अंतर्यामी ये तीन ईश्वर पने के अभिमान हैं मैं एकहूं सो बहुरूपहोजाऊं ऐसी जो ईषणा तिससे आदि लेकर जीव रूपकरके प्रवेश भया यहां पर्यंत जो सृष्टि सोई ईश्वरका कार्य है सर्व शक्तिपना सर्वज्ञपना व्यापकपना एकपना स्वाधीनपना समर्थपना परोक्षपना माया उपाधिवान् पना यह आठ

ईश्वरके धर्महैं इनसंपूर्णोंकेसहित मायाऔर तिसमें प्रति
बिंबरूप चिदाभास और तिनका जो अधिष्ठान ब्रह्म
यह सबमिलके ईश्वरकहिये सोईईश्वर तत्पदकावाच्या-
र्थ है और समष्टि स्थूल शरीर है उपाधि जिस चेतन
के तिसका नाम विराट् है और समष्टि स्थूल शरीर
मिलकर विराट्का एक स्थूल शरीर होताहै और सम-
ष्टि स्थूल शरीरों में विराट्का तादात्म्य अध्यास होने
से विराट्कोही ईश्वरका शरीर कहा है और समष्टि
सूक्ष्म शरीर है उपाधि जिस चेतनके और ज्ञान शक्ति
वाला जो चेतनहै तिसका नाम हिरण्यगर्भ है समष्टि
सूक्ष्म शरीर मिलकर हिरण्यगर्भ का एक सूक्ष्म शरीर
होताहै तिस समष्टि सूक्ष्म शरीरके साथ हिरण्यगर्भ
का तादात्म्य अध्यास होने से हिरण्यगर्भकोही ईश्वर
का सूक्ष्म शरीर कहा है और सष्टि अज्ञानोपाधि जो
चैतन्यहै तिसका नाम अव्याकृत है वह ईश्वरका का-
रण शरीरक होता है समष्टि अज्ञानका चेतन के साथ
तादात्म्य अध्यास होनेसे अव्याकृत को ईश्वर का का-
रण शरीर कहा है ईश्वर के तीनों शरीरों का निरूपण
करदिया अब तिनके अभिमानियों को दिखाते हैं स-
मष्टि स्थूल शरीरों में अहं अभिमान वाला जब चेतन
होताहै तब तिसकी वैश्वानरसंज्ञा होतीहै और अनेक
मणियोंमें जैसे सूतकाएकही तागा अनुस्यूत होता है
तैसेही जो समष्टि सूक्ष्म शरीरोंमें अनुस्यूत होकर जोअ
भिमानवालाचेतनहै तिसकानाम सूत्रात्मा है और प्रा-
णियोंकेहृदयमें प्रविष्टऔर संपूर्ण प्राणियोंके कर्मका प्रव

तक जोचेतनतिसकी अंतर्यामिसंज्ञाहै और जोव्यापक और जगतके अध्यासका अधिष्ठान जोशुद्धचेतनहै तिसकीब्रह्मसंज्ञाहै पूर्वोक्तआठ ईश्वरके धर्मोंकाऔर माया चिदाभास का त्याग करके शेषरहा जो बिराट् हिरण्य गर्भ अव्याकृत इन सबका अधिष्ठान जो ईश्वर साक्षी है शुद्ध ब्रह्म सोई तत्पदका लक्ष्य अर्थ है तत्पद के वाच्यार्थ और लक्ष्यार्थका निरूपण कर दिया अब त्वं पदके वाच्यार्थ लक्ष्यार्थ का निरूपण करते हैं जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति यह तीन अवस्था हैं अर्थात् कालहैं जीव के और सूक्ष्म कारण यह तीनजीवके शरीर हैं अर्थात् भोगकी सामग्री है शरीर से बिना भोग होता नहीं है और विश्व तैजसप्राज्ञ यह तीन जीवपने के अभिमान हैं जाग्रत से लेकर मोक्ष पर्यंत जो भोग रूपसंसार है सो जीवका कार्य है अल्प शक्तिपना अल्पज्ञपना परिच्छिन्नपना नानापना पराधीनपना असमर्थपना अपरोक्षपना अविद्या उपाधिपना यह आठ जीवके धर्म हैं इन धर्मों के सहित जो अविद्या और तिस में प्रतिबिंब रूप जो चिदाभास और तिनका अधिष्ठान और कूटस्थ यह सब मिलिके जीव संज्ञा होती है सोई त्वं पद का वाच्य अर्थ है पूर्वोक्त आठ धर्मों के सहित चिदाभास भागका त्यागकरके शेषरहा जो स्थूलसूक्ष्म कारण शरीरका अधिष्ठान जो साक्षी कूटस्थ चेतनआत्मा सो त्वं पदका लक्ष्य अर्थहै (प्रश्न) स्थूल सक्ष्म कारण जो जीवके तीन शरीर कहेहैं और विश्व तैजसप्राज्ञयह तीन जीवपने के अभिमान कहे हैं और जाग्रत् स्वप्न

सुषुप्ति यह तीन अवस्था कहीहैं सो इनके भिन्नभिन्न अर्थ कहिये (उत्तर) स्थूल पंच महा भूतों से जो उत्पन्न हो और पुण्यकर्मों करके प्राप्त हो ऐसा जो भोगका आश्रय तिसकी स्थूल शरीर संज्ञा है पंच-ज्ञानेन्द्रिय पंचकर्मेन्द्रिय पंचप्राण मन और बुद्धि ये सप्तदशतत्त्व मिलकर एक लिंग शरीर होताहै ॥ अनादि अनिर्वचनीय जोअविद्यास्थूल सूक्ष्म शरीरका कारणी भूत अपने स्वरूपका जोअज्ञानहै तिसका नाम कारण शरीर है ३ स्थूल शरीर और जाग्रत् अवस्था का अभिमानी जो आत्मा तिसका नाम विश्व है १ सूक्ष्म शरीर और स्वप्न अवस्थाका अभिमान जो आत्मा तिसकी तैजस संज्ञाहै २ सुषुप्ति अवस्था और कारण शरीर अभिमानी जो आत्मा तिसकी प्राज्ञसंज्ञाहै ३ इन्द्रियों करके जन्य जो ज्ञानावस्था तिसकी जाग्रत् संज्ञाहै तिसके तीन भेदहैं जाग्रत् जाग्रत् १ जाग्रत् स्वप्न जाग्रत् सुषुप्ति ३ जिस अवस्था में यथार्थ ज्ञान होवै तिसकी जाग्रत् जाग्रत् संज्ञाहै १ जिस अवस्थामें शुक्ति रजतादि भ्रमज्ञान होवै वह जाग्रत् स्वप्न है २ जिस अवस्था में श्रमादिकों करके जड़ीभाव होवै तिसका नाम जाग्रत् सुषुप्तिहै ३ इन्द्रियों करके अजन्य विषयों को विषय करने वाली जोअंतःकरणकी वृत्तिअवस्थाहै तिसकी स्वप्न संज्ञाहैसोभी तीन प्रकारकीहै स्वप्नजाग्रत् १ स्वप्न स्वप्न २ स्वप्न सुषुप्ति ३ जिसस्वप्नमें मित्रादिकोंकी प्राप्तिहोवै तिसकी स्वप्नजाग्रत् संज्ञाहै १ स्वप्न में भी स्वप्न मैंने देखा ऐसी बुद्धि जो है तिसकी स्वप्न

स्वप्न संज्ञा है २ जो जाग्रत् अवस्था में न कहाजावै जिस स्वप्न अवस्थाका अनुभव तिसकी स्वप्न सुषुप्ति संज्ञाहै३ सुखाकार अविद्याको विषयकरनेहारी जो अविद्याकी वृत्तिहै तिसका नाम सुषुप्तिअवस्थाहै १ सुषुप्तिभी तीन प्रकारकीहै सुषुप्ति जाग्रत् १ सुषुप्ति स्वप्न २ सुषुप्ति सुषुप्ति ३ जिस सुषुप्तिमें सात्त्विकी सुखाकार वृत्तिहोतीहै वह सुषुप्ति जाग्रत् कहिये १ पश्चात् पुनः सुख पूर्वक मैंसोया इसस्मरणसे तिसीअवस्थाम जोराजसीवृत्तिहो तिसकी सुषुप्ति संज्ञाहै तदनंतर जो सुख पूर्वक मैं सोया ऐसास्मरण होनेसे तिसीअवस्थामें जो तामसी वृत्तिहै तिसीको सुषुप्ति सुषुप्ति कहाहै ३ अब प्रसंगको कहतेहैं यद्यपितत्पदऔर त्वंपदके वाच्यार्थकी उपाधि और तिसउपाधि सहित जो चेतन तिसकीईश्वर औरजीवसंज्ञा है अर्थात् तत्पदके वाच्यार्थकीउपाधि सहितचेतनकी ईश्वरसंज्ञाहैऔर त्वंपदके वाच्यार्थकीउपाधि सहितचेतन की जीवसंज्ञाहै तिनकीऐक्यताका यद्यपिविरोधहैतथापि तत्पदका लक्ष्यार्थ ब्रह्म चेतन और त्वंपदका लक्ष्यार्थ चेतन आत्मा तिनकी ऐक्यतामेंकोई विरोध नहींहै जैसे घटमठ उपाधियोंके साहितघटाकाशमहाकाशकी ऐक्यताका विरोध है तथापि घट मठ रूप उपाधि दृष्टि को त्याग करके केवल आकाशकी ऐक्यता में विरोधनहीं है तैसेही तत्पदत्वंपदके शुद्धार्थकी महावाक्यों करकेऐक्यता होनेमें कोई विरोध नहींहै जीव ईश्वरके भी देशकाल आदिक त्यागके दोनोंमें अनुगत जो चेतन ब्रह्म और चेतन आत्मा सो एकहीहै इसलिये पूर्व श्रुतियोंमें जो

कहाहै ब्रह्मसो मैं हूं और मैंसोब्रह्महूं इसप्रकार का जो दृढ निश्चयहै यही तत्वज्ञान है इसज्ञान से जन्म मरणादि संपूर्ण दोषोंकी निवृत्ति और नित्य सुखकी प्राप्ति होतीहै (प्रश्न) जीवब्रह्मकी ऐक्यताको हमने निश्चय किया परंतु जो ईश्वरमें सर्वज्ञत्वादिकधर्म हैं वहजीवमें क्यों नहीं प्रतीतहोते वहभी जीव में प्रतीत होनेचाहिये तिनका अभेद होनेसे (उत्तर) जीव ईश्वरका स्वरूप से भेद नहींहै किन्तु कल्पि उपाधिकृत भेदहै सो ईश्वर की उपाधिशुद्ध सत्व गुण प्रधान मायाहै सो महान है और जीवकी उपाधि मलिन अविद्याहै सोअल्पहै और ईश्वरकी उपाधि शुद्धहोनेसे तिसमें सर्वज्ञत्वादि सर्वदा विद्यमान रहतेहैं और जीवकी उपाधि मलिन होने से और अल्प होनेसे तिसमें सर्वज्ञत्वादिक नहींहै लौकिक दृष्टांत जैसे महानदसे एकछोटा कलश जलका भरकर रखदिया और महानद के जलसे तिस कलशके जल का भेदभी नहीं है परंतु महानद में बड़ी बड़ी नौका चलती हैं और तिसमें अनेक वृक्ष पर्वतादिक दिखातेहैं और तिस में अनेक मच्छ कच्छादिक सृष्टि रहती है और कलश के जलमें नातौ नौका चलती है और न कोई वृक्षपर्वतादिक दिखाते हैं और न कोई मच्छ कच्छादिक रहते हैं क्योंकि तिसकी उपाधि अल्प है कुछ जलके स्वरूप से भेद नहीं तैसे जीव की उपाधि भी अल्प है कुछ स्वरूप से भेद नहींहै ॥ अबतत्पदत्वं पदके वाच्यार्थ और लक्ष्यार्थ में श्रुतियों को प्रमाणता दिखाते हैं (यत्तोवाइमानि भूतानि जायंते) यह श्रुति

तत्पदके वाच्यार्थ का समर्पकहै और (सत्यं ज्ञानमनंत म्ब्रह्म)यह श्रुति तत्पदके लक्ष्यार्थका समर्पकहै (जाग्रत्स्वप्न सुषुप्त्यादि प्रपंचं यत्प्रकाशते)यह श्रुति त्वं पदके वाच्यार्थ का समर्पक है और (नहिंदृष्टेर्द्रष्टारम्यश्येः) यह श्रुति त्वं पदके लक्ष्यार्थ का समर्पकहै (प्रश्न) चेतनका क्या लक्षण है और जड़का क्या लक्षण है (उत्तर) जो ज्ञानस्वरूपहो और संपूर्ण घटादि जड़ प्रपंच को जानै और जिसको मनइन्द्रियादिक कोईभी न जान सकै वह चेतनकहिये और जो आपको नहीं जानै और परको भी नहीं जानसकै वहजड़ कहिये इसी हेतु से अज्ञान और तिसके कार्य भूत भौति जितने पदार्थ हैं सो संपूर्ण जड़हैं और चेतन वास्तव में एकही विभुव्यापक पूर्णहै किंतु उपाधि करके अनेक प्रकारका प्रतीत होता है (प्रश्न) उपाधि करके चेतन के कितने भेद होते हैं (उत्तर) उपाधि करके चेतन सात प्रकार के भेद को प्राप्तहोताहै एक शुद्ध चेतन १ ईश्वर चेतन २ जीव चेतन ३ प्रमाण चेतन ४ प्रमाता चेतन ५ फल चेतन ६ प्रमेया चेतन ७ सो क्रमसे तिनके लक्षण दिखाते हैं ॥ माया उपाधि से रहित चेतन का नाम शुद्ध चेतन है तिसी को शुद्धब्रह्म भी कहते हैं १ और माया उपाधि के सहित चेतनकानाम ईश्वर चेतनहै२और अविद्या उपाधि के अधीन चेतन का नाम जीवचेतनहै३ और अंतःकरणोपाहित चेतनकानाम प्रमाता चेतनहै४ और और अंतः करण की वृत्ति उपहित चेतन का नाम प्रमाण चेतनहै५ और अज्ञात चेतनकानामप्रमेय चेतन

है ६ और ज्ञात चेतन का नाम फल चेतन है ७ स-
प्तप्रकार के चेतन के लक्षण करादिये अब लक्षणके भेद
को दिखाते हैं लक्षण दो प्रकार का होता है एक स्वरूप
लक्षण दूसरा तटस्थ लक्षण(सत्यंज्ञानमनंतम्ब्रह्म) यह
स्वरूपलक्षणहै क्योंकिजो वस्तुकास्वरूपहीहो औरवही
लक्षणहो तिसको स्वरूप लक्षणकहतेहैंसोसत्यज्ञानआ
नंद ब्रह्मका स्वरूपभीहै और लक्षायकभीहै इसी हेतु से
यहस्वरूप लक्षण है (प्रश्न) असाधारण धर्मका नाम
लक्षण है असाधारण धर्म वह होताहै जो धर्म एक में
होरहै जैसे गंधवत् पृथिवी का लक्षण है सो गंधकेवल
पृथिवी का धर्म है जलादिकों का नहींहै इसी हेतु से
गंधवत् पृथिवीका लक्षण बनता है तैसे सत्यज्ञानादि
ब्रह्म)के लक्षण नहीं बनते हैं क्योंकि ज्ञानादि ब्रह्मके
धर्म नहीं हैं किंतु ब्रह्मका स्वरूप हैं तब(सत्यंज्ञान
मनंतम्ब्रह्म यह ब्रह्मका लक्षण नहीं बनता (उत्तर)
स्वयको स्वयकी अपेक्षा करके धर्म धर्मिभावकी कल्पना
करने से लक्षण बनता है इसमें पद्मपादाचार्यका वाक्य
भी प्रमाण है (आनन्दो विषयानुभवोनित्यत्वं चेति
संतिधर्माःअपृथक्त्वेपिचैतन्यात्पृथगिवावभासन्ते१) आ
नंद ज्ञानसत्यत्वये धर्म हैं सो चेतनसे अभिन्न हैं परंतु
भिन्न की तरह प्रतीत होते हैं सो धर्म धर्मिभाव कल्पना
से स्वरूप लक्षणभी बनताहैस्वरूप लक्षणका निरूपण
करदिया अब तटस्थ लक्षण का निरूपण करते हैं या-
वत्पर्यंतलक्ष रहै तावत्पर्यंत जो नर है और जो इतरों
से भिन्न करके लक्षको लक्षादेवै तिसको तटस्थ लक्षण

कहिये जिसका लक्षण कराजाता है वह लक्ष्य होता है जैसे गंधवत् पृथिवी का लक्षण है इसी से इसलक्षण का लक्ष्य पृथिवी है सो महाप्रलय में परमाणुवों में गंधनहीं रहती और उत्पत्ति क्षण में घटादिकों में गन्ध नहीं रहती और लक्ष्य पृथिवी तिसकाल में भी रहती है और गन्ध जो है सो यावत्पर्यंत पृथिवी रहती है तावत्पर्यंत नहीं रहती इसलिये यह गन्धवत् पृथिवी का तटस्थ लक्षण बनता है दृष्टांत में तटस्थ लक्षण को दिखादिया अत्र द्राष्टान्तरमेंभी दिखाते हैं॥ संपूर्ण प्रपंचका उपादान कारणत्वही ब्रह्मका तटस्थ लक्षण है और प्रपंचके अध्यासका अधिष्ठानत्वही ब्रह्म में उपादानत्व है और जिस से अभिन्न होकर कार्य उत्पन्न होवै वह कार्य का उपादान कहिये अर्थात् कारण की सत्ता से पृथक् कार्य की सत्ताका अभाव होना सो ब्रह्मकी सत्तासे पृथक् प्रपंचकी सत्ताका अभावही है और कल्पित वस्तुका संबंध भी कल्पितही होता है सो अपने अधिष्ठानका विरोधी होता नहीं जैसे कल्पित रजतका शुक्तिमें संबंध भी कल्पित है और अपने अधिष्ठान शुक्तिका विरोधी नहीं है और शुक्तिके स्वरूप को विकारी भी नहीं करसक्ता है तैसे कल्पित प्रपंच का कल्पित संबंध भी अपने अधिष्ठान ब्रह्मको विकारी नहीं करसक्ता है क्योंकि तिसका विरोधी नहींहै (प्रश्न॥ (यदभिन्नंकार्यमुत्पद्यतेतदुपादानं) जिससे अभिन्नहोकर कार्य उत्पन्न होवै वह उपादान कहिये अथवा जो परिणामको प्राप्तहोवै सो उपादान कहिये ऐसा उपादानका

लक्षण करो (उत्तर) यदि तुमको ऐसे लक्षण करनेका आग्रहहै तब माया प्रपंचका उपादान रहो परंतु माया का अधिष्ठान जो ब्रह्म तिससे बिना मायाको भी प्रपंच की अधिष्ठानता बनती नहीं क्योंकि माया तो आपअध्यस्त है अध्यस्तको अधिष्ठानता बनती नहीं इसलिये मायाके अधिष्ठानको जो अधिष्ठानता कही है सो भी विरुद्ध नहीं है तथापि जगदाकार करके परिणाम मान जो माया तिस माया का अधिष्ठानत्वही ब्रह्म में प्रपंच का उपादानत्व है (प्रश्न) प्रपंचके माया परिणामत्वमें क्या प्रमाण है (उत्तर ॥ मायांतुप्रकृतिंविद्यात्) यह श्रुतिही माया के परिणामत्वमें प्रमाण है (प्रश्न ॥ अग्निर्यथैकोभुवनंप्रविष्टोरूपंरूपंप्रतिरूपोबभूव।एकस्तथा सर्वभूतांतरात्मारूपंरूपंप्रतिरूपोवहिश्च १) जैसे एकही अग्नि संसारके सम्पूर्ण भुवनों में प्रवेशित होकर जितने आकारवाले भुवनहोवें तितने आकारवाली होजाती है तैसे एकही आत्मा संपूर्ण शरीरों में प्रवेशित होकर तद्रूपहोरहाहै इत्यादि श्रुतियेंप्रपंच और ब्रह्मकातादात्म्य कथन करती हैं तबये अर्थ सिद्धहुआ प्रपंचाकार करके परिणामत्वही उपादानत्व होता है (उत्तर) चेतन को जड़ाकार करके परिणामताकी अयोग्यता है क्योंकि(स पर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳशुद्धमपापविद्धम्) चैतन्य स्वरूप आत्मा जोहै सर्वत्र अगात् नामव्यापक है शुक्रं अविद्या मलसे रहित है अकायं लिंग शरीरसे भी रहित है अस्नाविरं स्थूल शरीरसे भी रहित है शुद्धं निर्मल है अपापविद्धं धर्म अधर्मसे वर्जित है इत्यादि

श्रुति विरोधसे परिणामत्व लक्षणनहीं बनता और पूर्व कथनकरी जो उपादानता है तिसी में तादात्म्य श्रुतियों का भी तात्पर्य है (सोऽकामयत्बहुस्यां प्रजायेति स तपोऽतप्यत्सतपस्तप्त्वाइदंसर्वमसृजत्यदिदं किञ्चित्त त्सृष्ट्वातदेवानुप्राविशत्) इत्यादि श्रुतियेंभी ब्रह्म और प्रपंचका तादात्म्य अध्यास उपदेश करती हैं और लौकिक दृष्टिसे भी ब्रह्मका अध्यास सर्वत्र प्रतीत होता है जैसे घटहै घट प्रकाशिता है घटप्रिय है इसीरीतिसे सर्वत्र प्रपंच में सत् प्रकाश आनंद यह तीन अंशब्रह्म की व्याप्त होरही हैं सर्वत्र प्रतीत होने से और जो नाम रूप प्रपंचमें व्यवहार होता है सो अविद्याका प- रिणाम जो नाम रूप तिसके संबंध से होता है (प्रश्न) अध्यास किसको कहिये (उत्तर) भ्रान्ति ज्ञान का वि- षय जो मिथ्या वस्तु और भ्रांति ज्ञान तिसका नाम अध्यासहै (प्रश्न) आत्मा में अनात्मा का अध्यासहै व अनात्मामें आत्माकाअध्यासहै यदि आत्मामें अनात्मा का अध्यासकहो सो नहीं बनता क्योंकि अध्यासकी सा- मग्री नहीं है सो दिखाते हैं प्रथम तो अधिष्ठानका सा- मान्यरूप करके ज्ञान और विशेषरूपकरके अज्ञान चा हिये सो ब्रह्म निरवयव है तिसकी सामान्य विशेष अंश बनती नहीं और स्वयं प्रकाश है इससे विशेष अंश का अज्ञान भी नहीं बनता॥ दूसरा सजातीय सत्य वस्तुके ज्ञान जन्य संस्कार भी अध्यासकी सामग्री है सो प्रपंच यदि कहीं सत्यहोवे तो तिसके संस्कार होवें सो भी नहीं है तीसरा कल्पित वस्तुका अधिष्ठानके साथ सादृश ज्ञान

सो भी नहीं है क्योंकि ब्रह्म प्रकाश स्वभाव वालाहै और प्रपंच तमस्वभाववालाहै दोनों की सादृश्यता नहीं बनती और चतुर्थ प्रमाता गत दोष पंचम प्रमाण गत दोष यह दोनों भी नहीं बनते क्योंकि प्रमाता प्रमाण दोनों प्रपंच के अन्तर्गतहैं यदि प्रथम प्रपञ्च सिद्ध होले तब इनकी सिद्धि होवै ये दोनोंतो अभी सिद्ध नहीं हैं इसरीतिसे आत्मा में अनात्मा का अध्यास नहीं बनता और यदि अनात्मामें आत्माका अध्यास कहियेगा सोभी नहीं बनेगा क्योंकि अनात्मा मिथ्याहै मिथ्या वस्तुको अधिष्ठान ता का निषेधहै और यदि मानोंगे तो शून्य बाद प्रसङ्ग होजावेगा और यदि अनात्मा को भी सत्य मानोंगे तब अनात्मा की निवृत्ति नहीं होगी और मोक्ष का अभाव प्रसंग होगा क्योंकि सत्य वस्तु की ज्ञान करके निवृत्ति होती नहीं यदि मानोंगे तब मिथ्यत्वकी ज्ञानकरके निवृत्ति को कथन करने वाली श्रुतियों से विरोध होगा ॥ (भिद्यतेहृदयग्रन्थि छिद्यन्ते सर्वसंशयाः। क्षीयंतेचास्यकर्माणितस्मिन्दृष्टेपरावरे१, तमेवविदित्वाअतिमृत्युमेति) परमात्माके साक्षात् होनेपर इस विद्वान् के हृदय में अज्ञानकी ग्रंथी छेदन होजाती हैं और संपूर्ण संशय छेदन होजाते हैं और विद्वान् के प्रारब्ध कर्म अतिरिक्त संपूर्ण कर्म नाशहोजाते हैं तिस परमात्माकोजानकर मृत्यु को भी अतिक्रमण करजाता है इत्यादि श्रुतियाँ ज्ञानसेही संसार की निवृत्ति को कहती हैं (एकमेवाऽद्वितीयम्अतोऽन्यदार्तम्) एकब्रह्मही अद्वितीय सत्यहै तिससे अतिरिक्त सर्व मिथ्याहै यह श्रुति अनात्मा को

मिथ्या सूचन करती है॥ और यदि आत्मा में अनात्म प्रपंच का प्रथम अध्यासहोले तो अनात्माकी सिद्धि होवै और अनात्म प्रपंच की सिद्धिहोले तब अध्यास की सिद्धि होवै इसरीति से अन्योन्याश्रयादि दोष भी आते हैं पूर्वोक्त युक्तियों करके अध्यास की सिद्धिहोवै नहीं (उत्तर) मैं मनुष्य हूं मैं कर्त्ता हूं मैं भोक्ता हूं मैं अज्ञानीहूं इत्यादि वृत्तिज्ञान जो हैं सो संपूर्ण जनोंको प्रसिद्ध हैं सो स्मृतिरूपनहीं हैं क्योंकि अपरोक्षाभासहोने से और भेद ज्ञानाभाव होने से अर्थात् शरीरादिकों के साथ आत्मा का भेद ज्ञाननहीं है जो यह शरीर असत्यजड़रूप है और आत्मा चैतन्य स्वरूप है ऐसा भेद ज्ञान पूर्वक नहीं है किंतु शरीरादिकों के साथ अभेद ज्ञानपूर्वकही है यह ज्ञान इसीहेतु से स्मृतिनहीं होसक्ता॥ और प्रमा भी नहीं है क्योंकि श्रुति युक्ति करके इसका बाधहोजाताहै सो दिखाते हैं (अयमात्मा ब्रह्मयः साक्षादपरोक्षाद्ब्रह्म। असंगोऽयंपुरुष) इत्यादि श्रुति करके कर्त्तृत्वभोक्तृत्वादिकोंका बाधहोता है इसलिये प्रमाभी नहीं है अर्थात् यथार्थ ज्ञान भी नहीं है अब युक्तिकरके भी तिस ज्ञानका बाध दिखाते हैं शरीर अहंकारादिकोंको परिच्छिन्न होने से और विकार जड़रूप होनेसे यह संपूर्ण अनात्माहै और ज्ञानस्वरूप द्रष्टात्मा के साथ भेद संबंध करके वा अभेद संबंध करके या धर्म धर्मिभाव करके इनका संबंध नहींबनता और जो कर्त्तृत्वादिकों को वास्तव मानोंगे तो मोक्षाऽभाव प्रसंग होवेगा और जो आत्मा को स्वप्रकाशनहीं मानों

गे तो जगदान्ध प्रसंगहोवेगा इसहेतुसे तिस आत्मा को परम प्रेमका आस्पद होनेसे आनंदरूप होने से निर्धर्म होने से उक्त श्रुतियुक्तियों से अकर्ता अभोक्ता नित्यज्ञान आनंद रूपता आत्मा को सिद्धहुई और शरीरादिकों को विकारित्व परिच्छिन्नत्व जड़त्व रूपता सिद्धहुई और मैं कर्त्ता हूं भोक्ता हूं अज्ञहूं अर्थ सेही यह भ्रांति सिद्धहुई तव इस भ्रांति के योग्य कोई इस का कारण कल्पना करना चाहिये जो कल्पना भ्रांति ज्ञानका कारणहोवेजो इसभ्रांति ज्ञानका कारण कल्पना करोगेसोईअज्ञानहै सोअज्ञान आत्मामेंअध्यस्त रूपता करके सिद्ध हुआ तिसी को अविद्या माया भी कहते हैं और अज्ञानका ग्राहक प्रत्यक्ष प्रमाण है मैं नहीं जानता हूं मैं अज्ञहूं ऐसी जो साक्षीरूप प्रतीत अर्थात् साक्षी ज्ञान है सो ये साक्षीका ज्ञान अज्ञान को विषय करता है यदि कहो मैं अज्ञहूं मैं नहीं जानता हूं यह प्रतीत अभावरूपहै सो नहीं वनता क्योंकि ज्ञाननित्य है तिस को अभावरूपता कदाचिदपि नहींवनती और (इन्द्रा मायाभिपुरुरूपईयते) इन्द्रजो परमात्मा सो माया करकेही वहुत रूपहोकर चेष्टाकरता है इत्यादि श्रुति प्रमाणसे भी माया शब्दका वाच्य अध्यस्तत्व ज्ञानकरके निवर्त्यत्व जो अज्ञान है वही अज्ञान अपने और परके अध्यासमें कारण है और अज्ञान अनादि है इसलिये आत्मा श्रयादि दोषभी नहीं वनते हैं और अनादि होनेसेही उत्पत्तिका भी अभीष्ट सिद्धहुआ और अज्ञान के अध्यास करके वसिष्ट चेतनमें अहंकारका अध्यास

है और अहंकार वसिष्ट चेतन में काम संकल्पादिकों का और अहंकार के धर्मों का और इन्द्रियोंका इन्द्रियों के धर्मों का अध्यासहै और इन्द्रियादि वसिष्ट चेतन में स्थूल देह का अध्यास है और स्थूल देह वसिष्ट चेतन में स्थूल देहके धर्म जो मैं स्थूल हूं मैं मनुष्य हूं मैं जानता हूं इनका अध्यासहै और स्थूलत्वादि वसिष्ट चेतन में बाह्य जो पुत्र भार्यादिक तिनका अध्यास है और इसीरीति से चेतन का भी अहंकार से लेकर देह पर्यंत सर्व में अध्यासहै और सम्बन्ध के व्यवधान से अध्यास की तारतम्यता है और अध्यास की तारतम्यतासे अर्थात् न्यूनाधिक्यता से प्रेमकी भी तारतम्यता है सो वार्तिक अमृत ग्रन्थमें कहाहै (वितात्पुत्रःप्रियःपुत्रात्पिण्डःपिण्डात्तथेन्द्रियम् । इन्द्रियेभ्यःप्रियःप्राणःप्राणादात्मापरःप्रियः १) धनसे पुत्र प्रिय है क्योंकि पुत्रके रोगादिकों में विवाहादिकों में सर्वस्व खर्च करदेतेहैं और पुत्रसे भी शरीर प्रियहै क्योंकि दुर्भिक्षादिकों में पुत्रको भी बेचदेते हैं ॥ और जहां कहीं शस्त्रपात होने लगता है या पाषाणादि वृष्टि होने लगती है वहां पर प्रथम नेत्रोंकोही मूंद लेता है इस हेतुसे स्थूल शरीरसे भी इन्द्रिय प्रिय हैं और इन्द्रियोंसे भी प्राण प्रियहैं क्योंकि प्राणोंकी रक्षाके निमित्त इन्द्रिय का भी त्यागकर देताहै और प्राणों से भी आत्मा प्रिय है जब रोगादिकों करके अति दुःखी होता है तब प्राणों के त्यागकी भी इच्छा करता है इस प्रकार परस्पर अध्यास होनेसे चिद्जड़ ग्रंथी रूप अध्यास होरहा है सो अनात्मा बुद्धचादि-

कों में साक्षी चेतन के संबंधका अध्यास है इसी का
नाम संसर्गाध्यास है और साक्षी चेतन में बुद्ध्यादिक
स्वरूपसे अध्यस्त हैं इसी का नाम स्वरूपाध्यास है
(प्रश्न) आत्मा में अनात्माका अध्यासरहो अनात्मामें
आत्माका अध्यास मतरहो (उत्तर) यदि अनात्माका
ही आत्मा में अध्यास मानोगे आत्माका अनात्मा में
अध्यास नहीं मानोगे तबभ्रांति ज्ञान में दोनोंकी प्रतीत
नहीं होगी क्योंकि अध्यस्त की प्रतीत का भ्रान्तिज्ञान
में नियम है और दोनोंका अध्यास तो तुमने मानानहीं
तब प्रतीत दोनों की भ्रांति ज्ञानमें कैसे होगी किंतु
नहीं होगी इसलिये दोनों का परस्पर अध्यास मानो
और जहां पर रांगा और रजत दोनों पड़े हैं वहां पर
यह रांगा रजत हैं ऐसी समूहालंबन रूप प्रतीत होती
है रांगे में रजतका अध्यास होनेसे रजत बुद्धि होती है
और रजत में रांगेका अध्यास होने से रांगा बुद्धि होती
है इस वास्ते आत्मा अनात्मा का भी परस्पर अध्यास
अवश्य माननाचाहिये क्योंकि परस्पर अध्यासकी प्रतीत
होती है और चेतनता आदिकोंकी अहंकारादिकों में
प्रतीति होती है और अहंकारादिकों के धर्म जो भोक्तृ-
त्वादिक हैं तिनकी चेतन आत्मामें प्रतीतहोती है जैसे
लोहेके साथ अग्निका तादात्म्य अध्यास होनेसे लोहा
जलाता है ऐसी प्रतीत होती है और जलाना धर्म
लोहेका नहीं है किंतु अग्निका है तैसे कर्तृत्वादि अंतः-
करण के धर्महैं परस्पर अध्यास करके आत्मामें प्रतीत
होते हैं और (नेहनानास्तिकिंचन) इत्यादि श्रुतियों

करके सर्व अध्यास के बाधका अवधि भूत जो चेतन तिसी को शेषरहने से शून्यवाद की प्राप्ति भी नहीं होसक्ती है क्योंकि अहंकार से लेकर जितनी अनात्मा वस्तु हैं तिनका नाम जगत् है तिसीको प्रपंचभी कहते हैं सो अनात्म वस्तु रज्जु सर्पकी नाईं जिसकाल में प्रतीत होता है तिसी कालमें विद्यमान है और जिस काल में प्रतीत होता नहीं तिस कालमें नहीं है जाग्रत् में सर्व प्रपंच की प्रतीति होती है इसलिये जाग्रत् में विद्यमान है और सुषुप्तिमें सर्व प्रपंचकी प्रतीति होती नहीं इसलिये अविद्यमान है क्योंकि सुषुप्ति में सर्वप्रपंचका अभावहोताहैइसी हेतुसे सुषुप्तिको सर्वप्रपंचका लय कहा है इसी का नाम शास्त्रमें दृष्टिसृष्टिवाद है यही वेदांतका मुख्य सिद्धांतहै सो अध्यास दोप्रकारका है एक कार्याध्यास दूसरा कारणाध्यास दोनोंमेंसे प्रथम कार्याध्यासको दिखाते हैं पूर्व कहा जो है सत्यवस्तु के ज्ञानजन्य संस्कार अध्यासका हेतु है और आत्मा से अतिरिक्त प्रपंचकही सत्यनहीं है जिसके ज्ञानजन्य संस्कारों से प्रपंचका आत्मामें अध्यास होवै इसलिये अध्यास नहीं वनता सो यह शंकानहीं बनती क्योंकि अध्यासमें सत्यवस्तुके ज्ञानजन्य संस्कारोंकाही नियम नहींहै किंतु अध्यासमें संस्कारकोहीहेतुताहै वह संस्कार सत्यवस्तु के ज्ञानजन्य होवै वा असत्य वस्तुके ज्ञान जन्य होवै और संस्कारोंके प्रतिज्ञानकी हेतुता का नियमहै यदि सत्य वस्तु के ज्ञान जन्य संस्कार को हेतु मानोगे तो जिस पुरुष ने बाजीगरका बनाया मिथ्य

नींब का वृक्ष अनेकबार देखा है और सुनाभी है जो यहनींबकावृक्षहै और धरेककावृक्ष तिसने न कभीदेखा है और न सुना है तिस पुरुषको धरेकके वृक्ष में नींब का अध्यास होता है सो नहीं होना चाहिये क्योंकि सत्यनींब के ज्ञान जन्य संस्कार तो तिसको नहीं हैं और तुम्हारे मत में तो सत्यवस्तु के ज्ञान जन्य संस्कारोंको अध्यासका हेतुमानाहै सो तहांपर नहीं हैं और हमारी रीति से बाजीगरका देखा जो नींबका वृक्ष तिसके ज्ञान जन्य संस्कार तो बनेहैं इसलिये धरेक में भी नींब का अध्यास बनताहै और वेदांत सिद्धांतमें छैवस्तु अनादि हैं जीव १ ईश्वर २ शुद्धचेतन ३ जीवईश्वर का भेद ४ और अविद्या ५ और अविद्या चेतनका सम्बन्ध ६ यह छै वस्तु स्वरूपसेही अनादि हैं जिस वस्तुकी उत्पत्ति नहीं होती वह स्वरूप से अनादि कही जाती है यद्यपि अहंकारादि स्वरूप से अनादि नहीं हैं क्योंकि श्रुतियों में तिनकी उत्पत्तिकही है तथापि प्रवाहरूपसे सर्व वस्तु अनादिहैं अनादि कालसे ऐसा समय कोईनहीं है जिससमय में कोई भी घटादि वस्तु न रहै किंतु सर्वदा काल सर्व पदार्थ बनेरहते हैं इसरीति से सर्व पदार्थों का अनादि प्रवाह चला आता है और प्रलय काल में भी सुषुप्तिकी नाईं सर्व पदार्थ संस्कार रूपहो कर बने रहते हैंइसहेतु से प्रपंचका प्रवाह अनादि है अनादि प्रवाह होने से ऐसा कोई पदार्थ नहीं है जिससे पूर्व कोई न होवे इसरीति से सजातीय के पूर्व ज्ञानजन्य संस्कार अध्यास का हेतु बनते हैं और पूर्व कहाहै जो

सादृश्य दोष अध्यास का हेतु है सो सादृश्य दोष न होने से अध्यास नहीं बनता ऐसी शंकाभी नहीं बनती है क्योंकि विना सादृश्य दोष के आत्मा में जातिका अध्यास होताहै सो दिखातेहैं ब्राह्मणत्वसे आदि लेकर जितनी जाती हैं सो स्थूल शरीर का धर्म हैं आत्मा और लिंग शरीरका धर्मनहींहैं यदिआत्मा और लिंग शरीरके जाति आदिक धर्महोवैं तब जिस जिस स्थूल शरीरको आत्मा ग्रहणकरै मनुष्य पक्षी आदिक सर्वमें एकही जाति होनी चाहिये सो तो नहीं है किंतु मनुष्य शरीरको जब ग्रहणकरताहै तब मनुष्यत्वजाति वाला होताहै तिसमें भी ब्राह्मणके गृह में जन्म होनेसे ब्राह्मणत्व जाति होती है क्षत्रियके जन्म होने से क्षत्रियत्व वैश्यके वैश्यत्व शूद्रके शूद्रत्व पशुकेशरीरमें पशुत्व पक्षीके पक्षित्व भिन्न भिन्न शरीरों में भिन्न भिन्न जातियाँ होती हैं इसरीतिसे जातियाँ संपूर्ण स्थूल शरीरका धर्म हैं और मैं द्विजातिहूं मैं ब्राह्मणहूं मैं क्षत्रियहूं इसरीतिसे ब्राह्मणत्व क्षत्रियत्व वैश्यत्व शूद्रत्वादिकोंका आत्मा में भानहोताहै इसहेतुसे विना सादृश्य दोषके आत्मा में जातिका अध्यास होता है क्योंकि आत्मा व्यापक है और जाति परिच्छिन्न है आत्मा प्रत्यक्है और जातीय एक है आत्मा विषय करने हाराहै और जाति तिसका विषय है किसी प्रकार भी इनकी सादृश्यता नहींबनती है और अध्यास होरहाहै इसलिये सादृश्य दोषको भी अध्यासमें कारणतानहीं बनती और प्रमातृगत लोभादिदोषभी अध्यासकेहेतु नहींहैं क्योंकि विना लोभादि-

कोंके वैराग्यवान् पुरुषकोभी सीपीमें रजतका अध्यास होताहै और प्रमाण गत दोषभी अध्यासका हेतुनहीं है प्रमाण नाम इन्द्रियोंकाहै अर्थात् नेत्रादिकोंमें दोषजोहै सोभी अध्यासका हेतु नहींहै क्योंकि सर्व पुरुषों को आकाश में नीलतादिकों का अध्यास होता है और पुरुषोंके नेत्रोंमें दोष नहींहै इसवास्ते प्रमाण गत दोष भी अध्यासका हेतु नहीं है जैसे आकाश में नीलतादि-कोंका अध्यास सर्व दोषसे विनाही होरहाहै तैसे चेतन मेंभी सर्व दोष से विनाही प्रपंचका अध्यास होरहा है और पूर्व शंकाकरी है जोविशेषरूप से अज्ञातवस्तु में अध्यास होताहै और जोस्वयं प्रकाश रूप ब्रह्महै और तमरूप अज्ञानहै तुम प्रकाशका विरोधहोने से ब्रह्मचे-तन और अज्ञान का अध्यास नहीं बनता जो इस प्र-कारकी शंकाकी है सो शंका भी नहीं बनती यद्यपि आत्मा स्वप्रकाश रूप है तथापि आत्मा का प्रकाश स्वरूप अज्ञानका विरोधी नहीं है क्योंकि सुषुप्ति में प्र-काशस्वरूप आत्मामें अज्ञानकी प्रतीति होती है सो न होनी चाहिये क्योंकि जबकिघोर निद्रासे जो पुरुषजागा है तिसको इस प्रकारका ज्ञान होता है ऐसा मैं सुखसें सोया जो मेरेको किंचित्भी सुधिनरही अर्थात् कुछभी जानता न भया ऐसा जो ज्ञान है तिसका विषय सुख और अज्ञान है सो सुख और अज्ञान का जो जाग्रत् में ज्ञान होताहै सो प्रत्यक्ष ज्ञान तो नहीं है क्योंकि प्र-त्यक्ष ज्ञानवह होता है जिस ज्ञानका विषय सन्मुख हो और जाग्रत्कालमें सुख और अज्ञानतो सन्मुखनहींहै

इसवास्ते वह स्मृतिरूप ज्ञानहै क्योंकि अज्ञातवस्तुका स्मरणहोतानहीं किंतु ज्ञात विषयकहीस्मरणहोताहै इस हेतुसे सुषुप्तिमें सुख और अज्ञानकाज्ञानहै औरसुषुप्ति कालका जो ज्ञानहै सो अंतःकरण और इन्द्रिय जन्य नहींहै क्योंकि सुषुप्ति में अंतःकरण और इन्द्रियों का अभाव है इसलिये सुषुप्ति में आत्मस्वरूपही ज्ञान है इस रीति से सुषुप्ति में आत्मा प्रकाशस्वरूप है और सुषुप्ति में प्रकाश स्वरूप आत्मा में स्वरूप सुख और अज्ञानदोनों की प्रतीतिहोती है यदि आत्माका प्रकाश स्वरूप अज्ञान का विरोधीहोता तब सुषुप्ति में अज्ञान की प्रतीति न होती और होती है इसवास्ते आत्माका प्रकाश स्वरूप अज्ञानका विरोधीनहींहै किंतुआत्माका प्रकाश स्वरूप अज्ञानका साधक है इस तात्पर्य को लेकर वेदांत में कहा है समान चेतन अज्ञान का वि-रोधी नहींहै किंतु विशेष चेतन अज्ञानका विरोधीहै सो। व्यापक चेतनका नाम सामान्य चेतन है और वृत्ति में स्थित चेतन का नाम विशेष चेतन है और जैसे काष्ठ में स्थित जो अग्नि सो तमका विरोधी नहीं है परंतु जब काष्ठ मंथन किया जावे और तिससे उत्पन्न हुईजो अग्नि है सो तमका विरोधी है तैसे समान चेतन अ-ज्ञानका विरोधी नहीं किंतु वेदांत विचारसे जो अंतः-करणकी ब्रह्माकार वृत्तिहुई है तिस वृत्तिमें स्थित जो चेतन है सोई अज्ञानका विरोधी है इसीरीतिसे प्रकाश स्वरूप चेतन अज्ञानका विरोधी नहीं है इस हेतु से चैतन्य आश्रित अज्ञानका अध्यास बनता है पुनः अ-

ध्यासके भेद दिखाते हैं एक ज्ञानाध्यास दूसरा अर्थाध्यास है दोनों में अर्थाध्यास छः प्रकारका है केवल संबंधका अध्यास १ संबंध सहित संबंधिका अध्यास २ केवल धर्माध्यास ३ धर्म सहित धर्मीका अध्यास ४ अन्योन्याध्यास ५ अन्यतराध्यास ६ अथवा स्वरूपाध्यास और संसर्गाध्यास इस भेदसे अर्थाध्यास दो प्रकारका जानना चाहिये और तिसी के अंतर्गत छः भेद हैं उदाहरण इनके पूर्व कह दिये हैं ॥ प्रश्न ॥ अहंकारादिकन का और आत्माका कौन अध्यास है ॥ उत्तर ॥ अहंकारादिकन का और आत्मा का अन्योन्याध्यास है अर्थात् परस्पर अध्यास है सो दिखातेहैं सत् चिद् आनंद और अद्वैतता येचारविशेषण आत्माके हैं और असत् जड़ दुःखरूपता और द्वैतता ये चारविशेषण अनात्मा के हैं तिनचारों में से अनात्मा को दुःख और द्वैतपना इनदोनों विशेषणों ने आत्माके आनंद और अद्वैतपनेकोढाँपाहै याते आत्मामें आनंद रूप और अद्वैतरूप मैंहूं ऐसी प्रतीति होतीनहीं किंतु मैं दुःखी और ईश्वरसे भिन्नहूं ऐसीप्रतीतिहोती है और आत्माकेसत्चित्इनदोनों विशेषणोंनेअनात्माकीअसत् जड़रूपताको आच्छादन कियाहै इसहेतुसे अनात्माहंकारादिकों में असत् है जड़रूप है ऐसी प्रतीति नहीं होती किंतु विद्यमानहै भासता है चेतनहै ऐसी प्रतीति होती है इस रीतिसे आत्मा अनात्मा का परस्पर अध्यास है और अध्यास के सिद्ध होने से ब्रह्ममें ही अभिन्न निमित्त उपादान कारणता अर्थसेही सिद्ध हुई

(प्रश्न) चेतन ब्रह्म में प्रपंच की उपादान निमित्तता नहीं बनती क्योंकि प्रपंचको ब्रह्मसे विलक्षणहोनेसे सो दिखाते हैं प्रपंच अचेतन शुद्धजड़रूप है और प्रपंच से विलक्षणहै और ब्रह्म चेतन शुद्ध है और विलक्षणों का कहीं कार्य कारण भाव देखा भी नहीं है स्वर्ण का भूषण कहीं मृत्तिकाका कार्य नहीं देखा और मृत्तिकाका घट कहीं सुवर्ण का कार्य नहीं देखा घटादि मृत्तिका केही कार्य देखे हैं और भूषण सुवर्णकेही कार्य देखे हैं तैसे यह प्रपंच भी अचेतन सुख दुःख मोह रूप जो है सो अचेतन सुखदुःख मोहरूप कारण काही कार्य होने के योग्य है विलक्षण ब्रह्मका कार्य होने के योग्यनहीं है और विलक्षण होने सेही चेतन अचेतन का उपकार्य उपकारक भावसंबंधभी बनताहै और यदि तुल्यहोवैंगे तब उपकार्य उपकारक भावभी नहींबनेगा जैसेएकदीपका दूसरेदीपकेसाथ उपकार्यउपकारक भाव नहीं बनता और यदिकहो स्वामि भृत्यकी नाईं चेतनही चेत नभोक्ताका उपकार करेगा सोभी नहीं बनता क्योंकि स्वामि भृत्यकाभी अचेतन अंशजो बुध्यादि भाग है वही चेतनका उपकारक है और काष्ठलोष्ठादिकों की चेतनता में कोई प्रमाण भी नहीं है और चेतन अचेतनका विभागभी लोक में प्रसिद्ध है चेतन ब्रह्ममें अचेतन जगत्की उपादानता नहीं बनती उत्तर ॥ विलक्षण होने से ब्रह्म जगत्का उपादाननहीं बनता सो यह शंका तुम्हारी नहीं बनती क्योंकि लोक में चेतन रूपता करके प्रसिद्ध जो पुरुष है तिन से

विलक्षण अचेतन केश नखादिकों की उत्पत्ति होती है और अचेतन गोबरादिकोंसे चेतनवृश्चिकादिकोंकी उत्पत्तिदेखीहै इसलिये वेदबाह्य केवल शुष्कतर्कोंसे शंका नहीं बनतीहै ॥प्रश्न॥ चेतन उपादानहोनेसे जगत् में भी चेतनताहोनी चाहिये क्योंकि श्रुतियों मेंभी (मृदब्रवीदापोऽब्रवीत्) मृत्तिका बोलती भई जल बोलते भये इत्यादि सुनाहै (उत्तर॥ मृदब्रवीदापो ऽब्रवीत्) इतने करके जगत् में चेतनता नहीं बनती क्योंकि मृत्तिका और जलअभिमानी देवताका यहउपदेशकिया है और यहां मृत्तिका में गौण उपदेश है किंतु देवतामेंही मुख्य उपदेश है क्योंकि भोक्तामें चेतनताका नियम है और संपूर्ण इन्द्रियादि अचेतन भोग्यहैं॥ प्रश्न॥ यदि चेतन अचेतनका कार्य कारण भाव मानोगे तब पुनः उत्पत्तिसे पूर्व कार्य असत्है ऐसी प्रतीति होवैगी तब असत् कार्य वादकी प्रसक्तिहो जावैगी॥ उत्तर॥ यह जो निषेधहैसो जैसे उत्पत्तिसे पूर्व कार्यके सत्त्वकाप्रतिषेधनहीं करता तैसे इदानीं कालमें भी कार्य जोहै सो कारण रूपता करके सत्हीहै यहभी विधान नहींकरता और इदानीं काल मेंभी जगत् कारण के विना स्वतंत्र नहींहै इसवास्ते कारण रूपता करके कार्यकी उत्पत्तिसे पूर्व भी सत्त्वरूप कारण शेष रहताहै॥प्रश्न॥ यादिस्थूलत्वसावयवत्व अचेतनत्व परिच्छिन्नत्त्व अशुद्धत्वादि धर्मों वाले कार्य का शुद्ध चेतन ब्रह्म रूप कारणमानोगे तब सुषुप्ति और प्रलय मेंभी कारणके साथ अविभाग को प्राप्त हुआ जो कार्यहै सो कारणको भी अपने धर्मों

करके दूषित करदेगा तब सुषुप्ति प्रलय मेंभी कारण ब्रह्मको अशुद्धि आदि प्रसंगहोवैगा और समस्त कार्य को अभिभागकी प्राप्ति होने से पुनः उत्पत्तिका कोई निमित्त कारण तो है नहीं तबभोक्तृ भोग्यादि रूप करके उत्पत्ति नहीं होवैगी ब्रह्मके साथ अभिभागको प्राप्तभये जे भोक्ता हैं तिनकी यदि उत्पत्तिहोवैगी तब मुक्तोंकीभी उत्पत्ति होवैगी इसलिये तुम्हारा कथन असमीचीन है (उत्तर) हमारे में किंचित् भी असमीचीनता नहीं है और जो तुमने शंका की है वह सुषुप्ति में कारण रूपता को प्राप्तहोकर कार्य कारणकोभी दूषित कर देगी यह शंकाभी नहीं बनती क्योंकि जैसे घट शरावादिक जो हैं सो मृत्तिका रूप कारणको प्राप्त होकरभी मृत्तिकाको दूषितनहीं करसक्ते हैं और सुवर्णके भूषण अपने सुवर्ण रूप कारणको प्राप्त होकर भी सुवर्णको दूषित नहीं कर सक्ते हैं और पृथ्वीके जितने कार्य हैं सो पृथ्वी में लय भावको प्राप्त होकरभी पृथ्वी को नहीं दूषित करसक्ते हैं इसरीतिसे सुषुप्तिमें जितनेभोक्ताहैं वहभी अपने कारण को दूषित नहीं करसक्ते हैं और तुम्हारे मतमें तो कोई दृष्टांत नहीं बनेगा इसवास्ते तुम्हारे मत में सुषुप्ति भी नहीं बनैगी और हमारे मतमें तो कार्य कारणका अभेदभी है परन्तु कार्य मैंही कारण रूपता है कुछकारण में कार्य रूपता नहीं है क्योंकि कल्पित पदार्थमें अधिष्ठान की धर्मताहै अभेद होनेसे और अधिष्ठानमें कल्पितकी धर्मता नहीं है क्योंकि कारणकी कार्य से पृथक्सत्ता है और दृष्टांत जैसे इन्द्रजालिक करके फैलाई जो मायाहै

तिस माया के साथ तिसका तीनों कालमें स्पर्श नहींहै मायाको अवस्तु होने से तैसेही परमात्माका भी संसार रूपी मायाके साथ किंचिद् भी स्पर्श नहींहै (प्रश्न) मायावीका दृष्टांत नहींबनता क्योंकि मायावी मायाका उपादान कारण नहीं है (उत्तर) जैसे एकही स्वप्नका द्रष्टा स्वप्न दर्शन रूप मायाके साथस्पर्शको नहींप्राप्तहोताहै तैसे जाग्रत सुषुप्तिमेंभी किसीके साथ स्पर्शको नहींप्राप्त होताहै यदि अज्ञानी जीवों का अवस्थादिकों के साथ संबंध नहीं है तब फिर सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् ईश्वरका कैसे होगा किंतु कदापि नहीं होगा तीनों अवस्था में जो अव्यभिचारि है सो व्यभिचारि अवस्थाओं के साथ सम्बन्धको नहीं प्राप्त होता क्योंकि परमात्मा में जो तीनों अवस्थाका अवभासन है सो मायामात्र है और आचार्य्यों का वाक्यभी इस में प्रमाण है (अनादिमाययासुप्तोयदाजीवःप्रबुध्यते । अजमनिद्रमस्वप्नमद्वैतंबुध्यतेतदा १) अनादि माया करके सोताहुआ जीव जब तत्त्वमसि उपदेशकर के माया रूपी निद्राको त्याग देता है तब जन्म लय स्थिति अवस्था से शून्य अद्वैत ईश्वरको अपने स्वरूप करके अनुभव करता है और जो तुमने शंकाकी है संपूर्ण विभागको अविभाग प्राप्ति होनेसे पुनः विभाग करके उत्पत्तिमें कोई निमित्त नहींहै सो यहभी शंकानहीं बनती जैसे सुषुप्ति समाधि आदिकों में स्वाभाविक अविभाग प्राप्ति के होने परभी परंतु मिथ्या अज्ञानके विद्यमान होनेसे पूर्वकीनाईं पुनः विभाग बनजावेगा इस श्रुति प्रमाणसे(इमाःप्रजाःसन्ति

संपद्यनविदुः संतिसंपद्यामहेइतित इहव्याघ्रो वासिंहोवा वृकोवावराहोवा यद्यद्भवन्तितदाभवन्ति) सुषुप्ति कालसे पूर्व कालमें जिस जिस जात्यादिकों करके विभक्तहोती हैं प्रजाःपुनः उत्थानकालमेंभी तैसे होजाती हैं जैसेसुषुप्तिमें अभिभागभी है परमात्मा में परंतु मिथ्याऽज्ञान करके प्रतिबद्ध विभाग व्यवहार स्वप्नकीनाईं अव्याहतहै और स्थितिमेंभी देखतेहैं इसीप्रकार सुषुप्तिमेंभी मिथ्याअज्ञान करके प्रतिबद्ध विभाग शक्ति अनुमेयहै और मुक्तोंको सम्यग् ज्ञानकरके मिथ्या अज्ञानका नाशहोगयाहै इसलिये तिनकी पुनः उत्पत्ति होवै नहीं और जो तुमने दोष दियाहै कि शब्दादिकों से रहित जो ब्रह्म तिससे शब्दादिकोंके सहित विलक्षण जगत् कैसे उत्पन्न होगा सो यह दोष तुम्हारेको भी तुल्यहै क्योंकि शब्दादिकोंसे हीन प्रधानसे शब्दादिकोंवाला जगत् कैसे उत्पन्नहोसक्ताहै किंतु नहीं होसक्ता है और सत्कार्य की विरुद्ध कारणसे उत्पत्ति कैसे होगी यदि मानोगे तबतुम्हारे मत में भी असत्य कार्यबाद प्रसंग होजावेगा (प्रश्न) प्रत्यक्षादि प्रमाणों करके सिद्ध जो भेद चेतन भोक्ता है और शब्दादि विषय भोगहैं सोअद्वैत बादिनी श्रुतियों करके तिसका बाध कैसे होसक्ताहै यदि बाधहोगा तब तिनका विभाग नहीं होगा और होताहै और यदि विभाग नहींहोगा तब भोक्ताभोग्य होजावेगा और भोग्य भोक्ता होजावेगा क्योंकि परमकारण ब्रह्मका तो भेदही नहीं है (उत्तर) जैसे वीचितरंगादि समुद्रके जल से अभिन्न भी हैं और जलसे तिनका विभागही है और

परस्परभी तिनका विभागहै तरंगवीची से भिन्न प्रतीत होताहै और वीचीतरंगसे भिन्न प्रतीत होती है इसी रीतिसे यहां परभी भोक्तृभोग्य का परस्पर भेद और ब्रह्मसे अभेद होने में कोई दोषनहीं है और कारण से कार्यकी पृथक् सत्ताके अभावमें श्रुतिको प्रमाण दिखाते हैं यथा (सौम्यैकेनमृत्पिंडेन सर्वंमृन्मयंविज्ञातंस्याद्वा चारंभणंविकारोनामधेयं मृत्तिकेत्येवसत्यमिति एतदा त्म्यमिदंसर्वं तत्सत्यंसआत्मातत्त्वमसि ब्रह्मेदंसर्वंआत्मै वेदंसर्वं नेहनानास्तिकिंचन) इत्यादि श्रुतियां ऐक्यता का प्रतिपादन करतीहैं जैसे मृगतृष्णा उदक ऊषरादि भूमिसे अभिन्न है प्रतीति मात्रस्वरूप वाला होने से तैसेही भोग्यादि प्रपंच जातका भी ब्रह्मसे व्यतिरेक करके अभाव है (प्रश्न) जैसे एकवृक्ष है और अनेक शाखाहैं परंतु वृक्षशाखासे भिन्नभी है और अभिन्नभी है तैसे एकही ब्रह्म अनेक शक्तियों करके अनेक रूपहै इसलिये एकत्व और नानात्व उभयात्मत्व ब्रह्महीसत्य सिद्ध होगा और जैसे जल समुद्र रूपता करके एक है और फेन तरंग रूपकरके नाना है मृद रूपकरके एकहै और घट शरावादि रूपकरके नाना है तैसे ब्रह्मकी ए- कत्व अंशकरके ज्ञान से मोक्ष सिद्ध और नानात्व अंश करके कर्मकांडका आश्रय वैदिक व्यवहार सिद्ध होताहै इस रीतिसे भेदाऽभेद मतमें मृदादि दृष्टांत बनजावेगा और यदिअत्यंत अभेद मानोगे तब द्वैतके प्रतिपादक प्रमाणोंका बाध होजावेगा इसीहेतुसे व्यवहारकी सिद्धि के लिये नानात्व सत्य मानना योग्यहै (उत्तर) मृत्तिके

त्येवसत्यं) इस श्रुतिने कारण मात्रका निर्णय किया है और वाचारंभण शब्दकरके कार्यमात्रको मिथ्याकथन किया है सो दृष्टांत द्राष्टांत में (एतदात्म्यमिदंसर्वंतत्सत्यम्) इस श्रुतिने परम कारणकोही सत्य कहाहै और (सआत्मातत्त्वमसिश्वेतकेतो) इस श्रुतिने जीवमें ब्रह्मरूपता करके कथन किया है इसलिये भेद अभेद मत सत्यनहीं है क्योंकि विरोध भी आताहै एक में भेदअभेद विरोधी दो धर्मनहीं रहसक्ते हैं और दृष्टांत जैसे चौर बुद्धि करके जिसको राजाके दूतोंने पकड़ाहै चौर है वा नहीं है ऐसी परीक्षाके लिये तप्तपरशु तिसको ग्रहण कराया जाता है यदि वह मिथ्यावादी है तब तप्तपरशु के ग्रहण करनेसे वह दाहको प्राप्त होजाताहै और मारा बांधा भी जाताहै और यदि चौर नहीं है किंतु सत्यवादी है तब तो न वह दाहको प्राप्तहोताहै और न माराबांधा जाताहै किंतु छूटजाता है तैसेही ऐकात्म्य दर्शी जो पुरुष है वह मुक्त होजाता है और जो नानादर्शी है वह बन्धनको प्राप्तहोता है इसलिये एकत्वही सत्य है और नानात्व मिथ्याहै (प्रश्न) यदि एकत्वको सत्य मानोगे और नानात्वको सत्यनहीं मानोगे तब प्रत्यक्षादि लौकिक प्रमाणोंका बाध होजावेगा क्योंकि तिनका विषय कोई नहींरहा और विधि प्रतिषेध शास्त्रभी भेदको लेकर प्रमाण है वह भी अप्रमाण होजावेगा और मोक्ष शास्त्र काभी गुरु शिष्यके भेदका अभाव होनेसे बाध होजावेगा और मिथ्या मोक्षशास्त्र करके प्रतिपादित आत्मैकत्व कैसे सत्य रूपताको प्राप्त होगा (उत्तर) जैसे स्वप्न व्यव-

हार में जाग्रत से पूर्व सत्यताहै तैसे संपूर्ण भोक्तृभोग्या
दि व्यवहारों में भी ब्रह्मज्ञानसे पूर्व सत्यता है क्योंकि
यावत्पर्य्यंत ब्रह्मात्मैकत्व ज्ञाननहीं भया तावत्पर्यंत प्र-
माण प्रमेय व्यवहार में किसीको भी मिथ्यात्व बुद्धिनहीं
होती है अज्ञान करकेही सर्वजंतुवों को अहंमम अभि-
मान होरहाहै स्वाभाविकी ब्रह्मरूपताको त्यागकरके इस
लिये आत्मज्ञान से पूर्व पूर्वही सर्व व्यवहार सिद्ध होते
हैं और जिस काल में गुरुमुखसे तत्त्वमेवत्वमेवतत्
ऐसा उपदेश सुनताहै तिसी कालमें संशय विपर्यय से
रहित होजाता है और संपूर्ण कर्म इस के नाशको प्राप्त
होजाते हैं यही वेदांतका मुख्य सिद्धांतहै (प्रश्न)जैसे
मिथ्या रज्जु सर्प करके डसा हुआ मरतानहीं है और
मिथ्या मृगतृष्णा के जल पान करनेसे तृषा नहीं दूर
होती तैसे मिथ्या वेदांत वाक्यकरके सत्य अद्वैत बोध
नहीं बनताहै (उत्तर) क्या असत्यसे सत्यकी उत्पत्ति
नहीं होती अथवा असत्यसे सत्यका ज्ञाननहीं होता
यदि कहो असत्य से सत्यकी उत्पत्ति नहीं होती सो
तो हमभी मानते हैं और यदि कहो असत्य से सत्यका
ज्ञाननहीं होता सो नहीं बनता है क्योंकि जिसको सर्प
ने नहीं डसा किंतु तिसको ऐसा भ्रमहोगया है कि मेरे
को सर्पने डसा है तिसको कल्पित विषसे सत्य मरण
मूर्च्छादि देखने में आती हैं इसलिये यहभी नियम नहीं
है कि असत्य से सत्यज्ञान नहीं होता और मिथ्या स्वप्न
दर्शन से भी सत्यफलहोता है सो आपही श्रुतिकहती
है (यदाकर्मसुकाम्येषुस्त्रियंस्वप्नेषुपश्यति समृद्धिंतत्र

जानीयात्तस्मिन् स्वप्ननिदर्शने १ अथ स्वप्नेपुरुषंकृष्णं कृष्णदंतं पश्यति सएनंहंतीत्यादिना) शुभकर्म के करने में जब सुन्दर और भूषणोंकरके युक्तस्त्री को स्वप्न में देखै तब तिस के कर्मकी सिद्धिहोती है और यदि काले वर्ण के और श्याम दांतो वाले पुरुष को स्वप्न में देखै तब वह पुरुष तत्कालही मृत्युको प्राप्त होजाताहै अब यहां पर असत्य स्त्री के दर्शन से सत्य समृद्धिकी प्राप्तिकहीहै और असत्य श्याम पुरुष के दर्श से सत्यमरणहोता है इसवास्ते मिथ्या वेदमें भी सत्य ब्रह्मकी प्राप्तिकी हेतुता बनती है (प्रश्न) पूर्व आपने कथन किया है जो इस विद्वान्के संपूर्ण संशय छेदन होजाते हैं और कर्म नष्ट होजातेहैं सो तिनका स्वरूप और लक्षण नहींकहा तिसकोभी कहना चाहिये(उत्तर) एकपुण्यकर्म हैं दूसरेपापकर्म हैं तीसरे मिश्रित कर्म हैं फिर एक एक के तीन तीन भेद हैं ॥ पुण्योत्कर्ष पुण्य मध्यम पुण्य सामान्य तिनमें से पुण्योत्कर्ष रूपकर्म करके हिरण्य गर्भ शरीर की प्राप्ति होती है और पुण्य मध्यम रूपकर्म से इन्द्रादि शरीर की प्राप्ति होती है और पुण्य सामान्य कर्म से यक्षादि शरीर की प्राप्ति होती है पापोत्कर्ष पाप मध्यम पाप सामान्य तीन भेद पापकर्मके हैं तीनों में से पापोत्कर्ष से वृश्चिक गुल्म यूकवन मक्षिकादि शरीर की प्राप्ति होती है और पाप मध्यम से आम्र नारिकेल महिष अश्वगर्दभादि शरीर की प्राप्ति होती है पाप सामान्य से गजहास्ति पीपल तुलसी आदि शरीर की प्राप्ति होती है इसीप्रकार मि-

श्रित कर्म के भी तीन भेदहैं मिश्रोत्कर्ष मिश्र मध्यम मिश्र सामान्य तीनों में से मिश्रोत्कर्ष कर्म से निष्काम कर्म के अनुष्ठान के योग्य निर्विकल्प समाधि के योग्य मनुष्य शरीर की प्राप्तिहोती है और मिश्र मध्यम कर्म से अपने आश्रम के योग्य जो काम्यकर्म तिनके योग्य शरीर की प्राप्ति होतीहै मिश्र सामान्य कर्म से चांडाल व्याधादि शरीर की प्राप्ति होती है इसरीति से पुण्य पाप मिश्रित कर्मों का फल दिखादिया अब मानसादि कर्मके भेद दिखाते हैं परके द्रव्यको अन्याय करके ग्रहण करने का चिंतन करना और मनकरके दूसरे के मारण का चिंतन करना और परलोक कोई नहीं किंतु देहही आत्मा है ऐसा हठकरना यह तीन प्रकार का मानस कर्म है कठोर वचन बोलना असत्य भाषण करना और पीछे से दूसरेके दूषणों का निरूपण करना और राजवार्त्ता देशवार्त्ता का निष्प्रयोजन कथन करना यह चार प्रकार का वाणी का कर्महै अनीति से परकेधन का हरलेना और यज्ञ से बाह्यहिंसा करना और पर स्त्री में गमन करना यह तीन प्रकार का शारीरक कर्म हैं इनकाफल दिखाते हैं मन करके जो कर्म किया है तिसकाफल मन करकेही भोगे है और जो वाणी करके कर्म किया है तिसका फल वाणी करके पावै है और जो शरीर करके कर्म किया है तिसका फल शरीर करके भोगै है और फल दिखाते हैं शरीर कृतपाप कर्मों का फल वृक्षादि योनि को प्राप्त होना है और वाणी करके पापकर्मोंका फल पक्षिआदि योनिको प्राप्तहोनाहै

और मन करके सदैव पापकरने वाला चांडालादि यो-
निको प्राप्तहोवे है मनवाणी शरीर इनतीनों को निषिद्ध
कर्मसे हटाकर और इनका दमन करके और काम क्रो-
धादिकों का नियम न करके पश्चात् मोक्षरूपी सिद्धिको
प्राप्त होताहै अवांतर विभागकर्मका निरूपण करदिया
अब मुख्य विभागको दिखाते हैं एक आगामि कर्म हैं
दूसरे संचित कर्म हैं तीसरे प्रारब्ध कर्म हैं जब कि
प्रारब्ध कर्म के फलका भोक्ता होनाहुआ मरण पर्यंत
किये जो पुण्य पाप रूप कर्म हैं वह आगामि कर्म होते
हैं और जन्मका हेतु भूत होकर स्थित जो पूर्व जन्मोंमें
किये हुये पुण्य पापरूप कर्महैं वह संचित कर्म होते हैं
और जिनकर्मोंने इस वर्तमान शरीरको आरंभ करदिया
है वह प्रारब्ध कर्म होते हैं सो विद्वान्के संपूर्ण कर्म नाश
को प्राप्त होजातेहैं इसलिये विद्वान्का पुनः जन्महोता
नहीं कर्मका भेद निरूपणकरदिया अबसंशयका निरू-
पणकरतेहैं सो दोप्रकारकासंशयहै श्रुतियांकर्मकाबोधन
करती हैं या सिद्ध ब्रह्मका बोधनकरती हैं इसप्रकार की
जो चित्तकी वृत्तिहैइसीकानामप्रमाण गतसंशयहै और
ब्रह्म जगत्का कारण है अथवा प्रधानादि जगत्के का-
रण हैं इसप्रकार की जो चित्त की वृत्तिहै इसका नाम
प्रमेयगत संशय है सो दोनों प्रकारके संशय विद्वान्के
छूट जातेहैं ॥ असंभावना विपरीत भावनाको दिखाते
हैं असंभावना दो प्रकार की है एक प्रमाणगत दूसरी
प्रमेयगत है और एक प्रमाणगत विपरीत भावना दू-
सरी प्रमेयगत विपरीत भावना है सो दिखाते हैं ब्रह्म

को पृथिवी की नाईं प्रमाणांतर करके ज्ञात होने से श्रुति जो है सो सिद्ध ब्रह्मका प्रतिपादक कैसे होगी किंतु कदाचित् नहीं होगी इसप्रकार की निश्चयात्मक जो चित्तकी वृत्ति है तिसका नाम प्रमाणगत असंभावनाहै ब्रह्मको जगत् से विलक्षणता करके स्थित होनेसे और चेतन स्वरूप होने से और जगत्को जड़ स्वरूप होने से जगत्काकारण ब्रह्म कैसे होगा किंतु नहीं होगा इस प्रकारकी जो चित्त की वृत्ति विशेषहै तिसको प्रमेयगत असंभावना कहते हैं ब्रह्मको स्वतःसिद्ध होने से श्रुतियों की ब्रह्मके प्रतिपादन करने में निष्फलता है इस लिये श्रुतियां सर्व कर्म परकहैं इसप्रकार का जो निश्चय है इसीको प्रमाणगत विपरीत भावना कहते हैं जैसे तंतु और पटका कार्य कारण भाव समान रूपवालादेखपड़ताहै तैसे ब्रह्म और जगत्का नहीं देखपड़ताहै इस हेतु से जगत्का कारण प्रधानादिकहै ऐसा जो निश्चयहै इसीकानाम प्रमेयगत विपरीत भावनाहै और प्रमाणगत संशय जो है सो श्रवण से दूरहोता है और प्रमेयगत संशय मननसे दूरहोता है और विपरीत भावना का नाम विपर्यय ज्ञानभी है सो निदिध्यासन करके दूरहोता है और श्रवण करके असंभावना भी दूर होती है असंभावना विपरीत भावना यह दोनों ज्ञानके प्रतिबंधक हैं इस वास्ते ज्ञानके प्रतिबंधकों के नाश द्वारा श्रवणादि ज्ञानके प्रतिहेतु हैं यह तीनों श्रवण मनन निदिध्यासन भी ज्ञानके साधन हैं युक्तियों करके वेदांत वाक्यों के तात्पर्य को निश्चय करने का नाम

श्रवण है और जीव ब्रह्मके अभेद का साधक और भेद काबाधक युक्तियों से अद्वितीय ब्रह्मके चिंतनकानाम मनन है ॥ और अनात्माकार वृत्तिका व्यवधान रहित ब्रह्माकार वृत्तिकी स्थिरता का नाम निदिध्यासन है श्र-वणादिकों के लक्षण निरूपण करदिये अब प्रकरण को कहते हैं अध्यासही बंधका हेतु है और अध्यास की निवृत्ति का नाम मोक्ष है (प्रश्न) मीमांसक स्वर्ग की प्राप्तिको मोक्ष मानता है और तिसका एक देशी नित्य सुखकी प्राप्तिको मोक्ष मानता है और सांख्य अहंकार की निवृत्त होकर उदासीन अवस्था को प्राप्तहोजानेको मोक्षमानता है और सगुणोपासक सालोक्य सामीप्य सायुज्य सारूप्य यह चारप्रकारकी मोक्ष मानतेहैं और चार्वाक मतवाले अपराधीनता को मोक्षमानते हैं और जैन मतवाले ऊर्ध्वगतिको मोक्षमानतेहैं और नैयायिक एक विंशति दुःखों के ध्वंसको मोक्षमानतेहैं और कोई एक नवीन मतवालों का यह सिद्धांत है ज्ञानकी प्राप्ति के अनंतर प्रारब्ध कर्मों को भोगकर स्थूल शरीर को त्यागकर अंतवाहक शरीर से इच्छाचारी होकर ईश्वर में भ्रमते रहना और जबभोगोंकी इच्छाहोवे तबसंकल्प केइन्द्रिय रचकरभोगोंको भोगना और नियत काल इस प्रकार रहकर फिर जन्महोना इसीको मोक्षमानते हैं इन सबमतवालोंने अध्यासकी निवृत्तिकोतो मोक्षनहींमाना तब आप फिर कैसे तिसको मोक्षमानते हैं (उत्तर) इन संपूर्ण मतों में जो मोक्षमानी है सो सर्वथा वेद वि-रुद्ध है क्योंकि स्वयं कपोल कल्पित है श्रुति प्रमाण

से शून्य होने से और इनमें से भी जो नवीन की क-
ल्पी हुई मोक्ष है सो अत्यंत वेद विरुद्ध है औरमतोंसे
भी विरुद्ध है क्योंकि मुक्तका पुनरागमन किसी ने नहीं
माना और यदि मुक्तका भी पुनरागमन होगा तब कर्मी
से मुक्तकी क्या अधिकता होगी किंतु कुछनहीं होगी इस
लिये इन सर्वकी मुक्तित्याग ने योग्यहै और श्रुतिसिद्ध
मोक्ष स्वीकार करने योग्य है तथाच (श्रुतिः यथानद्यः
समुद्रं प्राप्य नाम रूपेत्यजंति तथा विद्वान् पुण्यपापे
विधूय निरंजनः परमसाम्यमुपैति सुहृदः साधुकृत्यांद्वि-
षंतः पापकृत्यामिति.) जैसे नदियां समुद्रको प्राप्तहोकर
नामरूपको त्याग देतीहैं तैसेविद्वान् भी पुण्यपापकोत्याग
कर अविद्या मलसेरहित शुद्ध ब्रह्म भावको प्राप्तहोजाता
है और जो सुहृदहैं सेवा करनेवाले सो तिस आत्मवित्
विद्वान्के पुण्य कर्मोंको ग्रहण करलेते हैं और जो द्वेषी
हैं निंदा करने वाले सो तिसके पापकर्मोंको ग्रहण कर-
लेते हैं विद्वान् अध्यास कृत संपूर्ण कर्मोंसे रहितहोकर
ब्रह्म रूपताको प्राप्तहोताहै इसश्रुति प्रमाणसे अध्यास
की निवृत्तिका नाम मोक्षहै और श्रुतिः (बन्धोहिवास-
नाबन्धोमोक्षःस्याद्वासनाक्षयः। भोगेच्छामात्रकोबन्धस्त
त्यागोमोक्षउच्यते २) वासना का नाम बंध है अर्थात्
जिसको वासना विद्यमान है तिसको बन्ध है और वा-
सनाके क्षयका नाम मोक्ष है और जिसकी वासना नष्ट
होगई है वहमुक्त है भोगों की इच्छा मात्रका नामबन्ध
है और इच्छाके त्याग मात्रका नाम मोक्षहै शिवगीता।
मोक्षस्यनहिवासोऽस्तिनग्रामान्तरमेववा। अज्ञानहृद्

ग्रन्थिनाशोमोक्षइति३) देशांतर में मोक्षका निवास नहीं है और ग्रामके अंतरभी नहीं है हृदयमें अज्ञान की ग्रंथिके नाशका नाम मोक्षहै अर्थात् अध्यासकी निवृत्तिका नाम मोक्ष है श्रुतिस्मृति सिद्ध मोक्षका निरूपण करदिया अब इस किरणके विषयों को संक्षेपसे चौपाई में दिखाते हैं (चौपाई) गुरुलक्षण प्रथमही बखानो ॥ शिष्य लक्षण तापाछे जानो १ महावाक्य का कियो विचार ॥ सहित अभेद लक्षण विस्तार २ तत्वं पद दोनों दरशाये ॥ वाच्यार्थ लक्ष्यार्थ बताये ३ शक्ति अरु लक्षणा पुनिगाई ॥ एकता तिनकी दई सुनाई ४ तीन शरीर पुनितीन अवस्था ॥ तिनकी भिनभिन कही व्यवस्था ५ उपाधि कृत पुनि भेद बतायो ॥ निरउपाधि हि ब्रह्म ठहरायो ६ पुनि लक्षणका कियो विचार ॥ भेद कहे तिसके निस्तार ७ अध्यास बंधका हेतुकहै ॥ छांडि अध्यास परम पदलहै ८ कर्म निरूपणनीके गायो ॥ लक्षण अरु पुनिफलदरशायो ९ द्विप्रकारकी भावनाजानो ॥ संशय सहित विपर्यहि ठानो १० बंध मोक्षका कियो विचार ॥ वेदबाह्य सब दिये निकार ११ दो० तृतीय किरण पूरण भयो चितमेंभयो हरषात ॥ जेअविलोकन असकरैं तसअध्यास नसात १ ॥

इतिश्रीसिद्धांतप्रकाशनामग्रंथेअध्यास
वर्णनोनामतृतीयकिरणः ३॥

दो० अज अविनाशि अचल जो निर्विकार निर्द्वन्द्व जहजानै तस आपमें लहैसु परमानंद १ (प्रश्न) शुद्ध चैतन्य स्वरूप ब्रह्ममें प्रपंचका आरोग्य कैसे हुआ

(उत्तर) अनादि शुद्ध चेतनब्रह्ममें कल्पित माया है तिस अनादि कल्पित मायाका ब्रह्मके साथ अनादि कल्पित तादात्म्य संबंध है सो माया अविद्या अज्ञान प्रकृति पर्याय शब्दहैं सो प्रकृति माया अविद्यारूप करके विभागको प्राप्त होती है रजतम गुणको दबाकर शुद्ध सत्व गुणकरके युक्त जो प्रकृति तिसकी माया संज्ञा है और जो रजतमको न दबाकर किंतु रजतमसे आप दब करमलिन सत्वगुण युक्तजोप्रकृति तिसकी अविद्यासंज्ञा है माया में जो ब्रह्म चेतनका प्रतिबिंब और अधिष्ठान चेतन माया के सहित तिसकी ईश्वर संज्ञाहै सो ईश्वर जगत्‌काकर्त्ता सर्वज्ञहै और अविद्यामें जो ब्रह्म का प्रतिबिंब और अधिष्ठान चेतन कूटस्थ अविद्याके सहित तिसकी जीवसंज्ञाहै सो जीव अल्पज्ञहै इसरीतिसे ईश्वरजीव अनादि कल्पितहैं अर्थात् ईश्वरत्व जीवत्व धर्मकल्पितहैं उपाधिके कल्पितहोनेसे और स्वरूपसे तो दोनोंनिर्विकार सच्चिदानंदरूपी हैं तिनका अभेदपूर्व सिद्धकरआये हैं सो ईश्वरकी उपाधिमाया एकहै इस वास्ते ईश्वरभी एक है और जीवनकी उपाधि अविद्या की अंशे नाना हैं इसलिये जीवनाना हैं और सृष्टि से पूर्व जीवकी उपाधि जीवन के कर्मों के सहित माया में लीन होकर रहति है और माया सुषुप्ति में अविद्याकी नाईं ब्रह्म से भिन्न प्रतीति नहीं होती इसी हेतु से सृष्टि से पूर्व सजातीय विजातीय स्वगत भेद से रहित एकही अद्वितीय सच्चिदानंद रूपब्रह्मथा तिस ब्रह्मको सर्ग के आद्यकाल में सृज्यमान जो प्रपंच तिसकी विचित्रताका हेत जो प्रा-

णियों के कर्म तिनके सहित अपरिमित शक्तिवसिष्ट जो माया तिसकेसहितहोकर प्रथम संपूर्ण जगत्के सर्जनका संकल्प होताभया (तदैक्ष्यतवहुस्यां प्रजायेयेतिसोऽका मयतबहुस्यां प्रजायेयेति)सो परमत्मा इच्छाकरता भया मैं बहुत रूपहोजाऊं और प्रजारूप करके उत्पन्नहूं इस प्रकारके ईश्वर के संकल्पलके अनंतर आकाशादिक म- हाभूत उत्पन्न हुये प्रथम आकाश उत्पन्नहुआ आकाश से वायुहुआवायु से अग्निहुई अग्निसे जलहुये जलोंसे पृथिवी हुई इन अपंचीकृत पांच भूतोंकी पंचतन्मात्रा भी संज्ञा है और सूक्ष्म भूतभी इनकी संज्ञा है और त्रिगुणात्मक मायाके यह कार्य हैं सत्वरजतम यह तीन गुणहैं और तीनों गुणोंकी साम्य अवस्था का नाम प्र- कृति है तिसीको मायाभी कहेहैं तिन पांच भूतों के सत्व गुणभागोंकरके क्रमतेज्ञानेन्द्रिय पंच उत्पन्नहुये आकाश सत्वगुण के अंश ते श्रोत्रहुआ वायुके सत्वगुणअंशते त्वगहुआ और तेजके सत्वगुणअंशते चक्षुःहुआ और जलके सत्वगुणअंशते रसनाहुई और पृथिवी के सत्व गुण अंशसे घ्राणेन्द्रिय हुआ पुनः पांचों भूतों के मि- लित सत्वगुण अंश ते अंतःकरण उत्पन्न हुआ तिस अंतःकरणकी चारवृत्ति हैं मनबुद्धि अहंकार चित्त और शारीरकोप निषद् में मन आदिकों के स्थानभी कहे हैं (मनसःस्थानंगलांतरंबुद्धेर्वदनं अहंकारस्यहृदयं चितस्यनाभिरिति १) गलेके अंतर मनका स्थान है और बुद्धिका मुखस्थान है अहंकार का हृदयस्थान है चित्तका नाभि स्थान है अब क्रमसे इनके अधिष्ठात

देवतावों का निरूपण करते हैं श्रोत्रका दिग् देवता है त्वगका वायु चक्षुः का सूर्य रसनाका वरुण घ्राणका अश्विनीकुमार और मन का चन्द्रमा बुद्धि का ब्रह्मा अहंकारका शंकर चित्तका विष्णु और इनहीं पांचभूतों के भिन्न भिन्न रजो गुण अंश ते पांच कर्मेन्द्रिय उत्पन्न हुये आकाशके रजो अंशसे वाक् वायुसे हस्त तेजसे पाद जलसे पायु पृथिवी से उपस्थ और पांचो कर्मेन्द्रियों के क्रमसे पांच अष्टात देवताहैं वाक्का वह्निप्राणिका इन्द्रपादिको मन गुदाका मृत्यु उपस्थका प्रजापतिः और पांचों महाभूतों के मिलित रजो अंशसे पांच वायुप्राण अपानव्यान उदान समान इननामों करके उत्पन्न हुये हैं तिनमें से सदा ऊर्ध्वगति वाला प्राण है नाभिसे लेकर नासिका पर्यंत तिसके स्थान हैं और अधोगति वाला अपान है नाभिसें लेकर गुदा पर्यंत तिसके स्थानहैं और तिर्यक् गतिवाला व्यान है संपूर्ण शरीर में व्याप्यरहा है और ऊर्ध्वगति करके उत्क्रांति वाला उदान है कंठ तिसका स्थान है जब कि जीवलो कांतरको गमन करता है उदान वायु करकेहीं करता है तिसी कालमें इस उदानकी उर्ध्वगति होती है और प्राणोंकीनासिका द्वारासदा उर्ध्वगति होतीहै और उदान की मरण समयमें होती है इतनाहीं दोनों में भेदहै और भक्षण किया जो अन्न और पान किया जो जल तिन का समभागकरने से इसकी समान संज्ञा है यह समान वायु संपूर्ण शरीरमें रहेहै परंतु स्थान इसका नाभि है शब्दस्पर्श रूपरसगंध यह पांच पांचही ज्ञानेन्द्रियों के

विषय हैं जो श्रोत्रसे सुनाजाताहै तिसका नाम शब्दहै और जो त्वचा से शीत उष्ण जानाजाता है तिसका नाम स्पर्शहै जो नेत्रोंसे देखाजाताहै तिसका नामरूप है जो जिह्वा करके स्वाद जानाजाता है तिसका नाम रस है जो नासिकाकरके ग्रहण कियाजाता है तिसका नाम गंध है और बचन आदान गमन विसर्ग आनंद ये पांच पांचही कर्मेन्द्रियों के कर्म हैं मुखसे बोलने का नाम बचनहै हाथोंसे ग्रहणका नाम आदान है पादोंसे चलने का नाम गमन है गुदासे मलके त्यागका नाम बिसर्ग है उपस्थ इन्द्रिय करके भोग्यकालके सुखका नाम आनंदहै इन्द्रिय विषयों का निरूपण कर दिया॥ अब पंचीकरण का निरूपण करते हैं तमोगुण प्रधान अपंचीकृत पंचभूतों से पंचीकृत स्थूल भूत ईश्वरकी आज्ञाकरके उत्पन्न हुये और पुनः भगवान् पंचीकृत भूतोंका पंचीकरण करते भये प्रथम आकाशके दो भागकरके पुनः दोनों में से एकभाग के चारभाग करके तिन चारों अंशों को वाय्वादि चारोंमें जोड़ देनेसे पुनः वाय्वादि भूतों के भी प्रथम एक एकके दो दो भाग करके पुनः दोनों में से एकएक आधे आधे के चार चार भाग करके वह चारोंभाग अपने से इतरोंमें जोड़ देने से और तिन चारोंभागों के आधे का चतुर्थांश लेलेने से संपूर्ण भूतोंका इसप्रकार पंचीकरण होता है (प्रश्न) पंचीकरण होनेसे पांचोभूतोंमेंपांचो अंशमिले हैं केवल शुद्ध एकभूततो अब रहा नहीं तब यह पृथिवी है यहै जल है ये वायुहै इत्यादि व्यवहार क्यों होताहै क्योंकि

जो पृथिवी है तिस में भी पांचही भूत हैं पंचीकरण होने से (उत्तर) पृथिवी आदि भूतोंमें अपना अपना भाग अधिक होने से यह पृथिवी है ये जल है ऐसा व्यवहार होता है और व्यास भगवान् का सूत्र भी पंचीकरण में प्रमाण है (वैशेष्यात्तुतद्वादस्तद्वादइति) अपने अपने भागके अधिक होनेसे यह पृथिवी है ये जल है इत्यादि व्यवहार होता है अब भूतोंके गुणों को दिखाते हैं प्रतिध्वनि रूप आकाश का गुणहै और वीसी शब्द और अनुष्ण शीतस्पर्श यह दो गुण वायु के हैं भुक्भुक् शब्द उष्ण स्पर्श प्रकाश रूप यह तीन गुण अग्नि के हैं चुलुचलु शब्द शीतस्पर्श मंद शुक्ल रूप मधुररस यह चारगुण जलके हैं कटकट शब्द कठिन स्पर्श नीलादिरूप आम्लादिरस और सुरभि असुरभि गंध ये पांचगुण पृथिवीके हैं और पूर्वकहे जो अपंचीकृत भूत तिनका कार्य यह लिंग शरीरहै (प्रश्न) प्रतीयमान स्थूल शरीर सेही संपूर्ण व्यवहार सिद्ध होताहै पुनः लिंग शरीर माननेका क्या प्रयोजन है (उत्तर) यदि लिंग शरीर नहीं मानोगे तव स्थूल शरीर तो यहांही भस्म होवै है पुनः पुण्य पाप के फलके भोग्यके लिये परलोक में कैसे गमनहोवैगा और विना शरीरके परलोक गमनादिक नहींवनतेहैं और फलभोग भी नहीं वनताहै इसवास्ते लिंगशरीरको अवश्य स्वीकार करना होगा (पंचप्राणमनोबुद्धि दशेन्द्रियसमन्वितम्। अपंचीकृतभूतोत्थंसूक्ष्मांगंभोगसाधनम् १) पंचप्राण मन बुद्धिपंचज्ञानेन्द्रिय पंचकर्मेन्द्रिय इनकरके युक्त अपंची

कृत भूतोंसे उत्पन्न सूक्ष्म शरीर भोग्य का साधन है १ और तमोगुण युक्त पंचीकृत पंचभूतों से भूलोक १ अंतरिक्षलोक २ स्वर्लोक ३ महर्लोक ४ जनलोक ५ तपलोक ६ सत्यलोक ७ यह सात ऊपरके लोक और अतल १ वितल २ सुतल ३ तलातल ४ रसातल ५ महातल ६ पाताल ७ ये सप्त नीचे के लोक अर्थात् चौदह लोक रूप ब्रह्माण्ड उत्पन्न हुआ और जरायुज अंडज स्वेदज उद्भिज ये चार प्रकार के शरीर भी तमोगुण पंचीकृत भूतों से उत्पन्न हुये जेर से जो उत्पन्न होवै तिसका नाम जरायुज हैं मनुष्य पशुआदिकों के शरीर जरायुजहैं और जो अंडसे उत्पन्न होवे तिसका नाम अंडज है पक्षिसर्पादिकों के शरीर अंडजहैं और पसीने से जो उत्पन्न होवैं तिनका नाम स्वेदजहै जूवां आदिकों के शरीर स्वेदजहैं और जो भूमिको भेदन करके उत्पन्न होवैं तिनका नाम उद्भिज है वृक्षादिकोंके शरीर उद्भिज हैं उत्पत्ति क्रमसे प्रलय क्रम विपरीत है सो भी दिखाते हैं चारप्रकार की प्रलय है नित्य १ प्राकृत २ नैमित्तक ३ आत्यंतिक ४ इन भेदों से सो चारों में से सुषुप्तिका नाम नित्य प्रलयहै क्योंकि सुषुप्ति में संपूर्ण कार्य का प्रलयहोने से (प्रश्न) सुषुप्ति काल से जब उत्थानता होती है तब तिसको सुखादिकों की स्मृति और पूर्व पदार्थों का स्मरण होता है सोनहुआ चाहिये क्योंकि सुखादिकों का कारण जो धर्म अधर्मादिक और पदार्थों की स्मृति का कारण जो संस्कार सो तो अबरहे नहीं वह तो सुषुप्ति काल में लयको प्रा

प्तहोते हैं पुनः स्मरण न हुआ चाहिये (उत्तर) सुषुप्ति में धर्म अधर्म और संस्कार यह स्वरूप से नाशको नहीं प्राप्त होते हैं किंतु अपना कारण जो अविद्या तद्रूप होकर अविद्यामें स्थित रहते हैं इस वास्ते पुनः सुखादिकों के स्मरण का कारण जो धर्माऽधर्म और पदार्थों की स्मृति का हेतु जो संस्कार वह फिर जाग्रत में उत्पन्न होआते हैं (प्रश्न) सुषुप्ति में अंतःकरण जब के कारण रूपताकरके स्थितहुआ तब प्राणक्रिया भी नहीं होनी चाहिये क्योंकि प्राणादि क्रियातो अंतःकरण के अधीन है सो अंतःकरण तो रहानहीं कारणके अभाव होनेसे कार्य का भी अभाव होताहै (उत्तर) जैसे देहका कारण जो धर्म अधर्मादि तिनके अभाव होनेसे देह का भी अभावहै और दूसरेको सुषुप्तकी देह भ्रांति करके प्रतीति होती है तैसे प्राणोंका भी अभावहै परंतु दूसरेको भ्रांतिकरके श्वासोंका आनाजाना प्रतीति होता है (प्रश्न) प्रेत्यके तुल्य सुषुप्त भी हुआ क्योंकि जैसेप्रेत के भी शरीर प्राणोंका अभाव होजावै है तैसे सुषुप्त का भी हुआ सुषुप्तकी प्रेतसे विलक्षणता कुछ न हुई (उत्तर) सुषुप्त पुरुषका लिंग शरीर संस्कार रूपता करके इसी जगह रहै है और प्रेतकालिंग शरीर पूर्वले जन्मातरके पदार्थों के संस्कारों करके लोकान्तर में गमन करजाता है इतनी विलक्षणता है (प्रश्न) सुषुप्त पुरुषके शरीर और प्राणों की क्रिया भ्रमसे प्रतीतिहोवै है परंतु कर्म इन्द्रियों के व्यापार में तो भ्रांति नहीं बनती कैसे कहते हो सुषुप्त के शरीर प्राणादिक नहीं रहते हैं (उत्तर)

अंतःकरण की दो शक्तिहैं एक ज्ञानशक्ति दूसरी क्रिया शक्ति दोनोंमेंसे ज्ञानशक्ति विशिष्ट अंतःकरणका सुषुप्ति में लय होजाता है और क्रियाशक्ति विशिष्टका लयनहीं होता अर्थात् क्रियाशक्ति विशिष्ट अंतःकरण सुषुप्ति में भी बनारहता है इसलिये प्राणादि क्रिया बनी रहती है अब कोई विरोध नहीं आता है तथाचश्रुतिः (सतासौम्यतदासंपन्नोभवति स्वमपीतोभवति) हे सौम्य सुषुप्ति कालमें जीवात्मा सद्रूप ब्रह्म के साथ अभेद को प्राप्त होताहै तिरोहित उपाधिवाला हुआहुआ ये श्रुति सुषुप्ति कालमें सम्पूर्ण प्रपंचके अभावमें प्रमाणहै॥ और जिस कालमें कार्य ब्रह्म हिरण्यगर्भ के सहित सम्पूर्ण कार्यका नाश होताहै तिसका नाम प्राकृत प्रलय है और पूर्व उत्पन्न हुआहै ब्रह्म साक्षात्कार जिसको तिस ब्रह्माका जब ब्रह्मांडका अधिकाररूप प्रारब्ध कर्म समाप्त होजाता है तब ब्रह्माकी विदेहमुक्ति होवै है और उत्पन्न तत्त्व साक्षात्कारवाले जो ब्रह्मलोक निवासी हैं वह भी ब्रह्माके साथही विदेहकैवल्यको प्राप्तहोते हैं और जिन को ब्रह्मलोकमें भी ब्रह्माद्वारा ब्रह्म साक्षात्कार नहींहुआ वह फिर माया में निवृतिरूप लयको प्राप्त होते हैं इसी अर्थ में श्रुतिको प्रमाण दिखाते हैं (ब्रह्मणासहतेसर्वे सम्प्राप्तेप्रतिसंचरे । परस्यांतेकृतात्मानःप्रविशंतिपरंपदमिति) प्रतिसंचरेसम्प्राप्ते अर्थात् प्राकृतप्रलयके प्राप्त हुयेपर और परस्यांते हिरण्यगर्भके मुक्तिसमयमें तेसर्वे वह सम्पूर्ण ब्रह्मलोक निवासी जो हैं कृतात्मानः तत्त्व साक्षात्कारकी प्राप्तिसे कृतात्माहुयेहुये ब्रह्माके साथ वि-

देह कैवल्यको प्राप्त होतेहैं (प्रश्न) यह ब्राह्मप्रलयहुई ब्रह्म में लयहोने से प्राकृत प्रलय इसको कैसे आपने कहा (उत्तर) तत्त्व साक्षात्कारवालों का ब्रह्म में प्रवेश होताहै परन्तु जिनको तत्त्व साक्षात्कार नहीं हुआ वह प्रकृतिमेंही लयहोते हैं इसी निमित्त से इसका नाम प्राकृत प्रलय है इसरीति से ब्रह्मा अपने लोक निवासियों के सहित जब मुक्त होता है तब ब्रह्माके आश्रित जो ब्रह्मांडहै और तदंतरवर्त्ति जितने लोक हैं और तिनमें जितने स्थावर जंगमरूप जो भूतों के कार्यहैं तिन सर्व का प्रकृति में लय होता है किन्तु ब्रह्म में लयहोवै नहीं क्योंकि लय दो प्रकारकी होवैहै एक बाधरूप दूसरी निवृतिरूप तिनमेंसे उपादान कारणके सहित जो कार्यका नाशहै तिसकी बाधसंज्ञा है सो बाधरूपलय ब्रह्ममें होवै है क्योंकि जीवपनेका उपादान कारण जो अविद्या और अविद्याका कार्य जो शरीरादि संघात तिस संघात के सहित अविद्याका नाश होताहै तब साक्षात्कार होनेपर इसी निमित्तसे वह ब्रह्ममें अभेदरूप लयको प्राप्तहोता है और जहां पर उपादान कारण के विद्यमान रहतेही कार्य का नाश होता है तिसका नाम निवृति रूप लयहै अर्थात् जिनको तत्त्व साक्षात्कार नहीं हुआ है तिनके जीवपने के उपादान कारणके विद्यमान होनेसे शरीरादि कार्य नाशको प्राप्त होजाते हैं तिनकी प्रकृति में निवृत्ति होती है ब्रह्ममें तिनका बाध रूप लय नहींहोता है इसहेतुसे इसका नाम प्राकृत प्रलय है और ब्रह्म साक्षात्कारके अनंतर कार्यके सहित अविद्याका नाश

होताहै पुनः जन्मादि नहीं होतहै इसी का नाम तुरीय प्रलयहै कठश्रुतिः (यदासर्वेप्रमुच्यन्तेकामायेऽस्यहृदिश्रिताः। अथमर्त्योऽमृतोभवत्यत्रब्रह्मसमश्नुते१) जिस काल में इस विद्वान् के हृदयकी संपूर्ण कामना निवृत्त होजाती है तब यह विद्वान् अमृत रूप होकर इसी लोकमें प्राण बियोग कालमेंही ब्रह्ममें अभेदको प्राप्त होते हैं किंतु लोकांतरमें इसका गमन नहीं होता है बृहदारण्यकश्रुतिः (यद्यथाहिर्निल्वयनीवल्मीकेमृताप्रत्यस्ताशयीतैवमेवेद ँ शरीरंशेतेअथायमशरीरोऽमृतः प्राणोब्रह्मैवतेजएव २) जैसे सांपकी केचकी सांप से भिन्न होकर बंबीदेश में शयन करती है तिसीप्रकार विद्वान्का शरीर भी शयन करता है और यह विद्वान् शरीर प्राणोंसे रहित होकर अमृत रूप होता है और एक जीववाद में तुरीय प्रलय युगपत होती है अनेक जीववादमें क्रमसे होती है और आदिकी तीन प्रलय जो हैं सो जब जीवोंके कर्म फलदेने को उपरत होते हैं तब होती हैं और तुरीय प्रलय ज्ञानसे होती है सृष्टि क्रमसे प्रलय क्रम विपरीत है जगत्की प्रतिष्ठा जो पृथिवी है सो महाप्रलयमें जलों में लय होती है और जल तेजमें लीन होते हैं और तेज वायु में वायु आकाश में और आकाश अव्यक्त मायामें और माया निर्गुण ब्रह्म में लीन होती ऐसे विष्णुपुराण में महाप्रलय का क्रम दिखाया है सो जगत्की उत्पत्ति स्थिति लयका कर्त्ता एकही ईश्वरहै (प्रश्न) ईश्वरको जगत्की कर्तृता नहीं बनती क्योंकि वैषम्य नैर्घृण्यतादि दोष आते हैं सो दि-

खाते हैं किसी देवतादिकों को अत्यंत सुखी वनाया है और पशु आदिकों को अत्यंत दुःखी उत्पन्न किया है और कोइ मनुष्यादिकों को मध्यम भोगके भोगनेवाला रचा है इसप्रकारकी सृष्टिको उत्पन्न करनेवाले ईश्वर को पामर पुरुषों के सदृश राग द्वेषवाला होनेते अनीश्वरत्ता प्राप्त होती है सो करता बनैनहीं (निरवद्यंनिरंजनम्) निर्दोष अविद्या मलसे रहितकोही श्रुति ईश्वर कहती है सो श्रुतिसे विरोध होगा और जीवोंको सुख दुःख का सम्बन्ध करने से और प्रलय करने से अतिक्रूरता रूप निर्घृणता भी प्राप्त होती है इसीसे ईश्वरको जगत्‌की कर्तृता नहीं बनती (उत्तर) यदि निरपेक्ष अर्थात् केवल ईश्वरको कारण मानैं तब वैषम्यनिर्घृणतादि दोषहोवैं सोतो है नहीं किंतु धर्मअधर्म सापेक्ष ईश्वरको विषमता कारण मानै हैं सो धर्माऽधर्मादि सापेक्ष हुआही विषम सृष्टिको उत्पन्न करताहै इसलिये ईश्वरमें कोई दोष नहीं आता (प्रश्न) धर्माऽधर्मही सृष्टिको उत्पन्न करदेवैंगे ईश्वर मानने का कोई प्रयोजन नहींहै (उत्तर) जैसे मेघजोहै सो व्रीहियवादिकोंकी सृष्टि उत्पन्नकरनेमें साधारण कारणहै और व्रीहियवादिकों की वैषम्यतामें ततद्बीजगत असाधारण सामर्थ्य कारण हैं तैसेही ईश्वरभी मनुष्यादि सृष्टि में साधारण कारणहै और देव मनुष्यादिकों की वैषम्यता में तत् तत् जातीगत असाधारण कर्म कारण सापेक्ष ईश्वरको कारणता श्रुति प्रमाणसे है श्रुतिः (पुण्योवै पुण्येनकर्मणाभवतिपापःपापेनेति) पुण्यकर्मों करके

पुण्ययोनि को प्राप्त होवै हैं पापकर्म करके पापयोनि को प्राप्त होवै हैं (येयथामांप्रपद्यंतेतांस्तथैवभजाम्यहम्) इन श्रुतिस्मृति प्रमाणसे भी ईश्वर में दोषनहीं आताहै (प्रश्न ॥ सदेवसौम्येदमग्रआसीद) इसश्रुति प्रमाणसे सृष्टिसे पूर्व अविभागका निश्चयहोनेते कर्मतो आदिमें नहीं है जिस करके विष सृष्टिहोवै और सृष्टि से उत्तर कालमें जब शरीरादिकों की उत्पत्ति होले तब कर्महो और जब कर्महोले तब शरीरादिकोंकी उत्पत्तिहो इसप्रकार अन्योन्याश्रय दोष आता है इस वास्ते विभागसे उत्तरकर्मापेक्ष ईश्वरकी प्रवृत्ति होवैगी क्योंकि विभागसे पूर्व तो सृष्टिकी वैचित्रताका कोई कारण नहीं है इसलिये प्रथम सृष्टि जोहै सो तुल्यहीहोवैगी(उत्तर) यह दोष तब आवै यदि आदि मत संसार होवै सो तो नहीं है क्योंकि संसार अनादि है इस वास्ते येदोनों दोष नहीं आते हैं बीजांकुरवद् कर्मोंको और सर्गकोकारण कार्य भाव करके विरोध नहीं आता है (प्रश्न) संसार की अनादिता में क्या प्रमाण है (उत्तर) सृष्टिकोआदि माननेमें प्रथम शरीरकी उत्पत्तिनहीं बनती क्योंकि तिसका कारण कोई नहीं है और (सूर्याचन्द्रमसौधाताय थापूर्वमकल्पयदिति) धाता जो ब्रह्मा है सो जैसे पूर्व कल्पमें सूर्य चंद्रमा आदिकथे तैसेही इस कल्पमें भी कल्पना करताभया सो सृष्टिकी अनादिता में यह श्रुति और पूर्वोक्त युक्ती प्रमाणहै इसलिये सृष्टि अनादि सिद्ध होती है (प्रश्न) सृष्टिको अनादितारहो परंतु आकाशकी उत्पत्ति नहीं बनै है क्योंकि छांदोग्योपनिषद्में

(सदेवसौम्येदमग्रआसीत्तदेकमेवाद्वितीयम्) इस श्रुति ने सत् शब्दके वाच्य ब्रह्मको प्रसंग मेंलाकर पश्चात् (तत्तेजोऽसृजत) इस श्रुतिने तेज अप अन्न तीनोंकी उत्पत्ति विधानकी है और आकाशकी उत्पत्ति छांदोग्यमें कहीं भी बिधान नहीं की इस वास्ते आकाशकी उत्पत्ति नहीं बनती है (उत्तर) छांदोग्यमें आकाशकी उत्पत्ति विधान मतहो परंतु तैत्तरीयक उपनिषद्‌में(सत्यंज्ञानमनंतंब्रह्मके उत्तर (तस्माद्वाएतस्मादात्मनःआकाशःसंभूतः) इस श्रुतिने आकाशकी उत्पत्ति विधान की है(प्रश्न) श्रुतियोंका परस्पर विरोध आवेगा क्योंकि कहीं तेजादि सृष्टि और कहीं आकाशादि सृष्टिविधान करनेसे और श्रुतियों की एक वाक्यता भी नहीं बनेगी तब श्रुतियोंको अप्रमाणता प्राप्त होवैगी (उत्तर) छांदोग्यश्रुतिसे तैत्तरीय श्रुती बलवान्‌है क्रमकोविधान करने से सो क्रम यहहै (तस्माद्वाएतस्मादात्मनआकाशःसंभूतः आकाशाद्वायुः वायोरग्निरिति) तिस परमात्मा के संकाशसे प्रथम आकाश उत्पन्न हुआ आकाशसे वायु वायु से तेज तेज से जल जल से पृथिवी इस रीति से क्रम को विधान करनेसे तैत्तरीय श्रुति बलवान्‌है और केवल तेज अप अन्नकी उत्पत्ति विधानकरनेसे छांदोग्य श्रुति दुर्बलहै इसवास्ते तैत्तरीय श्रुतिसे आकाश वायु दोनों का आनयन करके छांदोग्यमें पुनः दोनों की एक वाक्यता बन जावेगी विरोध भी नहीं आवैगा और जितनाकार्यजातीहै सबवस्तु परिच्छेदवाला है आकाश भी कार्य है तिसको भी बस्तु परिच्छेदता स्पष्ट है पृ-

थिवी आदिकों से और जो कार्य होताहै सो सब अ-
नित्य होता है आकाश भी कार्य है वह अनित्य भी
है पूर्वोक्त श्रुति युक्ति प्रमाण से आकाशकी उत्पत्ति
भी सिद्ध हुई (प्रश्न) जैसे वायु आदिकों का कारण
आकाश ब्रह्म से उत्पन्न होता है तैसेआकाशके कारण
ब्रह्मकी भी किसीसे उत्पत्ति मानो कारणता तो दोनों में
तुल्य है (उत्तर) यदि ब्रह्मकी उत्पत्ति मानोगे तब अ-
नवस्था दोष प्राप्तहोगा क्योंकि अनादि कारण तो कोई
रहेगा नहीं (प्रश्न) बीजांकुरवत् अनादिता भी बन
जावैगी अथवा दीप से जैसे दूसरा दीप उत्पन्न होवै है
तैसे ब्रह्म से ब्रह्मांतर की उत्पत्ति होजावैगी अनवस्था
दोष नहीं आवैगा (उत्तर) ब्रह्मकी उत्पत्ति नहींबनती
इसमें व्यास भगवान् का सूत्र प्रमाणहै (असंभवस्तु
सतोऽनुपपत्तेः) अ।२। पाद।३ सू।९ सद्रूप ब्रह्मकीकिसी
अन्य से उत्पत्ति नहीं बनती क्योंकि अनुत्पत्तेः अर्थात्
सन्मात्र ब्रह्मकी सद्मात्र से उत्पत्ति न होने से क्योंकि
अतिशयसे विनाकार्य कारण भाव नहीं बनता और सा-
मान्यसे विशेषकी उत्पत्ति देखी है जैसे मृत्तिका सामान्य
से घटादि रूप विशेषोंकी उत्पत्ति देखीहै और घटादिकों
से मृत्तिका की उत्पत्ति नहीं कहीं देखी (कथमसतः
सज्जायेत) असत् से सत्यकी उत्पत्ति कैसे होगी किंतु
कदापि नहीं होगी यह श्रुति असत्से सत्य की उत्पत्ति
का निषेधभी करतीहै (सकारणंकरणाधिपाधिपो न चा-
स्यकश्चिज्जनितानचाधिपइति) सो ब्रह्मही सर्वका का-
रणहै और करणोंका भी अधिपति है और तिसका कोई

उत्पन्न करनेवाला नहीं है और न कोई तिसका स्वामी है यह श्रुति ब्रह्मकी कारणता का निषेध करती है और दीपसे दीपांतर का दृष्टांत नहीं बनता क्योंकि दीप दीपांतर में निमित्त है कुछ उपादान नहीं है और यहां पर उपादानका विचार है पूर्वोक्त श्रुति युक्तियों से सर्व का मूल कारण ब्रह्मही सिद्धहुआ (प्रश्न) ब्रह्मकी उत्पत्ति नहीं बनती यह तो हमने माना परंतु जो पूर्व ज्ञानी के जन्मका अभाव कथन किया है सो नहीं बनता क्योंकि इतिहास पुराणादिकोंमें ब्रह्मज्ञानियोंकीभी उत्पत्तिसुनीहै वशिष्ठजी ब्रह्माके मानस पुत्रका उर्वशीसे जन्म सुना है भृगु आदिकोंकी वारुणेय यज्ञ में उत्पत्ति सुनी है और सनत्कुमारोंकी भी अपनेही वर से उत्पत्ति सुनीहै इसी प्रकार नारदादिकोंकीभी उत्पत्ति सुनीहै इससे यह सिद्ध होताहै जो ब्रह्म ज्ञानी का भी जन्म होताहै (उत्तर) जैसे सूर्य भगवान् सहस्रयुग पर्यंत जगत् के अधिकारकोकर के पश्चात् उत्पत्ति नाशसे रहित विदेह कैवलको प्राप्त होतेहैं तैसे वेद लोककी व्यवस्था करनेमें अधिकारको प्राप्तभये जो वशिष्ठादिकहैं यावत् पर्यंत अधिकारताका प्रापक प्रारब्धकर्म है तावत् पर्यंत जीवन होकर वशिष्ठादिकारकों की स्थिति होती है और जब प्रारब्धकर्म क्षय होता है तब प्रतिबंधके अभाव होने से विदेह कैवलकोप्राप्तहोते हैं। तथाच श्रुतिः(अथततऊर्ध्वं उदेत्य नैवोदेतास्तमेतेकलएवमध्येस्थातेति) अथ प्रारब्ध क्षय के अनंतर। ततःपश्चात्। ऊर्ध्वं केवल ब्रह्म स्वरूप होकर। उदेत्य। देहको त्यागकर एकल अद्वितीय होताहै

नैवोदोदेतास्तमेत्तन उत्पन्न होवैहै न अस्त होवै है और मध्यमेंही उदासीन रूपहोकर स्थित होताहै (तस्यताव देवचिरंयावन्नविमोक्षेऽथसंपत्स्ये) तिस विद्वान्के तावत् काल पर्यंतही मोक्ष में विलंब है यावत् पर्यंत प्रारब्ध कर्म भोग्य नहीं छूटै है अथप्रारब्ध भोग के अनंतर ब्रह्मसे अभेद को प्राप्त होता है और वशिष्ठादिक भी परमेश्वर करके तिस तिस अधिकार में नियुक्त होकर सम्यक् ज्ञानकी प्राप्तिहोने परभी यावत्पर्यंत अधिकार है तावत्पर्यंत स्थित होते हैं मनुष्यों से तिनकी प्रारब्ध लंभी है अर्थात् कल्पपर्यंत है और जन्मांतर होने पर भी तिनको स्वरूप ज्ञान की विस्मृति नहीं होती है और मनुष्यों की प्रारब्ध एकही जन्मकी होती है और जन्मांतर में मनुष्यों को पूर्व जन्मकी स्मृति नहीं होती और पूर्वजन्मके नामादिक भी नहीं होते और वशिष्ठादिक कारकों के पूर्वजन्मकेही नामबने रहते हैं और स्वतंत्रता और निरभिमानताभी तिनको बनी रहती है और स्वरूपज्ञान भी बनारहता है इसलिये कोई दोष नहीं है (प्रश्न) इन्द्रादि देवतोंका कर्म में अधिकार न होने से ब्रह्मविद्या में भी इनका अधिकार नहीं बनता क्योंकि (कर्मणैवहि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः) कर्मों करकेही जनकादिक सम्यक् सिद्धिको प्राप्त होते भये इस स्मृति प्रमाण से (उत्तर) यद्यपि इन्द्रादि देवतों और देव ऋषियों का कर्म में अधिकार नहीं है क्योंकि देवतांतर और ऋष्यंतरका अभाव होने से तथापि ब्रह्मविद्या में तिनका अधिकार श्रुति प्रमाण

से सिद्धहै (एकशतंहवैवर्षाणिप्रजापतौ इन्द्रोब्रह्मचर्यमु-
वासइति) एकसौ वर्ष प्रजापति ब्रह्माके समीप इन्द्र ब्र-
ह्मचर्यको धारण करके निवास करता भया ब्रह्मविद्या
के अर्थ (भृगुर्वैवारुणिर्वरुणंपितरमुपससार) वरुण
का पुत्र जो भृगुहै सो अपने पिता को प्राप्तहोता भया
ब्रह्मविद्या के निमित्त इन श्रुति प्रमाणों से देवता और
देव ऋषियों का भी ब्रह्मविद्या में अधिकार है (प्रश्न)
यदि इन्द्रादि देवतों को कर्मकी अंगता है तब इन्द्रादि
भी शरीर वाले होवेंगे जब कि शरीरवाले हुये तब एक
काल में अनेक यज्ञों में कैसे पहुँच सकेंगे किंतु नहीं
पहुँचसकेंगे और यदिअशरीरिमानोगे तबअशरीरी दे-
वतोंका ब्रह्मविद्यामें अधिकारबनेनहीं तबदोषबनाहीरहा
(उत्तर) विरोधनहीं है क्योंकि एककालमें जैसे योगी
अपने योगप्रभावसे अनेक शरीरोंको धारण करके भू-
मिपर विचरताहै तैसे इन्द्रादि देवता भी अनेकशरीरों
को धारण करके एक कालमेंही अनेक यज्ञों में प्राप्त
होजातेहैं श्रुतियों ने अनेकरूपता देवतों की दिखाई
भी है इसलिये देवतोंकी शरीरवतामें भी विरोध नहीं
और इनको विद्याकी अधिकारता भी सिद्ध है (प्रश्न)
देवतोंका भी विद्यामें अधिकारत्व मान लिया परंतु पूर्व
कहा जो ब्रह्मका तटस्थ लक्षण वह यथार्थ है अथवा
अयथार्थ है यदि यथार्थहै तब द्वैतसिद्ध भया एक का-
रण ब्रह्म हुआ दूसरा कार्य प्रपंच हुआ और यदि
अयथार्थ है तब सृष्टि प्रतिपादक श्रुति वाक्यों को अ-
प्रमाणता उत्पत्ति हुई क्योंकि बिना उपादान कारण के

कार्य की स्थिति होती नहीं (उत्तर) जैसे वृक्षकी शाखा के अग्र में चन्द्रमा लगा नहीं है तदपि जब किसी ने पूछा चन्द्रमा कहांहै तब शाखाके अग्र में कल्पना करके कहा जाता है तैसेही यह तटस्थ लक्षण है जो तटस्थ होकर लखावे वही तटस्थ होताहै जैसे शाखाने विनाही सम्बन्ध से चन्द्रमा को लखादिया है तैसे मिथ्या भूत प्रपंच का ब्रह्म के साथ कोईसम्बन्ध नहींहै तदपि ब्रह्म बोधकेलिये जगत् जनकत्वकी कल्पनाकरके ब्रह्मकातटस्थ लक्षण कहाहै (प्रश्न) वेदांत मत में सृष्टि प्रतिपादक वाक्यों का परस्पर विरोध आताहै क्योंकि (आत्मनआकाशःसंभूतः) इसश्रुतिने प्रथम आत्मासे आकाश की उत्पत्ति कही है (तत्तेजोऽसृजत) यह श्रुति प्रथम तेज की उत्पत्ति विधान करतीहै और कहीं (सप्राणमसृजतप्राणाच्छ्रद्धां) सो परमात्मा प्राणोंको रचताभया प्राणोंसे श्रद्धाको यह विधान करती है और कहीं विनाहीं क्रमसे (सइमाल्लोकानसृजतांभोमरीचीर्मरमाप इति) सो परमात्मा इनलोकोंको उत्पन्नकरताभया स्वर्ग लोक अंतरिक्ष लोक मर्त्यलोक पाताललोक को यह श्रुति विनाहीं क्रमके सृष्टि प्रतिपादन करतीहै इसरीति से परस्पर विरुद्ध प्रतिपादन करने से वेदांत वाक्यों करके उक्तब्रह्मको जगत्की कारणतानहीं बननी (उत्तर) यद्यपि प्रति वेदांत सृज्यमान आकाशादि सृष्टि में विरोध है तथापि ब्रह्मको आकाशादिकों की कारणता में विरोध नहीं है जैसे एक वेदांत में सर्वेश्वर सर्वज्ञएक अद्वितीयको कारणता कही है तैसेही दूसरे वेदांतों मे

भी एक सर्वज्ञ सर्वेश्वर अद्वितीयकोही कारणता कहीहै जैसे बहुस्यांप्रजायेय) इस श्रुति ने एकही का अनेक रूपकरके आविरभाव दिखाया है तैसेही (इदंसर्वमसृत यदिदंकिंचेति) इसश्रुति नेभी एकहीसे संपूर्ण सृष्टिका निर्देश करके सृष्टिसे पूर्व अद्वितीयकोही दिखाया है अर्थात् अद्वैतकोही बोधन किया है और स्वप्नसृष्टिको दिनदिन प्रति अन्यथा होनेसे भी द्रष्टामें अन्यथात्व नहीं होता सोहं प्रतिभिज्ञा होनेसे इसलिये सृष्टिवाक्यों का कुछ सृष्टिकी उत्पत्ति में तात्पर्य नहीं है किंतु अद्वितीय ब्रह्मके बोधन करनेमें तात्पर्य है (प्रश्न) तबफिर किसलिये श्रुतियें अन्यथा अन्यथा विरोधको कहतीहैं (उत्तर) केवल सृष्टि प्रतिपादन करने में श्रुतियों का तात्पर्य नहीं है इसलिये अतात्पर्य अर्थ में जो विरोधहै सो दोषका हेतु नहीं है और सृष्टि आदिकों का जो प्रतिपादन है सो केवल ब्रह्म बोधके लिये है तथाच श्रुतिः (अन्नेनसौम्यंशुंगेनापोमूलमन्विच्छाद्भिः सोमशुंगेन तेजोमूलमन्विच्छत्तेजसासौम्यशुंगेनसन्मूलमन्विच्छेति)हे सौम्य अन्न रूप कार्य करके जलरूप कारण का अन्वेषण कर और जलरूप कार्यका तेज मूलको अन्वेषणकर और तेजरूप कार्य करके सत्यरूप ब्रह्म को जान और (यथासौम्येनमृत्पिंडेन सर्वंमृन्मयंविज्ञातंस्यात्) मृदादि दृष्टांत करके भी श्रुतिने कारण के साथ कार्य का अभेद बोधन किया है इसलिये ये श्रुतियों का परस्पर विरोध नहीं आता और यदि सृष्टि को न निरूपण करके सृष्टिका ब्रह्म में निषेधकिया जावे तब

ब्रह्म में निषेध किया जो प्रपंचहै सो ब्रह्म से अन्यत्र कहीं स्थितहोगा ऐसी शंकाहोवैगी जैसे बायु में जब रूपका निषेध किया तब बायुसे अन्यत्र तिसकी स्थिति की कल्पना होती है तैसे प्रपंचकी भी कल्पनाहोगी तव संशय से रहित अद्वैत की सिद्धि नहीं होवैगी॥ इसलिये सृष्टि वाक्यों से ब्रह्ममें उपादान कारणता का ज्ञानजबहुआ तब उपादानसे बिना कार्यकी कहीं स्थि-तिहोती नहीं तब अन्यत्र स्थितिकी शंकाभी नहीं हो-गी क्योंकि ब्रह्मही सृष्टिका उपादान कारण है और ति सी में सृष्टिकी स्थिति है पुनः नेति नेति का क्यों करके ब्रह्म में सृष्टिको असत्व प्रतिपादन करने से प्रपंचको तुच्छता सिद्धहुई तब फिर संपूर्ण भ्रम से रहित अद्वि-तीय सच्चिदानन्द ब्रह्मकीसिद्धि होतीहै और परंपरा क-रके सृष्टि वाक्योंकाभी अद्वितीय ब्रह्मके बोधनमें तात्पर्य है (प्रश्न ॥ द्वासुपर्णासयुजासखाया समानंवृक्षंपरिषस्वं जातेतयोरन्यः पिप्पलंस्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्योऽभिचाकशीति १)एकबुद्धिरूपी वृक्षमें दो पक्षी हैं और दोनों समान हैं और परस्पर सखा हैं दोनों में से एक कर्मोंके फल को भोक्ताहै और दूसरा शुद्धअसंग है और भोग ने वाले को प्रकाशता है दोनों में से भोग ने वाला जीव प्रतीत होताहै और दूसरा परमात्मा प्रतीत होता है इस वेद वाक्यसे ऐक्यता नहीं सिद्ध होती किंतु भेदही सिद्ध होताहै और वेद में कर्म उपासना बहुत प्रकारसे कही हैं सो यदि अभेद मानोंगे तब सब निष्फल होजावैगी और सृष्टि बाक्यों का संशयसे रहित अद्वितीय ब्रह्मके

बोधन में तात्पर्य नहीं बनता है क्योंकि (यएषोंतरादि त्येहिरण्मयःपुरुषः) जो यह आदित्य मंडलके अंतर सुवर्णमय पुरुषहै तिसको तुम ब्रह्म रूपकरके उपासना करो इत्यादि वाक्यों का सगुण ब्रह्मकी उपासना में तात्पर्य है (उत्तर) दृष्टांतसे उत्तरको कहते हैं जैसे एक आकाशमें चारभेद हैं एक घटाकाश है दूसरा जलाकाश है तीसरा मेघाकाश है चौथा महाकाश है तैसे एकही चेतन के चारभेदहैं एक कूटस्थ है एक जीव है एक ईश्वर है एक ब्रह्म है प्रथम घटाकाशको दिखातेहैं जलसे भरे हुये घटको आकाश जितना अवकाश देवे उतने आकाशका नाम घटाकाश है और जलसे भरा जो घट और तिस में नक्षत्रों के सहित जो आकाशका प्रतिबिंब वह आकाशका प्रतिबिंब और आकाश दोनों का नाम जलाकाश है (प्रश्न) आकाशका प्रतिबिंब नहीं बनता क्योंकि रूपवाले पदार्थ का प्रतिबिंबहोताहै आकाशरूपसे रहित है तिसका प्रतिबिंब नहीं बनता (उत्तर) यदि आकाशका जलमें प्रतिबिंब न होवै तब थोड़े से जलमें अतिगहरा पना प्रतीत न होनाचाहिये और प्रतीत होता है इसवास्ते आकाशका प्रतिबिंब बनताहै और यहभी नियमनहींहै जो रूपवालेका प्रतिबिंब पड़ता है रूप रहितका नहीं पड़ता किन्तु रूप रहितकाभी प्रतिबिंब पड़ता है देखिये रूप रहित जो शब्द तिसका प्रतिध्वनि रूप प्रतिबिंबपड़ता है जलाकाशका निरूपण करदिया अब मेघाकाशका निरूपण करते हैं मेघोंको आकाश जितना अवकाशदेताहै और

मेघके जलमें जो आकाश का प्रतिबिंब है दोनोंकानाम मेघाकाशहै (प्रश्न) मेघ तो आकाशमेंहैं तिनमें जल और आकाश बिना देखे कैसे जानेजावें (उत्तर) यद्यपि मेघमें जलका और प्रतिबिंब का प्रत्यक्षहोवैनहीं तदपि जो मेघों में जल न होवै तो मेघोंसे जलनबरसे और जो मेघोंमेंजलहै सो आकाशके प्रतिबिंबके सहित है क्योंकि जहां जलहोता है तहां आकाशके प्रतिबिंब के सहितहीहोताहै इसरीतिसे मेघमें जल और आकाशके प्रतिबिंब का अनुमान होताहै॥ अबमहाकाशको दिखातेहैं जो बाहिर भीतरसर्वत्र एकरस व्यापकआकाशहै तिसकानाम महाआकाश है आकाशके चार भेद निरूपण करदिये अब चेतनके चार भेद निरूपण करतेहैं बुद्धि अथवा व्यष्टि अज्ञानका जो अधिष्ठानचेतनहै तिसीकी कूटस्थ संज्ञाहै और जिस पक्ष में बुद्धिसहित चेतनकी जीवसंज्ञाहैं तिसपक्ष में बुद्धिके सहित अधिष्ठान चेतनका नाम जीव है और जिसपक्ष में व्यष्टि अज्ञान सहित चेतनकी जीव संज्ञाहै तिसपक्षमें व्यष्टि अज्ञानका जो अधिष्टानहै तिसकी कूटस्थसंज्ञाहै इस स्थल में यह सिद्धांतहै जीवपनेका जोविशेषणहै तिसके अधिष्ठानकानाम कूटस्थहै सोकूटस्थ नित्यहै उत्पत्तिसे रहितहै ब्रह्मसे भिन्न जैसे चिदाभास उत्पन्नहोताहै तैसे उत्पन्ननहींहोता किन्तु ब्रह्मरूपही है जैसे घटाकाशमहाकाशसे भिन्ननहींहै किंतु महाकाशरूपही है तैसेकूटस्थहै और सोई आत्मपदका लक्ष्यार्थ है सो इसी का नाम प्रत्यक् है और इसी को जीव साक्षी भी कहा है अब

जीव का निरूपण करतेहैं अज्ञान के अंश का नाम व्यष्टि अज्ञान है और संपूर्ण अज्ञान का नाम समष्टि अज्ञानहै तिस अज्ञानके अंश में जो चेतनका आभास और अज्ञान के अंशका अधिष्ठान जो कूटस्थ दोनों की मिलकर जीव संज्ञा है इसीवास्ते सुषुप्ति में भी प्राज्ञ का अभाव नहीं होता क्योंकि सुषुप्ति में भी अज्ञान रहताहै और जो सुषुप्ति में चेतन के प्रतिबिंबसहित अज्ञान का अंश है सोई बुद्धिरूपताको प्राप्त होताहै और चेतन का प्रतिबिंब भी साथही रहताहै इसलिये चिदाभास सहित बुद्धि में पुण्य पापादि रूप संसार प्रतीत होता है इस अभिप्रायको लेकर किसी शास्त्र में बुद्धि को भी जीवपने की उपाधि कहाहै और विचार दृष्टि से जीवपने का उपाधि अज्ञान है अब ईश्वरका निरूपण करते हैं माया में जो चेतनका आभास और अधिष्ठान चेतन दोनों का नाम ईश्वरहै सो ईश्वर मे-घाकाश के समान है और सर्व के अंतर प्रेरणाकरने से तिसकी अंतर्यामी संज्ञाहै नित्यमुक्त अपनेस्वरूपका आवरण तिसको नहीं है सर्वज्ञ है रजोगुण तमोगुणको दबाकर जो सत्वगुण माया में है तिस शुद्ध सत्वगुण वाली मायामें जो चेतन का आभास है तिसको अपने स्वरूप में अथवा और पदार्थ में आवरण नहीं होताहै इसलिये नित्यमुक्त है और सर्वज्ञ है और अधिष्ठान चेतन जोहै जीव ईश्वर दोनोंमें सो बंधमोक्षसे रहितहै आकाशवत् एकरस है किंतु आभासअंशमें बंधमोक्ष है अब ब्रह्मका स्वरूप निरूपण करते हैं ब्रह्मांडके अं-

तर बाहिर जो आकाशकी नाईं व्यापक चेतन है तिस का नाम ब्रह्म है और सर्वका आत्माहै इसवास्ते किसी से दूर निकट नहीं है चारप्रकार का चेतन कहा तिसमें जीवके स्वरूप में जो मिथ्या आभासअंशहै सोई पुण्य पापका करताहै और तिनके फलको भोगैहै और कूट-स्थ जो चेतनहै सो कल्याण रूपहै पूर्व जो तुमने शंका करी है जो बुद्धिरूपी वृक्षमें दो पक्षी हैं एक परमात्माहै एकजीवहै सो परमात्मा और जीवका ग्रहण नहींकरना किंतु कूटस्थ और आभासका ग्रहणकरना कूटस्थस्व प्रकाशैहै और आभास भोगैहै और जीवके स्वरूप में जो चेतनकीछायाहै वहकर्मकरैहै औरजो ईश्वरका आ-भास अंशहै सो तिसको फल देवै है और जीव में जो चेतन अंश है तिसमें घटाकाशवत् कर्म और कर्म के फलका संयोग नहीं है और ईश्वर में जो चेतन अंश है तिस में फलदेने की योग्यता नहीं है महाकाशकी नाईं और चेतनदोनों में असंग भेद शून्यहै इसवास्ते कोई दोषनहीं आवै है और उपासना प्रकरणमें पठित जो सगुण वाक्यहैं सो उपासना विधिको अपेक्षित जो गुण हैं तिन गुणोंके आरोप्यमें तिनका तात्पर्य है सगुण वाक्यों का क्योंकि गुणारोपसे विना उपासना बनै नहीं (योषिद्वाव गौतमाग्नि)हे गौतमयोषिद् जो स्त्री है सो अग्नि है जैसे योषिद् अग्नि नहीं होसक्ती किंतु अग्नि के गुणोंका तिसमें आरोप्यकरके योषिद्की अग्निरूप करके उपासना कही है तैसे उपासना वाक्यों का गुणा रोपमें तात्पर्यहै कुछ वास्तवसे सगुणतामें तात्पर्य नहीं

है और निर्गुण प्रकरणमें पठित जो सगुण वाक्य हैं सो चित्तकी एकाग्रता द्वारा अद्वितीय ब्रह्मको बोधकहैं अब अद्वितीय ब्रह्मके बोधक श्रुति वाक्योंको लिखते हैं (दिव्योह्यमूर्तःपुरुषःसवाह्यःभ्यंतरोह्यजः। अप्राणोह्यमनाःशुभ्रोह्यक्षरात्परतःपरः १) वह ब्रह्म प्रकाशात्मकहै अमृत है और बाहर अंतर व्यापक उत्पत्ति नाशसे रहित है प्राणोंसे रहितहै मनसे रहित है शुद्ध है माया से भी परे है १ (यदेवेहतदमुत्रयदमुत्रतदन्विह। मृत्योःसमृत्युमाप्नोतियइहनानेवपश्यति २) जो चेतनरूप ब्रह्म इस जीवकी उपाधि में है सोई ब्रह्म चेतन ईश्वर की उपाधि में भी है और जो ईश्वरकी उपाधिमेंहै सोई जीवकी उपाधिमेंहैजो इसमें भेददृष्टिकोकरताहैसो मृत्यु सेभी मृत्युको प्राप्तहोताहै२इत्यादि अनेक श्रुतिभेदवादि की निंदामें प्रमाणहै और स्मृतिकोभीदिखातेहैं(वरंवंध्या महीलोकेवरंव्याघ्रप्रसूरपिताहशीमास्तुजननीयासूतेभेदवादिनम् १)इस पृथिवी तल में माता यदि वंध्यारह जावे सो श्रेष्ठ है और यदि व्याघ्र को उत्पन्न करै तदपि श्रेष्ठ है परन्तु भेदवादिको उत्पन्न करने वाली माता श्रेष्ठ नहीं है १ इत्यादि अनेक स्मृति भेद वादिकी निंदा करने में प्रमाण है हे शिष्य इनपूर्वोक्त युक्तियों से भेद को त्यागकर अभेद को आश्रयण करो और विचार करके पंच कोशों से भिन्न आत्मा को निश्चय करो (प्रश्न) जिस विचार करके पंच कोशों से भिन्न आत्मा को निश्चयकरैं सो विचार कैसा है (उत्तर) तिस विचार को सुनो अन्नमय कोश जो स्थूल शरीर

है सो आत्मा नहीं है क्योंकि यह स्थूल शरीर भूतों का कार्य है जैसे घटभूतों का कार्य है आत्मा नहीं है और घटका द्रष्टाघट से भिन्न है तैसे देह का द्रष्टा देह से भिन्न है और जैसे काष्ठों का प्रकाशक जो अग्नि है सो काष्ठों से भिन्न है और काष्ठ अग्नि करके प्रकाश्य है तैसे देह का प्रकाशक जो आत्मा सो देहसे भिन्नहै देह तिस करके प्रकाश्यहै और जैसे रथकी चेष्टा सारथी के आधीन है बिनासारथी के रथ की चेष्टा नहीं बनती तैसे देहकी चेष्टा चेतनके आधीनहै विना चेतन के देह चेष्टा नहीं करसक्ती यदि बिनाचेतनके चेष्टा होती तब मृतक शरीर में भी होनी चाहिये इसलिये चेतन के आधीन शरीर की चेष्टा है सो चैतन्य स्वरूप आत्मा देह से भिन्न है इस प्रकार देह में आत्मबुद्धिका त्यागकर पुनः प्राणों में आत्मबुद्धि का त्यागकरे क्योंकि प्राण भी भूतों का कार्य हैं और जड़हैं इसलिये प्राणभी आत्मा नहीं हैं यद्यपि सुषुप्ति में प्राणचलते भी रहते हैं तथापि चौरादिकों को नहीं जानसक्ते हैं केवल स्पर्शवालेही होते हैं जैसे पंखेकी वायु केवल स्पर्श वाली है अन्य परको नहीं जानतीहै तैसे यह प्राणभी हैं (नप्राणेननापानेन मर्त्यो जीवतिकश्चनाइतरेणतु जीवंति यस्मिन्नेतावुपाश्रितौ १) कोई मनुष्य भी प्राणकरके या अपान करके नहीं जीता है इतरकरके सब जीतेहैं जिसमें यह प्राणअपान आश्रित हैं इस श्रुति प्रमाणसे प्राणों को भी अनात्मता सिद्ध है इसवास्ते प्राणों में आत्मदृष्टिका त्यागकरके

प्राणों से भिन्न आत्माको निश्चयकरो और वागादि इ-
न्द्रिय भी आत्मा नहीं हैं यह वृत्तिज्ञानके करणहैं जैसे
छिदि क्रिया के प्रति कुठार करण होता है इसवास्ते जि
सकी सन्निधिसे यह वागादि अपने व्यापारको करते
हैं तिसी को आत्मा निश्चय कर और प्राणमय कोश
में आत्मभावना का त्यागकरके और प्राणमय कोश
का साक्षि आत्मा को जानकर पुनः मनोमय कोश में
भी आत्म भावना का त्यागकर क्योंकि मनभी कुठार-
वत् करण है इसलिये मन आत्मा नहीं होसका और
चक्षुरादिक भी भूतोंका कार्य हैं इसवास्ते यहभी आत्मा
नहीं होसक्ते हैं जैसे दीपक करके रूपदिखाई देताहैतैसे
चक्षुकरकेभीरूप दिखाईदेताहै अंधेको रूपनहीं दिखाई
देता इसलिये रूपादिकों के प्रत्यक्ष में प्रकाश के सहित
चक्षुको कारणता मानी है और चक्षुरूपज्ञानमें करणहै
किंतु आत्मा नहीं है इसी प्रकार श्रोत्रादिक भी आत्मा
नहीं होसक्ते हैं क्योंकि मेरा श्रोत्र मेरी त्वचा मेरा च-
क्षुइत्यादि मदीय ज्ञानका विषयहोने से और जो विषय
होता है सो जड़होता है जैसे घटमदीय ज्ञान का वि-
षय है वह जड़है तैसे चक्षुरादिक भी मदीय ज्ञानका
विषय हैं इसवास्ते यह भी सबजड़ हैं आत्मा इनसबों
से भिन्न है जो संपूर्ण देह इन्द्रिय आदिकों का जानने
वालाहै वहीआत्माहै श्रोत्रादिकोंमें आत्म बुद्धिका त्या-
गकरके पुनः मनोमय कोश में भी आत्म बुद्धिका त्या
गकरै पुनः विज्ञान मेंभी आत्मबुद्धिका त्यागकरैक्योंकि
मन बुद्धि ये भी करणहैं आत्मा नहीं हैं (प्रश्न) कोश

किसकोकहे हैं (उत्तर) कोशनाम आवरकका है जिसको म्यानभी कहतेहैं जैसे खगम्यानमें रहताहै तैसे आत्मा पांच कोशोंके अंतर रहता है अन्नमयकोशस्थूल शरीर का नामहै इसकेअंतर प्राणमयकोशहै और प्राणमयके अंतर मनोमय औरमनोमयके अंतरविज्ञानमय विज्ञान मयकेअंतर स्थित आत्माहै संपूर्ण इन्द्रिय और प्राणादिकों को प्रकाशताहै अपनीसत्ता स्फूरती देताहै और विज्ञान शब्दकरके श्रुतिने कर्ता कथन कियाहै (विज्ञानं यज्ञंतनुते कर्माणितनुतेपिच) इसतैत्तरीय श्रुतिमें विज्ञान नाम बुद्धिका कहाहै बुद्धिही यज्ञके विस्तारको करती है और कर्मोंका भी विस्तार करतीहै ॥ विज्ञानवान्हि श्रद्धादिपूर्वकं यज्ञदानादिकंकरोति) बुद्धिवाला पुरुषही श्रद्धादि पूर्वक यज्ञदानादिकों को करता है विज्ञान के कर्तृत्व में इत्यादि श्रुति प्रमाण है सांखी का (प्रश्न) केवल बुद्धिही करता है बुद्धि वसिष्ट जीवको कर्तापना नहीं बनता क्योंकि श्रुतियों में जीवको असंग कहा है (असंगोयंपुरुषः) इस श्रुतिसे और यदि बुद्धिसेभिन्न जीवको करता मानोगे तब कर्त्ता जो होताहै सो स्वतंत्र होताहै तब नियम करके अपने प्रिय और हितकोही संपादन करैगा किंतु तिससे विपरीत अप्रियको नहीं संपादन करैगा और विपरीतको भी संपादन करताहै इसलिये यह जीवकर्त्ता नहीं है किंतु बुद्धिकर्त्ता है (उत्तर) यदि कारक निरपेक्ष कर्त्ताको स्वतंत्रता मानोगे तब ईश्वरकोभी स्वतंत्रता नहीं सिद्ध होवैगी क्योंकि ईश्वर भी प्राणियोंके कर्म सापेक्षही कर्त्ताहै और यदि जीवको

कर्त्ता नहीं मानोगे तब विधि शास्त्रभी अर्थवाला नहीं होवैगा क्योंकि विधि करके प्रेरेहुये जीवको यह बोध होताहै जो मेरेको यह कर्तव्यहै सो कर्तृता चेतनकोही बनतीहै जड़ बुद्धिको पूर्वोक्त कर्तृता नहींबनती है और यदि बुद्धिकोही कर्तामानोगे तब शक्तिका भी विपर्यय होजावैगा अर्थात् बुद्धिनिष्ठ करण शक्ति दूरहोजावैगी और कर्तृशक्ति प्राप्तहोजावैगी और बुद्धिकरणहै उपलब्धिमें और जो अहंबुद्धि करके गम्य है सोई कर्ताहै सो जीवही अहंबुद्धिकरके गम्यहै और लोकमेंभी कहते हैं इसकाल में हमारी बुद्धि स्थिरनहीं है इसलिये अब हम इसकामको नहीं करैंगे इस प्रतीति सेभी बुद्धि से भिन्न जीवकरताहै किंतु बुद्धिकाभी साक्षीहै (आत्मेन्द्रियमनोयुक्तंभोक्तेत्याहुः) आत्मा इन्द्रियों और मनकरके युक्त हुवा हुवा भोक्ताकहाहै इस श्रुति प्रमाण से भी जीवकर्ताहै और जो श्रुति आत्माको असंग प्रतिपादनकरतीहै सो उपाधिरहित आत्माको असंग कहती है और उपाधि वसिष्टको कर्तृताका निषेधभी नहींकरती इसहेतु से भी उपाधि वसिष्टको कर्तृताबनतीहै और जो उपनिषद् में आत्मावारेद्रष्टव्यःश्रोतव्यो मंतव्यो निदिध्यासतव्यः सोऽन्वेष्टतव्यः सजिज्ञासितव्यः कहा है यदि आत्माको कर्ता नहीं मानोगे तब यह श्रुतिउक्तद्रष्टव्यादि उपदेशभी नहीं बनेगा इसलिये जीवात्माही करताहै केवल बुद्धि कर्ता नहीं है (मीमांसक का प्रश्न) आत्मा को सोपाधिक कर्तृत्व नहीं है किन्तु स्वाभाविक कर्तृत्व है क्योंकि इसमेंकोई बाधक नहींहै ॥ उत्तर ॥ जैसेअग्निमें

स्वाभाविक उष्णताका दूरीकरण नहीं होसक्ता तैसे
आत्मामैंभी स्वाभाविक कर्तृताका दूरीकरण नहीं होगा
तब जो श्रुतीने नित्यशुद्धबुद्ध प्रतिपादन करने से मोक्ष
की सिद्धि कथनकरीहै सोनहीं बनैगी इसलिये उपाधिके
धर्मोंका अध्यास करके आत्माको कर्तृत्व है स्वाभाविक
नहींहै(ध्यायतीवलेलायतीव) इस श्रुति प्रमाणसे और
विवेकी पुरुषोंकरके परमात्मासे अन्य जीव नामक कर्ता
को विद्यमानताभी स्वीकारनहीं है (नान्योतोऽस्तिद्रष्टा)
इस श्रुति प्रमाण से इसवास्ते अविद्योपहितमेंही कर्तृ
त्वादि बनतेहैं शुद्धमें नहीं बनते (यत्रहिद्वैतमिवभवति
तदितरइतरंपश्यति) इसश्रुतिने अविद्या अवस्था मेंही
कर्तृत्व भोक्तृत्व बोधनकियाहै (यत्रत्वस्यसर्वात्मैवाभूतत
त्केनकंपश्येत यहश्रुति विद्यावस्था में कर्तृत्वभोक्तृत्वको
वारणकरतीहै और जैसे स्फटिकमें कुसुमादि उपाधिकरके
रक्तताप्रतीतिहोतीहै तैसेबुद्ध्यादि उपाधिकरके आत्मामें
कर्तृत्वप्रतीतिहोतेहैंइनपूर्वोक्तप्रमाणोंसेजविकोहीकर्तृत्व
सिद्धहुवाअबप्रकरणकोंकहतेहैंहेशिष्यअन्नमयादिकोंका
भोक्तावुद्धिहैयद्यपिबुद्धिवसिष्टमें कर्तृत्वभोक्तृत्वहैं तथापि
वास्तवस्व रूपआत्मामेंतो नहीं इसलियेतुम कर्ताभोक्ता
नहींहो हे शिष्य विज्ञान मय कोशको अनात्मा जानकर
और तिसमेंभी आत्मत्व बुद्धिका त्यागकर पुनः आनंद
मयकोश में भी आत्मत्व बुद्धिका त्यागकरो क्योंकि यह
आनंदमयकोशभी आत्मानहींहै तैत्तरीय श्रुति (तस्य
प्रियएव शिरोमोदोदक्षिणः पक्षः प्रमोद उत्तरः पक्ष आ-
नंद आत्मा ब्रह्मपुच्छं प्रतिष्ठेति १ इष्ट दर्शन जन्य जो

सुखहै सो तिस आनंद मय कोशका शिरहै और इष्टव
स्तुके लाभ जन्यजोसुखहै सो तिसका नाम मोदहै वह
तिसका दक्षिण पक्षहै और इष्टवस्तु के भोगनेसे जन्य
जो सुखहै तिसका नाम प्रमोद है वह तिसका उत्तर
पक्षहै और सुखसामान्यका नाम आनंदहै वह तिसदेह
का मध्य भाग है और प्रतिष्ठानाम अधिष्ठान का है
सो ब्रह्म तिसका अधिष्ठान है जैसे पूर्वकहे जो अन्न म-
यादिकोश आत्मा नहींहोसक्तेहैंतैसे यहभी आत्मा नहीं
बनै है हे शिष्य पंचकोशों के तुम द्रष्टा हो कोशरूप
तुम नहीं हो और न तुम मन हो न इन्द्रिय हो न जा-
ग्रदादि अवस्था वाले हो जो तीनोंअवस्था का साक्षी
है सो तुमहींहो और चैतन्यस्वरूपहो इसमें संशयनहीं
है अब इसचतुर्थ किरणके बिषयको संक्षेपसे कहतेहैं ॥

चौ० किरण चतुर्थ में जोही भाखा ॥ करूं निरूपण स-
हितअभिलाखा १ सृष्टिक्रमकाकियोबखान ॥ जिहिजानै
उपजै सबज्ञान २ इन्द्रिय अरु पुनि विषय पछानो ॥
लक्षण तिनके भिन्नकरजानों ३ प्राणादिक वायूहैं जेते ॥
क्रमसहित सकल कहेतेते ४ प्रलयचारकाभेदबतायो॥
अकाशोत्पतिअरुपुनिगायो५ घटाकाशकारूपदिखायो॥
महाकाशतसभिन्नबतायो ६ मेघाकाशकाकियोबखान ॥
जलाकाशतस भिन्नकरजान ७ कूटस्थजीवईश्वरपुनिब्र-
ह्म ॥ लक्षण भिन्न भिन्न सहित क्रम ८ पांच कोश में
सबदरसायो ॥ आत्मा तिन ते भिन्न बतायो ९ और
बिचारअसमैंबहुकरयो॥ जिहिदेखतमनद्वोवतहरयो १०
सब में आतम एक बतायो ॥ जिहिजाने बिनदुख

बहुपायो ११ आतम पदका कियो विचार॥ जिहिजा-
ने बिनशै संसार १२ दो० किरण चतुर्थ पूर्णभयो मन
में भयो अनंद। जोविचार इसकोकरै पावै पद निर्द्वंद॥

इतिश्रीसिद्धांतप्रकाशकनामकग्रंथे प्रपंचारोप्यवर्णनं
नाम चतुर्थकिरणः ४॥

चौ०॥ आदिअंत जामेंनहिंहोई॥ सदाअसंगकियोहै
सोई१ जो पूरणव्यापक नितहोई॥ उदय अस्तकोजा-
ने सोई २ अंतर बाहर वर्तहिजोय। ताकोनातिपुनि पुनि
मम होय ३ (प्रश्न) जीव ईश्वर के अंश हैं जैसे वि-
स्फुलिंग अग्निके अंश हैं इसरीतिसे भेदही सिद्धहोता
है अभेदको कैसे कहतेहो (उत्तर) जीवजोहै सो अंश
की नाईं अंश है मुख्य अंश नहीं है क्योंकि निरवयव
की मुख्य अंश बनती नहीं और जो अग्निका तुमने
दृष्टांत दिया है सो नहीं बनता क्योंकि अग्नि सावयव
पदार्थ है विस्फुलिंग तिसका मुखअंशहै (प्रश्न) जैसे
लोक में हस्तपादादिकों में खेद होने से अंगी देवदत्त
में भी खेद होता है तैसे जीव को ईश्वर का अंशहोनेसे
जीवके संसारी दुःखोंकरके ईश्वरकोभी दुःखादिप्राप्तहो-
वेंगे (उत्तर) जैसे जीवसंसारके दुःखोंको अनुभवकरताहै
तैसे ईश्वर नहीं करता क्योंकि जीव जोहै सो अविद्याके
आवेश वशसे देहादि आत्मभावको प्राप्तहोताहै तिसीसे
देहादिकों में अभिमान करके सुख दुःखको अनुभव
करता है और ईश्वरका देहादिकों में अभिमाननहीं है
इसवास्ते ईश्वरको सुख दुःखका अनुभव भी नहीं
होता और जीवको अविद्या भ्रांति निमित्तक सुख दुःख

का अभिमान है परमार्थतासे नहींहै तैसे पुत्र मित्रादि निमित्तक जो दुःख है सो भी पुत्र मित्रादिकों में अभिमान निमित्तकही है और किसी स्थल में बहुतसे पुत्र मित्रादि वाले पुरुष बैठेहैं और तिनही में पुत्र मित्रादिकोंसे रहितभी पुरुष बैठेहैं तहांपर किसी पुरुषने जाकर पुकारा पुत्र मरगया मित्र मरगया तब तिनके मध्य में जिनको पुत्र मित्रादिकों का अभिमान है वही पुत्र मित्रादि निमित्तक दुःखको प्राप्त होते हैं और जिन को अभिमान नहीं है वहनहीं दुःखको प्राप्त होते हैं॥ और यदि जीवोंको सम्यक् विचारसे दुःखादिक नहीं होवै हैं तब नित्यसर्वज्ञ सर्व शक्तिमान जो ईश्वर तिस को तो अर्थसेही दुःखादिकों का संबंध होवैनहीं और जैसे सूर्य चन्द्रके प्रकाशमें अंगुली आदिक उपाधि के हिलने से प्रकाशमें क्रियाकी प्रतीति होवै है और परमार्थतासे प्रकाश अक्रिय है और दृष्टांत जैसे घटादिकों के गमन अगमन करके आकाश में गमन अगमनकी प्रतीति होवै है सुते आकाश अक्रिय है और जैसे जल के कंपनसे प्रतिबिंब में कंपनता प्रतीतिहोवै है बिंब सूर्य में कंपनतादिक नहीं हैं तैसे बुद्धि आदि उपाधि कृत जीव अंशके खेदमान होनेसे ईश्वर अंशी खेदमान होवैनहीं और वास्तवसे तो जीव ईश्वर दोनों को दुःखका संबंधनहीं है क्योंकि अविद्या निमित्तक जीव भावका दूरीकरण करके जीवको ब्रह्मरूप वेदांत प्रतिपादन करै है (एकस्तथासर्वभूतांतरात्मानलिप्यते लोकदुःखेनबाह्य इति) एकही सर्वभूतों के अंतर

आत्मा जो है सो वाह्य दुःख करके लिपाय मानहोवै नहीं इस श्रुति प्रमाणसे (प्रश्न) यदि एकही सर्वभूतों में आत्मा होवै और निरवयव ब्रह्मका मुख अंश नहीं होवै तब (ऋतौभार्यामुपेयात्मित्रमुपसेवेत्) ऋतु में ही भार्याको प्राप्तहोवै और मित्रको सेवन करै इत्यादि विधि वाक्यजोहैं और (गुर्वंगनांनोपगच्छेतशत्रुःपरिहर्तव्यः)गुरुकीस्त्रीको गमननकरै और शत्रु परिहार करने के योग्य है इत्यादि निषेध वाक्य जोहैं यहसबनिरर्थक होजावैंगे और बिना भेदके अंश अंशित्वभी नहीं बनता और विधि निषेध व्यवहारकी सिद्धि भी होवैनहीं (उत्तर) भेदको नरश्रृंगकीनाईं असत्य हमनहीं कहते हैं किंतुमिथ्या कहतेहैं सो देहादि उपाधियों के भेदकरके जीवोंका भी ब्रह्मबोध पर्यंत कल्पित भेद को लेकरविधि निषेध व्यवस्था की सिद्धि होती है क्योंकि सर्वजीवों को देहादि संघात में विपरीत भ्रमज्ञान होरहा है अहं गच्छामि मैं गमन करताहूं मैं बधिरहूं मैं कानाहूं सो इस भ्रमज्ञानकी निवृत्ति सम्यक् आत्मज्ञान से बिना होतीनहीं इसलिये सम्यक् दर्शनसे पूर्वविधि प्रतिषेध वाक्य सार्थक होजावैंगे (प्रश्न) सम्यक् दर्शीके प्रति विधि निषेध अनर्थक होवैंगे (उत्तर) तिसको कृतार्थ होनेसे विधि करके नियोज्यता नहीं बनती क्योंकि ग्रहण त्यागही नियोज्यका नियोक्तव्य होगा आत्मासे अतिरिक्त वस्तुको न देखताहुआ कैसे विधि करके नियोज्य होसक्ता है किंतु कदापि नहीं होसक्ता है (प्रश्न) परलोक है फल जिन कर्मोंका तिन कर्मोंमें जैसे देहसे

भिन्नआत्मदर्शी कर्मों का अधिकार है तैसे देहसे भिन्न आत्मदर्शी ब्रह्मवित्‌काभी कर्मोंमें अधिकार बनजावेगा कर्माधिकारीकी नाईं (उत्तर) कर्मोंको देहके साथअभेद भ्रमबना है जैसे आकाश देहसे भिन्न है तैसे मैं भी इस स्थूल देहसे भिन्नहूं कर्म करके स्वर्गादिकों के फलको मैं भोगूंगा ऐसा भ्रमज्ञान तिसको बना है और ब्रह्मवित्‌को भ्रमज्ञान नहीं है किंतु अकर्त्ता अभोक्ता मैं हूं ऐसा ज्ञान तिसको है इस वास्ते विधि करके नियोज्यता तिसको नहीं बनती (प्रश्न) यदि आत्मवित्‌को नियोज्यता नहीं होगी तब यथेष्ट चेष्टा भी तिसकी होवेगी तब ज्ञानी अज्ञानी का भेदभी नहीं होगा किंतु तुल्यताही होगी (उत्तर) आत्मवित्‌की यथेष्टचेष्टानहीं होसक्ती क्योंकि तिसको अभिमान नहीं है और बिना देहादिकों में राग और अभिमान से यथेष्टचेष्टा नहीं बनती (रसोप्यस्यपरंदृष्ट्वानिवर्ततइति) इस ज्ञानीको आत्म दर्शन होनेसे बिषयों में रागभी निवृत्त होजाता है इस भगवत्‌वाक्य प्रमाणसे भी ज्ञानीको यथेष्टचेष्टा नहीं बनती और दृष्टांत एकही आत्माको विधि निषेध भीबनजातेहैं जैसे अग्निसर्वत्रएकभीहै परंतु श्मशानकी अग्नित्यागनेयोग्यहोवे अन्यनहीं जैसेएकहीपृथ्वीमणि मृतक शरीर में भी तुल्यहै परंतु मणीही ग्रहणके योग्य है मृतक शरीर त्यागनेही योग्य है तैसेही देहादिकोंमें अभिमानवाले को विधि प्रतिषेध हैं अभिमान रहित आत्मवित्‌को नहींहैं (प्रश्न) यदि एकही आत्माहै तब एकजीवको सुख दुःख होनेते सबको सुख दुःख होना

चाहिये (उत्तर) अनेक जलाशयों में एकही सूर्यका प्रतिबिंब पड़ता है परंतु एक जलाशय के प्रतिबिंबके कंपनेसे इतर जलाशयों के प्रतिबिंब नहीं कंपते हैं तैसे एक जीवमें कर्मोंके फलका संबंध होने से इतर जीवों में नहीं होवैहै इसरीतिसे कर्मोंके फलका सांकर्य नहीं होवैहै और हमारे मतमें उपाधि कृतभेदहै वास्तवमें नहीं है और जोसांखीनानाविभु चेतननिर्गुण आत्मामानतेहैंतिनकोकर्मोंके फलका सांकर्य दोष प्राप्त होवैहै क्योंकि सर्व आत्माको चैतन्य स्वरूपहोनेते और विभु होने ते एक शरीर में सर्व आत्माकी सर्व के साथ सन्निधिभी तुल्यहै और प्रधानकी सन्निधिभी सर्व के साथ तुल्यहै और प्रधानकी सन्निधिकोही सुख दुःखकी उत्पत्तिमें कारण तिन्होंनेमानाहै तब एकको सुखदुःख होनेतेसर्वकोसुखदुःख प्राप्तहोनाचाहिये और नैयायिकोंको भी यहही दोषप्राप्त होगा क्योंकि तिनके मतमें भी विभुसुते अचेतन घटादिवत् द्रव्य रूप आत्माहै और अणुमन भी अचेतन है और आत्म द्रव्यों कामन द्रव्यों के साथ संयोग से बुद्धि सुख दुःख इच्छाद्वेष प्रयत्न धर्मअधर्म भावना येनवगुण उत्पन्न होते हैं सो नव गुण जिसे आत्मामें उत्पन्नहोवै हैं तिसीको संसारहोवैहै और जिसमें नहींहोवैं तिसको संसार नहीं होवैहै वह मुक्तहै ये वैशेषिक का मतहै सो तिन के मतमेंभी एकआत्माको सुखदुःख होनेसे सर्वको प्राप्त हुआ चाहिये क्योंकि सुख दुःखादिकोंकी उत्पत्तिमें आत्म मनः संयोगको तिन्होंने कारण मानाहै जिसशरीरमें एक आत्माके साथ मनका संयोग होवैहै तहां तिसी मनका

संयोग और सर्व आत्माके साथभी होवेहै क्योंकि संपूर्ण विभुआत्मा वहांपर भी बनेहै तथाच सुख दुःखका हेतु आत्म मनः संयोग तो सर्वके साथ बनाहै इसलिये एक को सुख दुःख होनेसे सर्वको होवेगा और यदि कहो जिस आत्माके अदृष्टों करके मनका संयोग होताहै सो तिसी आत्माको वह मन संयोग सुख दुःखका हेतु होताहै सोभी नहीं बनता क्योंकि बहुते आत्मोंको आकाशकी नाई सर्वगत होने से और शरीर शरीर के प्रति बाह्य अभ्यंतर सन्निधि तुल्य होने से मनवाणी शरीरों करके भी तुल्यता होनेसे सर्व आत्मामें धर्म अधर्म रूप अदृष्ट उत्पन्न होवेंगे तदपि दोषबनाही रहेगा यदिकहो विभुआत्माको भी अपने शरीर में स्थित होनेते शरीरावच्छिन्न आत्म देशमें मनका संयोग होने ते व्यवस्था बनजावेगी अर्थात् शरीरावच्छिन्न जिस आत्माके प्रदेशमें मनका संयोग होताहै तिसीके अदृष्ट उत्पन्नहोतेहैं और तिसीको सुख दुःखादि भी होवेंगे सो यह भी नहीं बनता क्योंकि शरीरा वच्छिन्न आत्मा के प्रदेश कल्पना नहीं होसक्के क्योंकि निष्प्रदेश आत्मा के काल्पनिक जो जो प्रदेशहैं सोपारमार्थिक कार्यको उत्पन्न नहीं करसक्के हैं और आत्माका सर्व शरीरों में अंतरभाव भी तुल्य है तब किस आत्माका यह शरीर है येभी निर्णय नहीं होसक्का और सर्व आत्माकी विभुत्व में दृष्टांत कोई नहीं बनता यदि कहो जैसे रूप रस गंध एक घटमें रहते हैं तैसे विभु आत्मा भी एक देश रूपी शरीरमें रहजावेंगे सोभी नहीं बनता क्योंकि रूपकेवल तेजमेंही रहता है

रस केवल जलमेंही रहताहै गंध केवल पृथ्वीमेंही रहती है और रूपादिकों का अपने अपने धर्मीकेसाथ अभेद भी है और तेजादिकों का समुदाय रूपहीघट है कुछ एकद्रव्य का कार्य नहींहै पांचभौतिक होनेते और रूपादिकों के लक्षण भी भिन्न भिन्नहैं जोचक्षुःकरके ग्राह्यहो तिसका नाम रूप है जो रसना करके ग्राह्यहो तिनका नाम रसहै जो घ्राण करके ग्राह्यहो तिसका नाम गंध है और आत्माके लक्षणकाभी भेदनहीं है और यदि कहो विशेष पदार्थसे भेद कल्पनाहोजावेगी सोभी नहींबनता क्योंकि प्रथम भेदकल्पना होले तब विशेष कल्पनाहो और जो विशेष कल्पना होले तब भेद कल्पनाहो अन्योन्याश्रय दोष होवैगा और आकाशादिकों का विभुपना भी सिद्धांत में असिद्धहै कार्यहोनेसे (प्रश्न) यदि एकही आत्मा मानोगे तब पारलौकिक देह कोभी पर की देह के तुल्य होने से तब फिर इसलोककी देहकरके अदृष्टोंसे पारलौकिक देह में भोगमानोगे तब दूसरेकी देहमेंभी भोगहोना चाहिये (उत्तर) उपाधिअवच्छिन्न प्रमाताकोही हम कर्तृत्व भोक्तृत्व मानते हैं सो लिंग उपाधि अवच्छिन्न प्रमाता परके देह में नहीं है इसलिये वहां भोगनहीं होवैहै और जो तुमनेकहा है तिस तिस आत्ममनके संयोगकरके ज्ञानादि गुण उत्पन्न होते हैं सोभी नहीं बनता क्योंकि निरवयवोंका संयोग भी नहीं बनता सावयवोंकाही संयोगहोताहै और तुम्हारे मतसे आत्मा मन दोनों निरवयव हैं और जबकि संयोग नहीं होगा तब सुतरां बुद्ध्यादि गुणभी उत्पन्न नहीं होवेंगे

और आत्माको द्रव्यत्व भी नहीं बनता क्योंकि कोई भी द्रव्य निरवयव नहीं होताहै और परमाणुओंका तो पूर्व खण्डन करआये हैं और आकाशकी भी निरवयवता नहींबनती क्योंकि (आत्मनआकाशःसंभूतः) यह श्रुति आकाशकी उत्पत्तिको कथनकरती है जो उत्पत्तिवाला पदार्थ होता है सो सावयव और अनित्य होता है यह व्याप्ति लोक में प्रसिद्ध है यदि आकाश के प्रदेशादिक अवयव नहींमानोगे तब एकही आकाशमें एक पक्षी के उड़नेसे सबआकाश निरुद्धहुआ चाहिये दूसरे पक्षीको उड़ने की जगह नहीं मिलेगी क्योंकि प्रदेश तो तुमने आकाश के मानेनहीं और आकाश एकहीथा सो एक पक्षीकरके निरुद्धहोगया और यदिकहो अनवरुद्ध प्र-देश पक्षी उड़ेगा तब तो आकाश सावयव सिद्धहुआ और यदि आत्माको द्रव्यमानोगे तब अनित्यत्व दोष भी आवेगा इसलिये आत्माकी द्रव्यरूपता नहीं बनती और जो तुमने चेतनताको आत्माका गुणमाना है सोभी नहीं बनता क्योंकि समवाय सम्बन्धको तो पूर्व निरा-करण करआये हैं और गुण गुणी के तादात्म्य सम्बन्ध की अयोग्यता है और तमप्रकाशकीनाईं विरुद्ध स्वभा-ववालोंका चेतनजड़का अध्यास से बिना तादात्म्य भी नहींबनता चेतनगुणको जड़द्रव्य के साथ धर्म धर्मिभाव की कल्पना कदाचित् नहीं होसक्ती क्योंकि चेतनजड़ के सम्बन्धका अनिरूपण होनेसे और विरुद्धस्वभाव वाले होनेसे जो जिससे विरुद्धस्वभाववाला है सो ति-सका धर्मनहींहोता जैसे भास्वरत्वतमका औष्णत्व ज-

लका धर्मनहीं है तिससे विरुद्ध स्वभाववाला होनेसे और दोष यदि आत्माको जड़मानोगे तब सुषुप्ति से उत्थानताको प्राप्तभया जो पुरुषहै तिसको(सुखमस्वाप्सं नकिंचिदवेदिषम्) ऐसास्मरण सम्पूर्ण पुरुषोंको होताहै सो अबनहीं होवेगा क्योंकि सुषुप्तिमें तुमने यावत्ज्ञान का अभाव माना है और बिना अनुभव से स्मृतिहोती नहीं और सुषुप्ति से उत्तर स्मृति अवश्य होती है इस-लिये चिद्रूपआत्मा सुषुप्तिआदिकोंका भी साक्षी सर्वके अनुभवकरके सिद्धहै (चार्वाकका प्रश्न) मैं ब्राह्मणहूं मैं श्यामहूं मैं स्थूलहूं इनप्रतीतियों से ब्राह्मणत्वादि धर्मों वाला यह स्थूलशरीरही आत्मा है और कोई लोकांतर में गमनकरनेवाला आत्मा नहीं है (उत्तर) स्थूलश-रीर तो पृथ्वीका कार्यहै यह आत्मा नहीं होसक्ता जैसे घटपृथिवीका कार्यहै और आत्मानहींहै और यदिशरीर को आत्मामानोगे तब घटकीनाई इसमें चेतनताभीनहीं हुई चाहिये और यदि चेतनताके बिना जड़को आत्मा मानोगे तब घटमेंभी आत्मव्यवहार हुआ चाहिये होता नहीं है इसलिये यह स्थूलशरीर आत्मानहीं होसक्ताहै (प्रश्न) जैसे केवल पानके पत्तेसे रक्तता उत्पन्न नहीं होती परंतु जब सुपारी चूना कत्था पानमें मिलजाते हैं तब रक्तता उत्पन्न होजाती है तिसी प्रकार प्रत्येक भूत में चेतनता नहीं भी है परंतु जब चारों मिलजाते हैं तब तिनमें चेतनता भी उत्पन्न होती है (उत्तर) मृ-तक शरीर में चेतनता क्यों नहीं होती वहां परभी चारों मिले हैं सो नहीं बनता (प्रश्न) प्राणों के सं-

योगको भी ज्ञानादिकों के प्रतिकारणता मानी है सो मृतक शरीर में प्राणों का संयोगनहीं है इस वास्ते वहां ज्ञानादिक भी नहीं होते हैं (उत्तर) प्राणभी तो तुम्हारे मत से भूतों के मिलनेसेही उत्पन्न होते हैं और वायुका कार्य हैं तब प्राणभी मृतकमें उत्पन्न होने चाहिये क्योंकि तिसका कारण विद्यमान है और मृतकमें प्राणनहीं होते हैं इसलिये वृथा तुम्हारी कल्पना है और दोष यदि शरीरको आत्मामानोगे तब बाल्यअवस्था में जो माता पिताका अनुभव किया है वृद्धावस्था में भी तिसका स्मरण न हुआचाहियेक्योंकि जिस बाल्य शरीर रूपी आत्माने अनुभव कियाथा वहशरीर तो अब नहीं है क्योंकि अवयवों के बढ़ने से वह पूर्व शरीर का नाश होताहै जिसने अनुभव कियाथा वह तो अब नहीं है और अन्य के अनुभव करनेसे अन्य की स्मृति होतीनहीं यदि अन्यकरके अनुभव कियेहुये की अन्यकरके स्मरण मानोगे तब माता ने जो अनुभव किया है गर्भस्थ बालकको भी अनुभव हुआचाहिये होता नहीं है इस वास्ते दोष बनाहीरहा और अकृताभ्यागम दोष भी आवेगा इस जन्ममें जो पुण्य पाप कियेहैं वह सब निष्फल होजावैंगे क्योंकि तिनका भोगनेवाला आत्मा तो यहांही भस्म होजावेगा तब फलकौन भोगेगा इसीका नाम अकृत है और उत्पत्ति से पूर्व तो यह शरीर थाहीनहीं तब विना किये से कर्म के फलकी प्राप्तिहोगी इसी का नाम अभ्यागम दोष है और भी अनंत दोष आवेंगे इस वास्ते शरीर से

भिन्न शरीरादिकों का साक्षी चेतन रूप आत्मामानो॥
चार्वाकके एक देशी की शंका (प्रश्न) में सुनताहूं मैं
बहराहूं मैं कानाहूं मैं बोलताहूं इत्यादि प्रतीतियों करके
शरीरसे अतिरिक्त इन्द्रियही आत्मा हैं क्योंकि सुषुप्ति
में इन्द्रियों के उपशम होनेसे कुछ व्यवहारनहीं होता
है और इन्द्रियों की कलह जो लड़ाईहै सोभी श्रुतियों
में प्रसिद्ध है और बिना चेतन के जड़में कलह बनती
भी नहीं इसलिये इन्द्रियही आत्माहैं (उत्तर) इन्द्रियों
के समूहको आत्मा मानतेहो व किसी एक इन्द्रियको
आत्मा मानतेहो यदि समूहको आत्मा मानोगे तब
अनेक आत्मा होवैंगे तब परस्पर सबकी विरुद्ध क्रिया
होनेसे कोई क्रियाभी सिद्धनहीं होगी क्योंकि जिससम-
य चक्षुरूपको देखने की इच्छा करैगा तिसकाल में
श्रोत्र शब्दको सुनने की इच्छा करेगा रसना स्वादकी
इच्छाकरैगी घ्राणगंधकी इच्छाकरेगा तब कोईभी क्रिया
नहीं सिद्ध होगी और किसी एक इन्द्रियको आत्मा
मानोगे तब तिस एकके नष्टहोनेसे शरीरकाभी उन्मथन
होजावेगा क्योंकि बिना आत्माके शरीर कैसे रहेगा
आत्मा तो तुम्हारा एक इन्द्रियहीथा सोतो नष्ट होगया
और शरीर ज्योंका त्योंही बना है इसलिये जो इन्द्रिय
आदिकोंको भी सत्तास्फूरति देता है चेतन स्वरूपवही
आत्मा है (हिरण्यगर्भ के उपासक का प्रश्न) प्राणही
आत्माहैं क्योंकि सुषुप्ति काल में संपूर्ण इन्द्रिय उपरम
होजाते हैं अर्थात् अपने कारणमें लय होजाते हैं और
प्राणही जागतेरहते हैं और प्राणोंकी श्रेष्ठता भी श्रुति-

यों में कही है इसलिये प्राणही आत्माहैं (उत्तर) प्राणों की आत्मतानहीं बनती क्योंकि प्राणोंकी उत्पत्ति वेदमें लिखी है सो पूर्व कथन करआये हैं इस वास्ते आत्मा प्राणोंसे भी भिन्न चैतन्यस्वरूप है और प्राणजड़ है (अब मन आत्मवादी का प्रश्न) मनही आत्मा है क्योंकि जो भोक्ताहोवै सो आत्मा होवे सो मनको भोक्ता है इसलिये मनही आत्मा है (मनएवमनुष्याणां कारणंबंधमोक्षयोः। बन्धायविषयासंगिमोक्षोनिर्विषयंस्मृतम् १) मनुष्योंका मन जोहै सोई बंध मोक्षका कारण है विषयों में आसक्त हुआ मन बंध के लिये होता है और निर्विषय हुआ मुक्तिके लिये होता है और श्रुतियों में प्राण मय के अंतर मनकोही आत्मा कहा है (उत्तर) मनकी आत्मतानहीं बनती क्योंकि मनकीभी उत्पत्ति वेदमें कहीहै जो उत्पत्तिवालाहोवै सो नाशीहोवै है और मनकी करणताभीप्रसिद्धहै इसलिये मनआत्मा नहीं है ॥ अब विज्ञानवादीयोगाचार्यकीशंका (प्रश्न) मनके अंतर जोविज्ञान है तिसीकी श्रुतियेंमें आत्मता कहीहै इसलिये विज्ञानही आत्माहै सो विज्ञान दोप्रकारकाहै एक अहंवृत्ति है दूसरा इदंवृत्ति है सो ये अंतःकरण केहीदोभेद हैं अहंवृत्ति विज्ञानहै इदंवृत्तिमन है अहंवृत्ति कारण है इदंवृत्ति कार्य है और क्षण क्षण में अहंवृत्तिका नाशहोताहै इसवास्ते विज्ञानक्षणिकहै और स्वप्रकाश है और एक प्रवृत्ति विज्ञान दूसरा आलय विज्ञानहै दोनोंमें से अयंघटः ये प्रवृत्ति विज्ञानहै और सुषुप्तिमें अहं प्रत्ययजो है सो आलय विज्ञान है और

सुखादिकभी इसविज्ञानकाहीविकारहै क्योंकि विज्ञानसे अतिरिक्त और कोई प्रसिद्ध नहींहै इसलिये विज्ञानही आत्माहै (उत्तर) यदि क्षणिक विज्ञानकोही आत्मा मानोगे तब पूर्व अनुभव किया जो पदार्थहै तिसका स्मरणहोवैनहीं क्योंकि विज्ञान तो क्षणिकहै जिस विज्ञानने पदार्थको अनुभवकियाथा वह विज्ञान तो दूसरे क्षणमें नष्टहोगया अब तो दूसराही विज्ञानहै तिसको स्मरण होगानहीं क्योंकि अन्य करके अनुभवका अन्यकरके स्मरणहोतानहीं यदिकहो कस्तूरी जैसेवस्त्रोंमेंरक्खीहुई तिसकी उत्तर उत्तर वस्त्रों में सुगंधि चलीजातीहै तिसी प्रकार पूर्व पूर्व विज्ञान से उत्पन्न जो संस्कार सो उत्तर उत्तर विज्ञान में चलेजावेंगे स्मरणभी बनजावैगा सो ऐसाभी नहीं बनता क्योंकि माता करके अनुभवकिया जो पदार्थहै सो गर्भमें स्थितबालककोभी तिसकास्मरण होना चाहिये सो होतातो नहींहै इत्यादि औरभीअनेक दोष आवेंगे विज्ञानके आत्मा मानने में और अकृताभ्यागम भी दोष होवेगा॥ और शून्य वादीका मत पूर्व खंडन कर आयेहैं शून्यको अधिष्ठानता नहीं बनती है इसलिये जोशून्यकाभी साक्षीहै वही चैतन्य स्वरूपनित्य आत्मा है और वादीका(प्रश्न) आनंद में कोशही आत्माहै क्योंकि श्रुतियों में विज्ञान मयकोशके अंतर आनंदमयकोशको आत्मताकहीहै इसलिये आनंदमय कोशही आत्माहै (उत्तर) आनंद मयकोशको आत्मतानहींबनती क्योंकि आनंदमयकोश मेघकी नाई कदाचित्होनेवालाहै इसलिये यह आत्मा नहींहै और आ-

त्माकी अस्ति अस्ति रूपकरके उपलब्धिहोती है इस-
लिये आनंद रूप आत्मा है और किसी नास्तिक का
(प्रश्न) जीव उत्पत्ति नाशवाला है देहकी उत्पत्ति के
साथ जीवकी भी उत्पत्ति होतीहै और देहकेनाश करके
जीवका भी नाशहोताहै जैसे (जातो देवदत्तो मृतो देव-
दत्तो)लोकमें देवदत्त उत्पन्नहुआ देवदत्तमरायहप्रतीति
भी होतीहै और वेदमें जीव के जात कर्मादिक विधान
कियेहैं यदि जीवकी उत्पत्ति नहींमानोगे तब कर्मादिक
सब निष्फलहोवेंगे इसवास्ते जीव उत्पत्ति नाशवाला
मानो (उत्तर) यदिजीवकी उत्पत्ति मानोगे तबशरीरा
न्तरमें इष्टकी प्राप्ति अनिष्टकी निवृत्तिको विधान करने
वाले जो विधी प्रतिषेध वाक्यहैं वह सब अनर्थकहोजा-
वेंगे और लोक मेंभी सुना जाताहै जीव से रहित यह
शरीर मरता है जीवनहीं मरता और श्रुतिभी कहती
है (जीवोनजायतेम्रियतेवा) जीव उत्पन्नभी नहींहोता
और मरताभी नहीं है और व्यास भगवान्का सूत्रभी
इसमें प्रमाणहै (चराचरव्यपाश्रयःतद्भावाभावित्वात्)
अध्याय २ पाद ३ सूत्र १६ स्थावर जंगमशरीरों में
जन्म मरण शब्द मुख्यहै और तिन शरीरों में स्थित
जो जीव हैं तिन में गौण व्यवहार होताहै तद्भावाभावि
त्वात् शरीरके प्रादुर्भाव होने से जन्म व्यवहारहोता है
और शरीर के तिरोभाव से मरण व्यवहार होता है॥
केवल जीव में जन्ममरण व्यवहार होतानहीं श्रुतिः
(सवायंपुरुषोजायमानःशरीरमभिसंपद्यमानः सउत्क्रा
मन् म्रियमाणइति) सो यह पुरुष जायमानहोकर

अर्थात् शरीरके साथ सम्बन्धको प्राप्त होकर पुनः श-
रीरसे उत्क्रमण करता हुआ शरीरसे वियोगको प्राप्त
होता है और जातकर्म जोहैं सोभी देहके प्रादुर्भावकी
अपेक्षाकरके होते हैं जीवात्मा उत्पन्ननहीं होते हैं क्यों
कि उत्पत्ति प्रकरणमें इस जीवकी उत्पत्ति कहींभी नहीं
सुनी है और ब्रह्मकीहीजीव रूपकरकेस्थिति सुनीहै(स
वाएषमहान्आत्माऽजरोऽमृतोऽभयोब्रह्मनजायते म्रि
यतेवाविपश्चित्अजोनित्यःशाश्वतोऽयंपुराणः तत्सृष्टा
तदेवानुप्राविशत् सएषइहप्रविष्टआनखाग्रेभ्यः)इत्यादि
श्रुति ब्रह्मकाही जीवरूपकरके प्रवेशको कहे हैं और
(तत्त्वमसिअहंब्रह्मास्मि) इत्यादि श्रुति जीवको नि-
त्यत्व और ब्रह्माभिन्न कहे हैं और कहीं जो जीव की
उत्पत्ति प्रलय सुनी है सो उपाधि संबंध करके है जैसे
घटकी उत्पत्ति से घटाकाशकी उत्पत्ति होवे है और घट
के नाशसे घटाकाशके नाशकी प्रतीतिहोवे है उपाधिमें
ही उत्पत्ति नाशहोवे हैं आकाशमें कदाचित् भी नहीं
होवे हैं तैसे शरीरादिकों की उत्पत्ति और नाशसे जीव
में भी उत्पत्ति विनाश गौण व्यवहार होवे है वास्तवसें
जीव असंग चिद्रूप नित्यहै जीवके स्वरूप में वादियों
का विवाद दिखादिया अब जीवके परिमाण में वादियों
का विवाद दिखाते हैं अर्हतका (प्रश्न) शरीर परि-
माण वाला जीव है (उत्तर) यदि शरीर परिमाणजीव
मानोगे तब शरीरोंका तो कोई नियत एक परिमाण
नहीं है किंतु कोई शरीर अत्यंत बड़े हैं और कोई अ-
त्यंत छोटे हैं और कोई मध्यम परिमाण वाले हैं जब

कि कर्मके वशसे किसी मनुष्यका जीव जो हस्ती के शरीर में जावै है तब हस्ती के शरीर में समग्रनहीं समावैगा किंतु एक देशमेंही रहेगा बाकी का शरीर निर्जीवही होवैगा और यदि मच्छर के शरीर में जावैगा तब बाकीका बाहरही रहेगा और यहही दोष बालयुवा वृद्धा वस्था में भी आवेंगे और जो मध्यम परिमाण वालाहोवै सो अनित्यहोवै जैसे घट मध्यम परिमाण वालाभी है और अनित्य भी है और जैसे दीपक अनंत अवयवों वाला छोटेघटमें तिसके अवयव संकुचित होजाते हैं और बड़े में फैल जाते हैं ऐसे मानोगे तब अवयवों के नाशसे जीवका नाश और अवयवोंकी उत्पत्तिसे जीवकी उत्पत्ति होवैगी तब कर्माष्टक करके बंधाय मानहुआ संसार सागर में निमग्न जीव को बंधके छेदनसे ऊर्द्ध्वगति रूप मोक्षभी नहीं सिद्ध होगा और बंधभी नहीं सिद्ध होगा घटकी नाईं और जीवभी अनित्य होजावैगा और दीपकका दृष्टांत भी नहीं बनता क्योंकि दीपक के अवयवों का कारण तेज है तैसे आत्माके अवयवों का कोई कारणनहीं है और यदि जीवात्माके अवयवोंकी उत्पत्ति नाश मानोगे तब किस से मानोगे भूतोंसे तो जीवके अवयवोंकी उत्पत्ति लयबनती नहीं क्योंकि जीव अभौतिकहै अर्थात् भूतों का कार्यनहीं है और कोई जीवके अवयवों का कारण नहीं बनता इसलिये अर्हतका मत असंगत है वेद विरुद्ध होने से अणुवादी वैष्णवका (प्रश्न) चक्षु और मद्धो और नेत्र और दशमद्वार से और मुख

नासिकादिकोंमें से मरण समयमें जीवका निर्गमनहोता है और शरीर के अंतर हृदयादि स्थानों में जीव की गति है इसलिये जीव अणुपरिमाण वाला है (उत्तर) (सवाएषमहानजआत्मायोयंविज्ञानमयाप्राणेषु आकाश वत्सर्वगतश्चनित्यः) सो यह आत्मा महान्है जो वि- ज्ञान मय और प्राणोंके भी अंतर है और आकाशवत् सर्वगतहैनित्यहैइत्यादि श्रुति प्रमाणसे आत्मा महान् प रिमाणवालाहै(प्रश्न)येश्रुतियांईश्वरके परिपाण विषयक प्रमाणहैं क्योंकि ईश्वरकोही प्रधानताकरके वेदितव्यक- थनकरने से और(एषोऽणुरात्मा चेतसावेदितव्योयस्मि न्प्राणाःपंचधासंविवेश) यहआत्मा अणुपरिमाणवालाहै और चित्करके जाननेयोग्यहै जिसमेंप्राणपांच प्रकार काहोकर निवेशकरताभयाइत्यादि श्रुतियोंकरके प्राणोंके सम्बन्ध से जीवको अणुत्वकहा है(बालाग्रशतभाग- स्यशतधाकल्पितस्यच।भागोजीवःसविज्ञेयः) एक बाल का जो सवां भाग फिरतिस एकभागका सौ सौ भागक- ल्पना किया जो है सोई भाग जीवका भी जानना इ- सश्रुति प्रमाणसे भी जीवको अणुत्वसिद्धहै और श्रुति (अणोरणीयान्)आत्मा अणुसेभी अणुहै यहभी आत्मा के अणुत्व में प्रमाण है (उत्तर) यदि जीवात्मा को अणुमानोगे तब देहके एक देश में स्थित जो आत्मा है तिसको सब शरीरवर्त्ती सुख दुःख का ज्ञाननहीं होगा क्योंकि सर्व शरीर में तो वहहैनहीं जिस देश में होगा तहां परही दुःख सुख का अनुभव होगा और गर्मी के दिनोंमें गंगा ह्रदमें निमग्नजो पुरुषहै तिसको सर्व श-

रिरवर्ती शीतता प्रतीतहोतीहै सो भीनहींहोगी क्योंकि सर्वशरीर में आत्मा है नहीं और जो तुमने आत्मा की अणुत्व में श्रुतियों को प्रमाण दिया है सो भी नहीं बनता क्योंकि तिनहीश्रुतियोंमें(महतोमहीयान्)अर्थात् आत्मा महान् से भी महान्है ऐसा प्रतिपादन कियाहै इसवास्ते तिनश्रुतियों का तात्पर्य आत्माकी अणुत्वता में नहींहै किंतु दुर्विज्ञेयता में तात्पर्यहै अर्थात् आत्मा अतिसूक्ष्म से भी सूक्ष्महै और अति महान् सेभी महान्है इसलिये तिसका जानना अति कठिनहै (प्रश्न) जैसे हरिचन्दनकी बिंदु शरीरके एकदेशमें स्थितहोकर सर्व शरीरमें शीतताको उत्पन्न करदेतीहै तैसेआत्माभी शरीरके एकदेशमें स्थितहोकर सर्वशरीरमें उपलब्धिको करदेताहै(उत्तर) चन्दन बिंदुका दृष्टांत नहींबनताक्योंकि यदिआत्मादेहकेएकदेशमें स्थितहो तबतो तुम्हारा दृष्टांत बने सो तोहैनहीं क्योंकि चन्दन बिंदुको एकदेशस्थत्व प्रत्यक्षसिद्धहै औरआत्माको सकलशरीरवर्तित्व प्रत्यक्षसिद्धहैइसवास्ते यहतुम्हारादृष्टांतविषमहै(प्रश्न) हृदिह्येष आत्मा विज्ञानमयः प्राणेषुहृद्यंतर्ज्योतिपुरुषः इत्यादि श्रुतिप्रमाण से एक देशस्थत्व सिद्ध है और पूर्वोक्त श्रुति से अणुत्व सिद्ध है दृष्टांत विषमनहीं है जैसे मणि या दीपक किसी मन्दिर के एक देश में स्थित होकर संपूर्ण मन्दिर में व्याप जाता है तैसे अणुआत्मा का भी चेतन गुणसंपूर्ण शरीरमें व्यापजाता है (उत्तर) यह दृष्टांत तब बने जैसे चन्दन बिंदुसावयव है और सूक्ष्म अवयवों करके फैलजाता है तैसे

आत्माभी यदि सावयव होतासोतोनहींहै और चेतनता आत्माका गुणभी नहीं बनता क्योंकि गुणजोहोताहै सो गुणी से भिन्नदेश में नहीं रहसक्ता जैसे पटका शुक्लरूप गुणहै सो पटसे भिन्नदेशमें नहींरहताहै और जो तुमने दीपप्रभाका दृष्टांतदियाहै सो प्रभाभी द्रव्यहैगुणनहींहै किंतु घनीभूततेजके अवयवों का पुंज दीपक है और पतले अवयव तिसकी प्रभाहै इसवास्ते यहदृष्टांतनहीं बनता (प्रश्न) दूर देशमेंस्थितपुष्पों कीगंधका जैसे अपने आश्रय कुसुम रूप से विभागको प्राप्तहोकर फैलजातीहै तैसे अणु आत्माका चेतन गुणभी अपने आश्रय आत्मासे विभागहोकर फैलजावेगा (उत्तर) गंधके साथ पुष्पद्रव्य के तृणकोंकाभी विभागहोवैहै यह विषम दृष्टांतहै (प्रश्न) यदि पुष्पोंके तिसरेणुभी साथही गंध के जावेंगे तब पुष्प छिद्रवाले होनेचाहिये सोतो नहीं होते हैं किंतु पुष्प ज्योंके त्यों बनेरहते हैं और लोकमें भी गंधवाले द्रव्यको हम सूंघते हैं ऐसी प्रतीति होवै नहीं किन्तु गन्धको सूंघते हैं ऐसी प्रतीतिहोती है (उत्तर) भोक्ताके अदृष्ट विषयों से पुष्पोंमें और तृणकादि उत्पन्न होते हैं और रूपादिकोंकी जैसे आश्रय से बिना प्रतीति होतीनहीं तैसे गंधकीभी अपने आश्रय से बिना प्रतीति नहीं होती इसलिये चेतनता आत्माका गुणनहींहै किंतु चैतन्यस्वरूपही आत्माहै॥ और यदि चेतनता सर्व शरीर में व्याप्त है तब आत्मा भी सर्व शरीर में व्याप्त है क्योंकि चेतनता ही आत्मा का स्वरूप होने से जैसे अग्निका उष्णता स्वरूप है

और बुद्धिके धर्म जो सुख दुःखादि हैं तिनका आत्मा में अध्यास होने से आत्मामेंही कर्तृत्व भोक्तृत्वादि संसारकी प्रतीति होती है स्वरूपसे नहीं स्वरूपसे तो आत्मा नित्यमुक्त है इसी निमित्तसे बुद्धिके परिमाण करके आत्मा के परिमाणका उपदेश किया है और उत्क्रांति आदिक भी बुद्धिकी उत्क्रांति आदिकों करके उपदेश किया है उपाधि निमित्त कहीं उत्क्रांति आदिक भी होते हैं वास्तवसे नहीं होते हैं (प्रश्न) यदि बुद्धिके संबंधसे परिच्छिन्न परिमाणता आत्मामें प्रतीतिहोतीहै तब बुद्धिका संबंध अंतवालाभी होगा जब कि बुद्धि का सम्बन्ध नहीं रहेगा तब आत्माको सांसारित्व भी नहीं होवेगा (उत्तर) यावत्पर्यंत बुद्धिका संयोग है तावत्पर्यंतही आत्माको संसारित्वहै और यावत् पर्यंत सम्यक् ज्ञानकरके इसआत्माका संसार दूरनहीं होता है तावत् पर्यंत बुद्धिका संयोग भी दूरहोता नहीं अर्थात् यावत् पर्यंत बुद्धि उपाधि करके कल्पित सम्बन्ध होता है तावत् पर्यंत आत्मा को कल्पित जीवत्व सांसारित्व होता है परमार्थ से न जीवत्व है न सांसारित्व है यह आत्मरूपही है (नान्योतोऽस्तिद्रष्टःश्रोतामंता विज्ञातातत्त्वमसि अहंब्रह्मास्मि(इत्यादि अनेक श्रुति जीवके ब्रह्मरूपता में प्रमाण हैं (प्रश्न) सुषुप्ति प्रलय में बुद्धिका सम्बन्ध आत्मा के साथ नहीं बने है क्योंकि (सत्तासौम्यतदासंपन्नो भवति) हे सौम्य सुषुप्ति काल में जीवात्मा ब्रह्मभावको प्राप्तहोता है इसश्रुति प्रमाण से यदि सुषुप्तिमें बुद्धिकासम्बन्ध रहेगातब ब्रह्मभावकी

प्राप्ति नहीं बनैगी और प्रलय की भी हानि होवैगी क्योंकि प्रलय में संपूर्ण कार्यकालय कहा है सो कैसे होगा बुद्धिका संबंध और बुद्धिदोनों विद्यमानहैं (उत्तर) जैसे लोक में वीर्य और श्मश्रुआदिक वीजरूप करके वालकोंमें विद्यमानरहतेहैं अविद्यमानकीनाईं सोई यौवनादिकों में प्रकट होआवते हैं॥ अविद्यमान हुयेनहीं उत्पन्नहोतेहैं यदि अविद्यमानहुये उत्पन्नहोवैं तब नपुंसक मेंभी हुये चाहिये सोतो नहींहोते इसीप्रकार बुद्धि आदिकों के सम्बन्धभी शक्तिरूपताकरके सुषुप्ति प्रलयमेंभी विद्यमानरहैहैं और पुनः प्रबोध काल में आविर्भाव होतेहैं विनाकारणसे कार्यकीउत्पत्ति होतीनहीं यदि बिना कारण से होती तब सर्वत्र सर्व पदार्थ उत्पन्नहुये चाहिये॥ होते नहीं हैं इसलिये कारणसेही कार्यकी उत्पत्ति होतीहै इससे यह सिद्धहुआ सुषुप्तिआदिकों में भी कारणरूपता करके बुद्धिका सम्बन्ध बना है और (श्रुतिः) ध्यायतीव लेलायतीव बुद्धिके ध्यान करने से आत्मामें ध्यान कर्तृत्व प्रतीतहोवैहै और बुद्धिकेचलने से आत्मा में चलन क्रिया प्रतीति होती है वास्तव से नहींहै मिथ्याअज्ञानकी ज्ञान से विनानिवृत्ति होवैनहीं अर्थात् सम्यक् ज्ञान सेही बुद्धि आदिकोंका ध्वंसहोवैहै पूर्वोक्त श्रुति युक्ति प्रमाण से आत्माका महत्परिमाण सिद्धहुआ अणुवादिका मतखंडन करदिया अब भट जो मीमांसक है तिसका (प्रश्न) आत्मा केवल चेतननहीं है किंतु जड़ चेतनउभयरूपहै क्योंकि जबपुरुष सुषुप्ति से उत्थानहोताहै तबतिसको ऐसा स्मरणहोता है सुषुप्ति

कालमें मैं ऐसाजड़होकरसोया जोकुछभी मेरेको चेतनता न रही सो ऐसी जड़ताकीस्मृति होतीहै और सुषुप्ति उत्तर जड़ताके अनुभवका स्मरणभी होता है क्योंकि अनुभवसे विना स्मरण होतानहीं इसलिये स्मरणजोहै सो सुषुप्तिके अनुभवकी कल्पना कराताहै और सुषुप्ति में चेतनताका लोपभी नहीं होता है और जैसे खद्योत पक्षी प्रकाश अप्रकाश दोनों करके युक्त होता है तैसे आत्माभी जड़ चेतनता करके युक्तहोताहै॥ इसवास्ते आत्माभी जड़ चेतन उभय रूप है (उत्तर) निरंश आत्मामें उभयरूपता नहीं बनतीहै इसवास्ते चिद्रूपही आत्माहै और एकमें दोविरोधी धर्म किसी प्रकारसेभी नहीं रहसक्ते हैं जैसे शीत उष्णता दोनों एकमें नहीं रहसक्तेहैं तैसे जड़चेतनताभी अध्याससे विनानहींरह सक्तेहैं इसलिये आत्मा चैतन्य स्वरूप है और संपूर्ण जड़प्रपंच तिसमें अध्यस्तहै हे शिष्य पूर्वोक्त मतों में श्रद्धाको त्यागकर वेदांत मतमें श्रद्धाको स्वीकारकरो और जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति स्थूल सूक्ष्म कारण विश्व तैजस प्राज्ञ इनसबके तुम द्रष्टाहो और जैसे जाग्रत में स्वप्ननहीं तैसे स्वप्न में जाग्रत नहीं और सुषुप्ति में दोनों नहींहैं और सुषुप्ति जोहै सो जाग्रत स्वप्नदोनोंमें नहींहै इस हेतु से वहतीनों मिथ्याहैं क्योंकि तीनों वह तीनों गुणोंसे उत्पन्नहैं और तुम निर्गुण साक्षीहो और जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति और भाव अभाव और बुद्धिकी जो वृत्तियां हैं और मनकाजोगमन अगमनहै इनसबके तुम ज्ञाताहो जैसे दीपक घटका प्रकाशक है किंतु घटके

धर्मवाला नहीं है तैसे तुमभी सुषुप्ति आदि सर्व के प्रकाशकहो तिनके धर्मोंवाले नहींहो और जिस हेतुसे तुम देहनहींहो इसीवास्तेजन्मादि षट्विकारभीतुम्हारेमें नहीं हैं किंतु स्थूल शरीर मेंही हैं अर्थात् उत्पन्न होना स्थित होना बढ़ना बदलना क्षीण होना नाशहोना यह छः विकार शरीरकेही धर्महैं और तुम अशरीरहो और नामरूप गोत्र वर्ण आश्रम धर्म अधर्म जातीआदिक संपूर्ण यह भी शरीरके धर्म हैं अशरीरी आत्मा के धर्म नहींहैं इसप्रकार श्रुतियों ने प्रतिपादन करके तुमकोही ब्रह्मरूपता प्रतिपादनकरीहै और आत्मा के अभेदको श्रुतियां निरूपण करती हैं (क्षीरेक्षीरंयथाक्षिप्तं तैलं तैले जलं जले । संयुक्तमेकतांयाति तथात्मन्यात्मवि-न्मुनिः १) जैसे दूध में दूधफेंकाहुआ और तेलमें तेल जलमें जल फेंकाहुआ ऐक्यताको प्राप्त होताहै तैसेआ-त्मवित् मुनि भी ब्रह्ममें ऐक्यताको प्राप्तहोताहै १ (घ-टेनष्टेयथाव्योम व्योमैवभवति स्वयम्।तथैवोपाधिविल-ये ब्रह्मैवब्रह्मवित्स्वयम् २) घटके नाश हुये पर जैसे घटाकाश महाकाश में ऐक्यता को प्राप्तहोजाताहै तैसे उपाधिके नाशहुयेपर ब्रह्मवित् ब्रह्मरूपही होजाताहै२ हे शिष्य श्रुतिवाक्यों करके अपनेको ब्रह्मरूप निश्चय करके अद्वैत में निष्ठावाला हो बहुतकथनसे क्या प्र-योजन है मैं ब्रह्महूं जगत् मिथ्याहै इसप्रकार का जिस को दृढ़बोध है सो जीवनमुक्त है (प्रश्न) जीव ब्रह्मकी ऐक्यताको मैंने भलीभांति से निश्चय किया अब ज-गत् के मिथ्यात्वकोभी दृष्टांत प्रमाणपूर्वक पुनः कहिये

जिसप्रकार तिसका भी दृढ़ निश्चय होजावै (उत्तर) प्रथम अनुमान प्रमाण करके जगत् की मिथ्यात्व को कहैहैं सो सुनो जगत् जोहैसो मिथ्याहै दृश्यहोनेसे रज्जु सर्पकी नाईं जैसे रज्जुमें सर्पदृश्यहै और मिथ्या है तैसे यह जगत् भी दृश्यहै इसको भी मिथ्याजानो जो अपने अभाव के अधिकरण में प्रतीति होताहै सो मिथ्या है जैसे रूपके अभाव का अधिकरण सीपी है तिसमें रूपे की जो प्रतीति होतीहै सो रूपा मिथ्या है तैसे जगत् के अभाव का अधिकरण ब्रह्महै तिसब्रह्म में जगत् की प्रतीति जो होतीहै सो जगत्भी मिथ्याहै और जैसेस्थाणुमें पुरुष की प्रतीति होती है और मरुथल में जल की और आकाश में नीलता की और जलमें अधोमुख्यता की और दर्पण में मुखकी प्रतीति होती है तैसे आत्मा में जगत् की प्रतीतिहोतीहै यह भी सब दृष्टांत मिथ्यात्व में जानलेने और श्रुतियां भी जगत्को मिथ्या निरूपण करैहैं (प्रपंचो यदि विद्येत निवर्तेतन संशयः। मायामात्रमिदंद्वैतमद्वैतपरमार्थतः १) यदि आत्मामें जगत् विद्यमान होवै तब तिसकी निवृत्तिहोवे इसमें संशयनहींहै जोवस्तुस्वरूपसेही नहींहैतिसकी निवृत्तिकहांसे होगी किंतु मायामात्रही द्वैतहै परमार्थसे तो अद्वैतही सत्यरूप है १ (द्वितीयकारणाभावादनुत्पन्नमिदंजगत्। यथैवेदंनभःशून्यं तथैवहि २) द्वैत के कारणका अभाव होने से यह जगत् स्वरूप से शून्य है जैसे आकाश स्वरूपसे शून्य है (वन्ध्याकुमारवचनेभीतिश्चेदस्त्विदंजगत्। शशशृंगेणनागेन्द्रो मृतश्चेज्जग

दस्तितत् ३) बन्ध्याके बालक के वचन से यदि भ्रांति होवै तब जगत्भी होवै और शशके शृंगकरके यदि सिंहमाराजावै तब जगत् होवै अर्थात् बंध्याके पुत्रका और शशशृंग का जैसे तीनों कालमें अभाव है तैसे जगत्का भी ब्रह्ममें तीनों कालमें अभावहै ३ (मृगतृष्णाजलंपीत्वातृप्तिश्चेदस्त्विदंजगत् । गन्धर्वनगरेसत्ये जगद्भवतिसर्वदा ४) मृगतृष्णाके जलको पान करके यदि तृप्तिहोवै तब यह जगत्भी सत्यहोवै और यदि गन्धर्व नगर सत्यहोवै तब जगत्भी सत्यहोवै (गगने नीलिमासत्येजगत्सत्यंभविष्यति । मासात्पूर्वंमृतोमर्त्यो ह्यागतश्चेज्जगद्भवेत् ५) आकाशमें नीलिमा सत्य होवै तो जगत्भी सत्यहोवे और एक महीने के पूर्व मराहुआ जो पुनः आजावै तब जगत् भी सत्यहोवै ५ हे शिष्य पूर्वोक्त प्रमाणों से जगत्का मिथ्यात्व निश्चय करके अपने को ब्रह्मरूप चिंतनकर (सर्वोपाधिविनिर्मुक्तंचैतन्यंचनिरंतरम्तद्ब्रह्माहमितिज्ञात्वाकथंवर्णाश्रमीभवेत् १) सर्व उपाधि से रहितजो निरंतर चैतन्य स्वरूप ब्रह्महै सो ब्रह्ममैं हूं इस प्रकार जानकर कैसे वर्णाश्रमी होवैहै किंतु कदाचिद् भी नहीं होवै(नमनोहंनबुद्धिश्चनैवचित्तमहंकृतिः।सर्वज्ञोहमनंतोहंसर्वशःसर्वशक्तिमान् २)नमैं मनहूं न बुद्धिहूं न चित्तहूंनअहंकार हूं किंतु सर्वज्ञहूं अनंतहूं सर्वशक्तिमानहूं आनंदरूप हूं सत्य रूप हूं ज्ञानस्वरूप हूं ऐसा ब्रह्मका चिंतन करै (सर्वथाभेदकलनंद्वैताऽद्वैतंनविद्यते । नास्तिनास्तिजगत्सर्वंगुरुशिष्यादिकंनहि २) सर्वथा द्वैताऽद्वैत

भेद कल्पना विद्यमान नहीं है और नहीं है जगत् और गुरु शिष्यादिक भी वास्तवसे नहीं हैं (प्रश्न) यदि गुरु वेदभी मिथ्या होवैगा तब मिथ्याभूत वेद गुरुसे शिष्यको बोध कैसे होवैगा (उत्तर) शृणुस्वप्न स्यासिंहेनमिथ्याभूतेनवेधनम्। दृष्टंयथैवनिद्रातोवेदादेः स्यात्तथात्मधीः ४) हे शिष्य तुमश्रवण करो मिथ्या भूतस्वप्नके सिंह करके जैसे वेधन देखा है सोये हुये पुरुषने और जब जागगया तब वह सिंह और वेधन दोनों मिथ्या होवे हैं तैसे अज्ञानरूपी निद्रा करके सोयाजो पुरुषहै तिसको मिथ्याभूत वेद शास्त्रने स्वप्न में उपदेश भी किया परंतु जब ज्ञानरूपी जाग्रत हुई तब दोनों मिथ्या होवै हैं और अनात्ममात्र के निषेध की अवधि करके जो शेषबचा है सोई नेति नेति इस वाक्यने बोधन किया है और नेतिनेति इस वाक्यमें दो इति शब्दों करके पूर्व भ्रांति सिद्ध जो प्रपंच तिस को बोधन किया है और दो नकारोंकरके जितना मूर्त अमूर्त है अध्यात्माधिदैवत अज्ञान की वासना करके जो उत्पन्न भयहै तिसका निषेध किया है और बुद्धिका बाची अहंशब्द जैसे साक्षीको लखादेता है तैसे नेति नेति इस बाक्यमें निषेधक जो नकारहैं सोभी साक्षीको लखादेते हैं और ब्रह्मशब्द जैसे जगत्की हेतुताका बाची चिन्मात्रका लखायकहै तैसे इति शब्दभी जगत् मात्रकावाची चिन्मात्रकालखायकहै दूसराअर्थकरते हैं नेतिनेति इसवाक्यमें जो दोइति शब्दहैं सो जीव और ईश्वरकी उपाधिके बाची हैं और जो दोनकार हैं तिन

दोनकारों करके दोनों जीव ईश्वरकी उपाधियोंका नि-
षेध करके ब्रह्मका बोधहोवै है इसरीतिसे वार्तिककारने
अहंब्रह्मास्मि इस वाक्यकी नाईं तत्त्वंपदोंकी ऐक्यता
का बोध किया है सो जीव ईश्वरकी ऐक्यतामें अनेक
श्रुतियोंको पूर्व दिखाआये हैं (प्रश्न) बिद्वान्‌को अप
ने इष्टकी उपलब्धि के वास्ते और अनिष्टके त्याग- के
वास्ते क्या कर्तव्य है (उत्तर) पूर्ण बोधवाले विद्वान्
को कोई कर्तव्य नहीं है क्योंकि तिसकी दृष्टि में इष्ट
अनिष्ट दोनों मिथ्या हैं केवल एकही पूर्ण ब्रह्म है द्वैत
का अभाव है इस में श्रुति प्रमाण है (नैष्कर्म्येणनत
स्यार्थस्तस्यार्थोस्तिनकर्मभिःनसमाधानजप्याभ्यांयस्य
निर्वासनंमनः १) तिस बिद्वान्‌का नैष्कर्म्य जो ज्ञान
तिसके साथभी कोई प्रयोजन नहीं है और कर्मों के
साथ भी तिसका कोई प्रयोजन नहीं है और चित्त के
एकाग्र करने में भी तिसका प्रयोजन नहीं है और
इन्द्रियों के जय करने में भी तिसका कोई प्रयोजन
नहीं है जिसका मन वासना से रहित होगया है(स्मृ
तिः। ज्ञानामृतेनतृप्तस्यकृतकृत्यस्ययोगिनः। नैवास्ति
किञ्चित्कर्तव्यमस्तिचेन्नसतत्त्ववित् २) जो बिद्वान्
ज्ञानरूपी अमृत करके तृप्त है जो कृत्यकृत्य है तिस
को कोई भी कर्तव्यनहीं है यदि तिसको कर्तव्यहै तब
तत्त्ववित् नहीं है इसवास्ते जितने विधि निषेध वाक्य
हैं सो आत्मज्ञानी को प्रेरणा नहीं करसक्के हैं (प्र-
श्न) यदि विधि निषेध वाक्य विद्वान् को नहीं प्रेरणा
करेंगे तब विद्वान् की यथेष्ट चेष्टाहोवेगी (उत्तर)

राग से यथेष्ट चेष्टा होती है ब्रह्मवित् विरक्तका राग किसी पदार्थ में नहीं रहातब बिना रागसे यथेष्ट चेष्टा कैसे होगी किंतु कदापि नहीं होगी इसी में वार्तिक कारका वाक्य भी प्रमाण है (बुद्धाऽद्वैतसतत्त्वस्ययथेष्टाचरणंयदि।शुनांतत्त्वविदांचैवकोभेदोऽशुचिभक्षणे १) जानलिया है अद्वितीय ब्रह्मका स्वरूप जिसने तिसकी यदि यथेष्टचेष्टा होवैगी तब कूकरों में और तत्व वेत्तों में क्या भेद होगा किंतु कोई भेद नहीं होवैगा १ (अधर्माज्जायतेऽज्ञानंयथेष्टाचरणंततः। धर्मकार्येकथंतत्स्याद्यत्रधर्मोपिनेष्यते २) अधर्म से अज्ञान उत्पन्नहोता है और अज्ञान से यथेष्टाचरण होता है और धर्म के करने से कैसे यथेष्टाचरणहोगा किंतु कदाचित् नहीं होगा और जहां पर धर्म की भी इच्छा नहीं करता है वहां पर अधर्म के कार्य की कैसे इच्छाकरैगा किंतु नहीं करैगा इसरीति से ज्ञानी की यथेष्टचेष्टा नहीं बनती है (प्रश्न) पूर्व आपने कहा है जिसको आत्मा का पूर्णबोध है वही जीवन्मुक्त है सो तिसजीवन्मुक्तका लक्षण क्याहै जिसलक्षणकरके चीन्हाजावै जो यह जीवन्मुक्त है सो लक्षण कहिये (उत्तर) हे शिष्य श्रुति स्मृतियों ने जो जीवन्मुक्तका लक्षणकहाहै तिसको तुम सुनो (श्रुतयः॥ अहंब्रह्मास्म्यहंब्रह्मास्म्यहंब्रह्मेतिनिश्चयः।चिदहंचिदहंचेतिजीवन्मुक्तउच्यते १ मैं ब्रह्महूं मैंब्रह्महूं मैंब्रह्महूं मैंचैतन्यस्वरूपहूं मैंचैतन्यस्वरूपहूं ऐसा जिसका निश्चयहै तिसीका नामजीवन्मुक्तहै १(सर्वेच्छाःसकलाःशंकाःसर्वेहाःसर्वनिश्चयाः।धियायेन

परित्यक्ताः सजीवन्मुक्त उच्यते । २ । संपूर्ण इच्छा संपूर्णशंका संपूर्ण चेष्टा संपूर्ण निश्चय जिस ने बुद्धि करके त्यागदियेहैं वही जीवन्मुक्तहै २(साधुभिःपूज्यमानोपिपीड्यमानोपिदुर्जनैः।सममेव भवेद्यस्यसजीवन्मुक्त उच्यते३)साधुओंकरके पूज्यमानहुआ औरदुर्जनोंकरके पीड्यमान हुआ दोनोंमें जो समबुद्धिवाला है वही जीवन्मुक्त है ३ जीवन्मुक्तकालक्षण संक्षेप से कथन कर दिया अब विदेह मुक्तकाभी लक्षण सुनो(इदं चैतन्यमेवेति अहंचैतन्यमित्यपि । इति निश्चयशून्योयोवैदेहीमुक्तएवसः १ जीवात्मापरमात्मेतिचिन्तासर्वविवर्जितः। सर्वसंकल्पहीनात्मावैदेहीमुक्तएवसः२)यहचैतन्यहै मैं चैतन्यहूं इस प्रकारके निश्चयसे जो शून्यहै अर्थात् अपने आनंद स्वरूप में मगन है जो विद्वान् वही विदेह मुक्तहै १ यह जीवात्माहै यहपरमात्माहै इत्यादि चिंता से जो रहित है वही विदेहमुक्त है विदेह मुक्तकाभी लक्षण कहदियाहै हे शिष्य जो मैंने तुम्हारेप्रति ब्रह्मका स्वरूप और जीव ब्रह्मका अभेद श्रुतियुक्ति अनुभव स्मृति प्रमाणोंकरके निरूपणकियाहै और तिस को श्रवण करके जो तुमने निश्चयकियाहै तिस अपने निश्चयको अबतुम हमारेप्रतिकहो शिष्य(उत्तर)हेस्वामिन् आपने जोमेरेप्रतिउपदेशकियाहै सोमैंनेभलीभांति से निश्चयकियाहै और सत्यअसत्यको मैंने जानलिया यह प्रपंच सब स्वप्न के तुल्य है और एक ब्रह्मही परमार्थ से सत्यरूपहै सोब्रह्ममैंहूं ऐसामैंने निश्चयकियाहै सो तिसकोमैं कहताहूं ॥ जड़त्वप्रियमोदत्वधर्मःकारण

देहगः। वसन्तिममनित्यस्यनिर्विकारस्वरूपिणः १ जाड़पना और प्रिय मोदादि जो धर्म है सो संपूर्ण कारणदेहगत हैं नित्य निर्विकार स्वरूप जो मैं हूं मेरे में यहसब नहीं हैं १ (चिद्रूपत्वान्नमेजाड्यं सत्वान्नानृतंमम।आनंदत्वान्नतेदुःखंज्ञानाद्भाति सत्यवत् २) चैतन्य स्वरूप होने ते मेरे में जड़ता नहीं है और सत्यरूप होने ते मेरे में असत्यताभी नहीं है आनंद रूपहोने ते मेरे में दुःखका लेशभी नहींहै अज्ञानकरके यह सत्यकी नाई प्रतीतिहोवैहै २ (नमेबन्धोनमेमुक्तिर्नमेशास्त्रंनमेगुरुः। मायामात्रविकारत्वान्मायाऽतीतोहमद्वयः३)नमेरेमेंबन्ध है नमुक्तहै न मेरा शास्त्रहै न गुरुहै यहसंपूर्ण मायामात्र हैं और मायाके कार्य हैं और मैं माया से रहित शुद्ध स्वरूपहूं ३ (देवार्चनस्नानशौचभिक्षादौवर्ततांवपुः। तारंतुजपतुवावाकतद्वत्पठत्वाम्नायमस्तकम्४देव पूजा स्नान शौच भिक्षादिकों में शरीरवर्तो और वाक् जोहै सो तारक मंत्रको जपो व वेदांत पठनकरो मैं इन सर्व का साक्षी चैतन्य स्वरूपहूं ४ गुरु शिष्यकासंवाद रूप वेदांत के सिद्धांतों का प्रकाश करनेवाला यह ग्रंथ संपूर्ण हुआ अब इस पंचमकिरण में जो विषय है सो तिसको भी दोहा चौपाई में संक्षेप से दिखातेहैं दो० ॥ पंचम किरण पूर्ण भयो. मनहिं भयो अति मोध ॥ जो बिचार असको करै लहै वह आतम बोध १ चौ०॥जीवअंशवत् ईश्वर जानो।ताको पुनि अभेद पहिचानो १ सांख्य असंग जीवको मानै।नैयायिकातिहिं जड़हीठानै२ भटकतहै जड़ चेतनरूपा। इनसबकामत बड़हीफीका३

देह आत्मवादि पुनि आयो। स्थूल देहहिं आतमगायो ४ मनइन्द्रियवादि दोऊआयो। बुद्धिवादिको संगहिंलायो ५ विज्ञान कोशवादिसुनधाये। कोशअनंदवादि चलआये ६ जीव उत्पत्तिवादि पुनिबोल्यो। जीवहि जन्म मरणतस मेल्यो ७ पुनअर्हत यह करै बखाना। देह परिमाण जीवहि जाना ८ अणुपरिमाणवादि तब बोला। अणुपरिमाण जीवतस खोला ९ इनसबके मततुच्छकरजानो। वेदबाह्यइनको पहिचानो १० दो०॥ जे मत वेद विरुद्ध हैं ते सब दिये दिखाय॥ खण्डन तिनका भली बिधि बरण्यो मन चित लाय ११ मर्दन दुष्टन के लिये सूक्ष्म कियो बिचार॥ जे मतिमंद कुतर्क हैं सुन होवैं जहँ क्षार १२ चौ०॥ जग मिथ्याका कियो विचार। सत्यरूप को लियो नितार १ जो सुख जीवन मोक्तहिलेहि। तिसते अधिक विदेहीलेहि २ कुलपवित्रतिनसगरोकीना जिहि आतम मगपग धरदीना ३ करै एक क्षण ब्रह्म ध्याना। तीर्थ सबतस कियो अस्नाना ४ सब अवनि तसकर दियो दाना। जिमनरमयो ब्रह्मदिन रैना ५ देवपितर सगरे तस पूजे। भली भांति जिन आतमबूजे ६ दो०॥ संत सभा के अग्र में विनय करूं करजोर॥ यद्यपि असंगत है कछु दीजै दोष न मोर १ ज्यों अब्धि जल जायकै वारिद माधुर होय। त्यों संतन मुखजायके दूषण भूषणहोय २ शून्य भूत अरु ग्रहपुनि ब्रह्म अंदपुनि जान १९५० भादों शुदीत्रयोदशी ग्रन्थयहपूरणजान ३ काशी पुरी विख्यात जग महादेव का धाम। असीसंगम तीर गंग करैंसंत विश्राम ४ सो०॥ परमानंद जिनाहि

रहेगंग के तीर पराअसी संगमा माहिं कियो ग्रन्थ परकाश यह ५ चौ०॥ अमर दासहै नाम गुरूको। हंसदास तिनके गुरुनीको १ रामदास गुरु बड़े प्रतापी। नामलेत जिनतरहैं पापी २ दो० ॥ मस्तरहै जो आप में वही अलमस्त पछान। जीवनके उद्धार हित प्रकट भये जग आन १ बालयति श्रीचंदहो शंकर लियो अवतार। उदासीन मग आदिको जगमें कियो प्रचार ६ श्रीगुरुनानक रूपधर विष्णु लीनअवतार। क्षत्रिवंश कल्याण गृह भये सुमंगलचार १ ज्ञान उपासन कर्मपुनि लोगन कीन उपदेश। भक्तनके कल्याण हितजगमें कियो प्रवेश २ क०॥ मानुष्यको तनु धर अवनिको भारहर देवनको तापहर लोकसुखदायो है। दुष्टनदमनकर संतन को दुखहर भेद वाददूरकर अभेदको बतायोहै॥ आत्माअनंद घनएक रूप एकरस नित्य अविनाशिसबयाहिं में दरशायो है॥ अज्ञान उद्धार हित नामको जपायो जिनवहि जगमाहिं गुरुनानककहायो है॥ छं०।नानकरखायोनामजग मैंहिं भक्तनहितके लिये। गावैंहिं सुरनर मुनि किन्नर ध्यानधर सिद्ध हिये॥ जो धरै नित्यध्यान तिनकारहैवहआनंदसैं॥ जीवनमुक्त पद को लहै पुनिमिल है परमानंद सों २। क०।आत्मा अनादि आदिकारण जगत्त लक्षसोई ते रोरूपश्रुति वेद कहसुनायो है। आपनो अज्ञान कर आपहि को जीवमानै बन्ध मोक्षआपन में आपतूंठैरायोहै॥ भनैंहै परमानन्द बैठके विचारकर तेरेविन और कोई दूसरा न भायो है। तूतो है अकेला और जग है झमेला सब तेरेते निकस करतेरेमें समायो है॥

इति॥

और उनके परस्पर प्रीतिमान् और आसक्त होनेकी कथाओं का कीर्त्तन ९ करोड़ों प्रपंच और छलरचना औरबहुरूप धारणकरने की विद्याकेद्वारा म्लेच्छोंका विजयकरना और और नानाप्रकार की सुन्दर शोभायमान और चित्तको प्रसन्न करनेवाली कथाव र्णित हैं और ये उक्तआख्यानयथोचित रससम्बन्धी नानाप्रकारके छन्दों से संपुटितहैं इस पुस्तककी पूरी पूरी प्रशंसा पढ़नेहीसे जानी जासकी है परन्तु हम संक्षेपमात्र इतना कहसके हैं कि स्वस्थताके समयको व्यतीतकरनेके लिये और इसके पढ़नेसे चित्तको प्रसन्न और आह्लादित करनेकेलिये यहपुस्तक अद्वितीय है और ऐसी अद्भुत है किहरप्रकारके व्यसनी मनुष्यके लिये उप योगी है हरभक्त इसको पढ़कर ईश्वरमें दृढ़प्रीति और विश्वास करेंगे-शूरबीर इसके पाठसे बीररसमें छकित होजायँगे रसिकोंका चित्त इसकेअवलोकनसे प्रफुल्लित होजायगा विरहियोंको इसका पाठ प्रिय दर्शनकी समान सूचितहोगा और ईश्वरीय बनस्पति रचनाको अवलोकन काव्यसन रखनेवालों को इसके पाठ में परम प्रीति उत्पन्न होगी ॥

इस अपूर्वग्रंथको स्वदेश निवासी महज्जनों की प्रीति के निमित्त श्रीमद्भार्गववंशावतंस श्रीयुत मुंशीनवलकिशोर जी (सी,आई,ई) ने आगरा नगर पीपलमंडीनिवासि चौरासिया गौड़वंशावतंस पंडित कुंजबिहारीलाल उपनाम कुंजलाल से रचनाकराकर अपने निजनामांकित यन्त्रालयमें मुद्रित कराया है अब हमको आशाहै कि हमारे भारतदेशनिवासी इस मनोहर अपूर्व और अद्भुत ग्रंथको ले लेकर पढ़ें और इसके पाठसे परमा नन्दप्राप्तकरकेहमको कृतार्थकरैं यह पुस्तक ९१ जुज़ ४ वर्क़ की है क़ीमत फ़ी जिल्द २) रु० है परन्तु सौदागारों को अथवा और भी बड़ीतादाद के ख़रीदारोंको चाहिये कि दफ्तर मतबा से ख़त किताबतकरें ॥

मनेजरनवलकिशोर
प्रेस लखनऊ

भगवद्गीतानवलभाष्यका विज्ञापनपत्र ॥

प्रकटहो कि यहपुस्तकश्रीमद्भगवद्गीतासकल निगमपुराण स्मृति सांख्यादि सारभूत परम रहस्य गीताशास्त्र का सर्व्व विद्या निधान सौशील्य विनयौदार्य्य सत्यसंगर शौर्य्यादि गुणसं पन्न नरावतार महानुभाव अर्जुन को परम अधिकारी जान के हृदयजनित मोह नाशार्थ सबप्रकार अपारसंसार निस्तारक भगवद्भक्ति मार्ग दृष्टिगोचर कराया है वही उक्त भगवद्गीता वज्रवत् वेदांत व योगशास्त्रान्तर्गत जिसको अच्छे २ शास्त्रवेत्ता अपनी बुद्धिसे पारनहीं पासके तब मन्दबुद्धी जिनको कि केवल देशभाषाही पठनपाठन करने की सामर्थ्य है वहकब इस के अन्तराभिप्रायको जानसकेहैं—और यह प्रत्यक्षही है कि जब तक किसी पुस्तक अथवा किसी वस्तुका अन्तराभिप्राय अच्छे. प्रकार बुद्धि में न भासितहोतबतक आनंद क्योंकर मिले इसप्र कार संपूर्ण भारतनिवासी श्रीमद्भगवत्पदाब्जरसिकजनों के चित्तानंदार्थ व बुद्धिबोधार्थ सन्तत धर्म्मधुरीण सकल कला चातुरीण सर्व्वविद्याविलासी भगवद्भक्त्यनुरागी श्रीमान् मुंशी नवलकिशोरजी (सी, आई, ई) ने बहुतसाधनव्ययकर फर्रुखा बाद निवासि पण्डित उमादत्तजीसे इस मनोरंजन वेद वेदान्त शास्त्रोपरि पुस्तककोश्रीशंकराचार्य्य निर्मितभाष्यानुसार संस्कृत से सरलदेश भाषा में तिलक रचाय नवलभाष्य आख्यसे प्रभा- तकालिक कमलसरिस प्रफुल्लित करादिया है कि जिसको भाषामात्र के जाननेवाले पुरुष भी जानसक्ते हैं ॥

मिताक्षरा भाषा टीका सहित ॥

यह पुस्तक सम्पूर्ण धर्मशास्त्रोंका शिरोमणिहै जिसमें आचार काण्ड, व्यवहारकाण्ड और प्रायश्चित्तकाण्ड नामक तीनकाण्ड हैं जिनसे गृहस्थादि चारों आश्रम और ब्राह्मणादि चारों वर्णों के सम्पूर्ण कर्म धर्मादि और राजसम्बन्धी कार्यों में दायभागादि व्यवहारों में वादी प्रतिवादियों के धर्मशास्त्रसम्बन्धी मामिले और मुक़द्दमों की व्यवस्था वर्णित है ॥